कुछ अध्यात्म कुछ दर्शन...

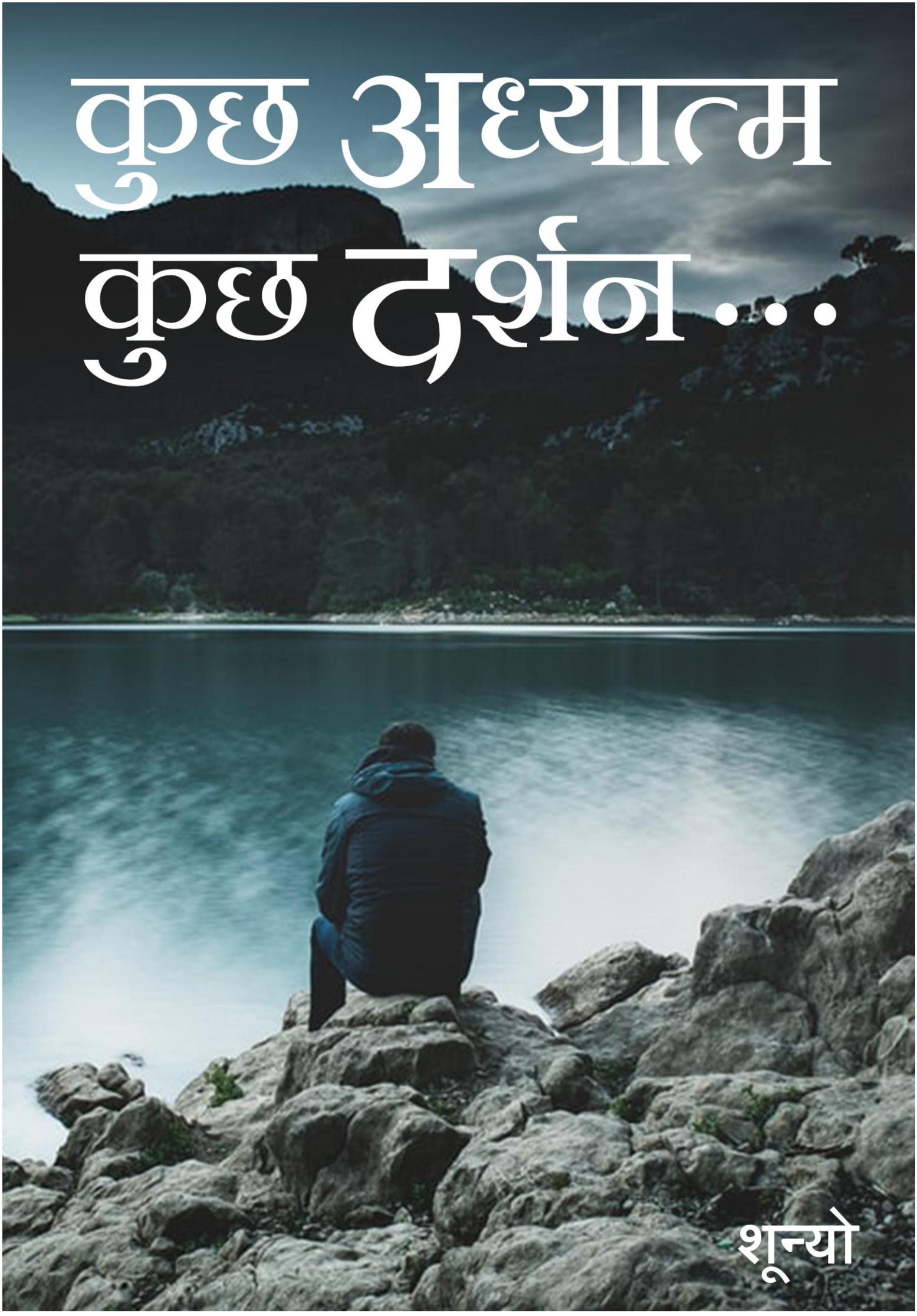

शून्यो

कुछ अध्यात्म कुछ दर्शन

शून्यो

डॉयरी नम्बर :

वेबसाइट : **www.shunyo.in**

ई-मेल : **info@shunyo.in**

प्रकाशक : डॉ0 किसलय गौड़
कोतवाली रोड
देवरिया - 274001
उत्तर प्रदेश

फोन नं0 : +91 7084598114

कुंडलिनी सोई हुई है उसे शक्ति दो। कुंडलिनी अर्थात् गोलाकार स्प्रिंग जो संपीडित रूप में है, मुक्त होने पर यह चेतना को ऊर्ध्व दिशा में प्रक्षेपित करती है। मुक्त होने पर यह एक ही बार में पूरी तरह खुल जाए या संपीडन मुक्त हो जाए, यह आवश्यक नहीं। यह सुषुम्ना के माध्यम से ऊपर उठती है। रास्ते में इड़ा और पिंगला नाड़ियाँ भी हैं। यदि चेतना मुड़कर इड़ा और पिंगला की ओर चली जाए तो चेतना मध्य में ही रुक सकती है और कुंडलिनी भी पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाती। यह संकुचित कुंडलिनी शरीर के लिए कष्ट कारक भी हो सकती है। अंततः चेतना के आज्ञाचक्र पर पहुँचने पर ही, कुंडली पूरी तरह से खुल पाती है और अंततः जीव शांति का अनुभव करता है। इस संकुचित कुंडलिनी को खोलने के लिए, जिस प्रारंभिक शक्ति की आवश्यकता होती है, वो मनुष्य निष्काम कर्म, भक्ति, प्रेम, ध्यान, योग, सेवा, यम, विवेक आदि के माध्यम से प्राप्त करता है।

हमें जन्म देकर भेजते समय, प्रकृति हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने का वादा करके ही भेजती है और इसी वादे के बल पर, हम प्रकृति के ही संसाधनों पर दावा ठोंक देते हैं।

मन के प्रभाव में किए गए कर्म, कर्मफल बंधन को निमन्त्रित करते हैं। मन की अनुपस्थिति में की गई क्रियाएँ, कर्मफल बंधन से रहित होती हैं।

***

जो व्यक्ति धन प्राप्त कर भी सादा जीवन जिये, उसकी रुचि प्राप्त द्रव्य में नहीं अपितु प्राप्त करने के विचार में है। वह निश्चित तौर पर उनसे एक चरण आगे है, जो प्राप्त करने का भी विचार रखते हैं और उनके उपभोग का भी।

***

समाज कहता कुछ है, मानता कुछ और है। कहता है कि विभिन्नता ही वास्तविकता है, लेकिन इसका नाम कहता है कि समत्व ही अजर है।

***

यदि सम्मान, कपड़ों और वाहन के माध्यम से ही प्राप्त किया जाए तो सम्मान उतनी ही जल्दी समाप्त हो जाएगा, जब गाड़ी नहीं रहेगी और जब महंगे कपड़े न होंगे।

***

जैसे कृष्ण अकेले ही चैन की बंसी बजाते दिखते हैं, वैसे ही हर बुद्ध पुरुष, अपने भीतर इसी चैन व आनंद की बंसी ढूँढ लेता है, जिसके संगीत में वह खोया रहता है। बुद्ध, महावीर, चैतन्य महाप्रभु, कबीर, मीरा, नानक, रामकृष्ण परमहंस, ओशो इत्यादि ने भी इसी बंसी को अपने भीतर ढूँढ निकाला। जिसे सुनकर लोग उनकी ओर खिंचे चले आए।

***

जिस प्रकार उस पार उतर जाने पर यात्री को नाव का कोई प्रयोजन नहीं। नाव की आवश्यकता मात्र नदी में है। यात्री उस पार उतरकर चला जाएगा व नाव का माँझी, नाव से बँधा ही रहेगा। नाव प्रकृति द्वारा निर्मित है। प्रकृति ही उसे विघटित भी कर देगी। नाव अथवा शरीर, ईश्वर द्वारा निर्मित आवागमन का साधन है।

***

आसन अर्थात् अपनी शक्ति का उपयोग, अपने यन्त्र को सुचारु बनाए रखने में करना। अर्थात् नियंत्रण अपने हाथ में रखना।

***

औषधि सदैव कड़वी होती है ताकि कोई इसे भोजन समझकर खा न जाए और यह इस प्रकार जरुरतमंद तक ही पहुँचे।

***

ये जीवन एक रोलर कोस्टर राइड के समान है जिसमें बैठने का निर्णय आपके मन का है, लेकिन आगे कैसे-कैसे मोड़ आएँगे, इन पर व्यक्ति का बस नहीं। मात्र चलते जाने का ही विकल्प है। बेहतर है इस यात्रा का आनंद ही लिया जाए।

***

बाहरी दुनियाँ में जो अच्छाई और बुराई है, वही भीतरी दुनियाँ में वास्तविकता और भ्रम है। अच्छाई और बुराई में रुचि अर्थात् कर्मफल को निमंत्रण देना। भ्रम व वास्तविकता को जानना अर्थात् प्रकृति के साथ साम्य में होगा। जैसे वृक्ष फल खाने की इच्छा से दूर हैं। वैसे ही आप भी, कर्मफल से परे रह सकते हैं।

***

क्या मनुष्यों का अन्य जंतुओं से अलग, ऊर्ध्व दिशा में उठना (ऊर्ध्व रीढ़ रज्जु) प्रकृति की दिशा में ले जाने वाला क्रमिक परिवर्तन है?

***

अष्टभार्या ने अपनी संततियों को धारण किया और राधा ने श्रीकृष्ण के सभी भक्तों को।

***

जन्नत का भी नाम जानत पर रखा गया। अर्थात् सच्चाई को जानो।

***

श्रीकृष्ण को राधा पूर्ण करती हैं। जब मनुष्य प्रेम के बिना पूर्ण नहीं हो सकता, तब पूर्णावतार श्रीकृष्ण राधा के बिना कैसे पूर्ण हो सकते हैं।

***

जो कुछ भी बाहर दिखता है, वह हमारे भीतर चलने वाले विचारों का ही तो प्रतिबिम्ब (मिरर इमेज) है। चित्रकार भीतर है, कैनवास बाहर है। अगर कुछ बाहर बदलना है तो

पहले अपने भीतर उसे बदलना होगा। इसी कारण आंतरिक परिवर्तन होते ही, हमारी बाहरी दुनिया भी बदल जाती है।

***

मोह को छोड़ना ही होता है, या तो जीते जी छोड़िये या सगे सम्बंधी गया में पिण्डदान कर छुड़वा देंगे।

***

बुद्ध की मूर्ति में कपाल के ऊपर स्थित ज्योति, वही शक्ति है जो सहस्त्रार तक पहुँच गई। शक्ति की पूजा में ज्योति पूजी जाती है।

***

पिंडदान– शरीर को अन्नमय कोष कहा जाता है। पिंड, अन्न व दूध से बना होता है। जीवात्मा को नया पिंड देकर अपेक्षा की जाती है कि पुराने सम्बन्ध में मोह त्याग, वे नया शरीर (पिंड) प्राप्त कर, मोक्ष प्राप्ति की अपनी यात्रा को आगे बढ़ाए। पिंडदान से गति होना माना गया। गया का तात्पर्य ही है कि जीव अब आगे गया। सिद्धार्थ का अंधकार यहाँ पर गया और वे बुद्ध बनें।

***

नदी के पार जाने हेतु तीन चीजों की आवश्यकता है –

1. नाव, 2. माँझी, 3. माँझी की ऊर्जा। उसी प्रकार आंतरिक जगत् में उस पार जाने हेतु आवश्यक है – 1. शरीर (नाव), 2. इच्छाशक्ति (माँझी), 3. ओज (ऊर्जा)।

***

बाकी सभी एक ही युद्ध (महाभारत) लड़ रहे थे। अर्जुन एक साथ दो युद्ध (खुद से व महाभारत) लड़ रहे थे।

***

श्रीकृष्ण ने बरबरीक की एक नहीं, दो बार परीक्षा ली।

1. शीश दान (दृष्टा हेतु),

2. युद्ध समाप्ति पर जब उनसे पूछा कि तुमने क्या देखा? (साक्षी हेतु)।

***

श्रीकृष्ण की युद्ध में आसक्ति के स्तर को, इसी बात से समझा जा सकता है कि उन्हें ही रणछोड़ कहा गया। वे मात्र पाँच गाँव के मिल जाने पर ही युद्ध न होने देने के प्रस्तावक थे।

***

दृष्टा से साक्षी बनना ही वास्तविक अंतर्यात्रा है।

***

धृतराष्ट्र के लिए कुरुक्षेत्र धर्मक्षेत्र था। श्रीकृष्ण ने बताया वास्तव में तुम्हारा अन्तस धर्मक्षेत्र है।

चलो माना कृष्ण नहीं दिखते, मगर प्रकृति रूप में राधा तो दिखती हैं। उन्हीं से क्यूँ नहीं पूछ लेते कि कृष्ण कहाँ हैं?

***

फिलॉसफर वही है, जो फिलिंग (भरना/जीवन में उपस्थित सवालों के गड्ढे को भरना) करे।

भीष्म पितामह ने अपनी महाभारत शरशैय्या पर लड़ी। इस बार वह अर्जुन की भूमिका में थे। कुरुक्षेत्र का युद्ध उन्होंने मन के हेतु लड़ा। शरशैय्या पर कष्ट से युद्ध, उन्होंने स्वयं के लिए लड़ा।

***

दृष्टा का साक्षी बनना ही, चेतना का परमचेतना में व जीव का आत्मा में विलय है।

***

कृष्ण	आत्मा
अर्जुन	चेतना
दुर्योधन	मन
गीता	ज्ञान
सगे सम्बन्धी	मोह
कुरुक्षेत्र	अंतस
परिणाम	अर्जुन का व्यक्तित्व से चेतना रूप में परिवर्तन
संजय	दृष्टा
बरबरीक	साक्षी

***

राधा के होने का कारण कृष्ण हैं।

***

अगर समाज आपको स्वीकार करने को तैयार नहीं तो कृष्ण के पास जाइये। वे अवश्य स्वीकार करेंगे। 16100 स्त्रियाँ जिन्हें समाज ने स्वीकार न किया, उन्हें कृष्ण ने स्वीकार किया।

***

प्रकृति के साथ पूर्णतया साम्य में आना ही, सूक्ष्म शरीर द्वारा प्राप्य सिद्धि है।

***

मस्तिष्क व बुद्धि में अंतर –

मस्तिष्क : जब स्वभाव उसका उपयोग कार्य की पूर्णता के लिये करे।

बुद्धि : जब मन उसका उपयोग अपने लक्ष्यों और इच्छाओं की पूर्णता के लिये करे।

***

समाधि घटित होती है, शक्ति व आत्मा के क्षेत्रों की ओवरलैपिंग से।

***

पृथ्वी के सबसे प्राचीन धर्म होने के बाद भी, भारतीय धर्मों को कभी धर्मयुद्ध नहीं लड़ने पड़े। जबकि धरती के अन्य हिस्सों में पिछले हजार सालों से धर्मयुद्ध लड़े गए व लड़े जा रहे हैं। भारतीय जानते हैं कि धर्म की ऊर्जा, बल नहीं शक्ति होती है। यही कारण है भारत पर हुए असंख्य आक्रमण भी, इस शक्ति को नहीं जीत पाए। भारत से आध्यात्मिकता को खत्म नहीं कर पाए। राजाओं के परास्त होने के बाद, उसी आंतरिक शक्ति ने वाह्य बलों को परास्त किया।

***

बरबरीक श्रीकृष्ण के भक्त या सखा न थे, परंतु उनका मोह व आसक्ति रहित तटस्थ स्वभाव व तत्वज्ञानी होना ही, श्रीकृष्ण के लिया पर्याप्त था उन्हें स्वयं में आत्मसात करने के लिए।

***

प्रकृति हमें मात्र जीव समझकर, अपने धर्म को पूरी पूर्णता से निभाती है। उसे न हमारे गुणों से ही मतलब है और न ही हमारी विचारधारा से। यही कारण है कि हम धर्मयुद्ध लड़ने और अतिवाद फैलाने में अपनी ऊर्जा व्यर्थ करते हैं। हमें द्वेष करने की भी स्वतंत्रता है, क्यूँकि कोई हमसे अनन्य प्रेम करने में ही मस्त और व्यस्त है और हम द्वेष में अस्त और पस्त।

***

पहले गुरु ने भीतर का दरवाजा थोड़ा खोला। दूसरे ने बाहरी दरवाजे को बंद कर दिया।

***

स्वाद को प्राथमिकता क्यूँ नहीं? क्यूँकि स्वाद के प्रभाव में ही हम जरूरत से ज्यादा भोजन करते हैं। जो पाचन तंत्र व शरीर पर बोझ है तथा प्रकृति के साथ साम्य में नहीं।

शक्ति संवर्धन क्यूँ?

ताकि वह आपके और माया के बीच दीवार बनकर खड़ी रह सके। जिससे आप अपने ही भीतर अधिकतम दूरी तक जा सकें।

शक्ति आपकी सुरक्षा की दीवार है।

***

प्रकृति वर्तमान में स्थित है। हम तब तक प्रकृति को महसूस नहीं कर सकते, जब तक हम स्वयं वर्तमान में स्थित नहीं हो जाते।

***

प्रकृति द्वारा किए हर कार्य पर माया अपना दावा ठोंक देती है। प्रकृति वादा करती है और माया दावा।

***

जो प्रकृति बच्चों को उत्पन्न करती है, वही प्रकृति उन्हें 'मैं' के पार भी पहुँचाती है।

***

आकाश जितना बाहर सम्पूर्ण है, उतनी ही संपूर्णता में वह पिता में भी व्याप्त है। पृथ्वी जितनी बाहर पूर्ण है, उतनी ही संपूर्णता में वह माँ में भी व्याप्त है। यही जानना श्रीगणेश को तत्वज्ञानी सिद्ध करता है।

***

कृष्ण का बरबरीक से शीश का दान माँगने का कारण था कि अब उनके लिये, कोई कर्तव्य नहीं रह गया था। जिसकी कृष्ण गीता में भी चर्चा करते हैं।

***

परमात्मा को पाने से पहले आत्मा और आत्मा को पाने से पहले आत्म को पाना होगा। खुदा को पाने से पहले खुद को पाना होगा।

***

श्रीकृष्ण पूर्णावतार इसलिए नहीं कि वे सोलह कलाओं से युक्त हैं, बल्कि इसलिए कि उन्होंने सम रूप में अवतार लिया। श्रीकृष्ण के साथ उनके प्रेमरूप राधा ने भी अवतार लिया।

***

जो हमसे सबसे ज्यादा प्रेम करता है, उससे हम कभी विवाह नहीं करते। वो है प्रकृति।

***

शादी का लड्डू जो खाए वो पछताए, जो न खाए वो भी पछताए। ठीक वैसे ही जैसे कामनाओं से न दोस्ती अच्छी न, दुश्मनी।

***

मनुष्यों में और विभिन्नता की जरूरत नहीं। विभिन्नता का हर चरण, बहुत मुश्किल से टूटता है।

***

जैसे पिया जाने वाला पानी, शरीर की सारी गंदगी को समेटकर मूत्र बन जाता है। वैसे ही बच्चा दुनिया की गंदगी को खुद में समेट कर, मनुष्य बन जाता है। 'तप' रिवर्स ऑसमोसिस (आरओ) के समान है, जो गंदे पानी से भी पीने योग्य पानी बना लेता है।

***

कृष्ण का यह कहना कि काम और क्रोध के वेग को सहन करने योग्य हो जाना। अर्थात् इस प्रचंड ऊर्जा को, भीतर की ओर मोड़ने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेना।

***

जिसे हम धन कमाना कहते हैं वो वास्तव में अपना समय देकर धन खरीदना है। क्या अपना समय देकर मात्र उसे ही खरीदना उचित है, जो साथ भी नहीं जाता।

***

मर कर तो वैसे भी मनुष्य की इस जगत् से दूरी और जगत् की मनुष्य से दूरी बन ही जाती है। तो क्यूँ न जीते जी ही, यह दूरी बना ली जाए। यह ठीक वैसे ही होगा, जैसे कि हमारे और इस जगत् के बीच एक शीशा आ गया। इस शीशे के कारण एक पक्ष की आवाज,

दूसरे पक्ष तक न पहुँच पाएगी अर्थात् संवाद की संभावना समाप्त हो जाएगी। तो क्यूँ न संवाद की संभावना को जीते जी ही खत्म कर दें। जिसे कहते हैं प्रतिक्रिया भी खत्म हो और प्रतिक्रिया की इच्छा भी।

***

बाहरी व्यक्ति सुख नहीं देता, वह मात्र उद्दीपन देता है। उद्दीपन हमारे भीतर उपस्थित सुखों को क्रियाशील कर देता है। मात्र उद्दीपन के लिए हम बाहरी जगत् पर निर्भर हैं। यदि उद्दीपन भी भीतर ही ढूँढ लें तो सुख हेतु जगत् पर निर्भरता समाप्त।

***

मन = भावना

चेतना = भाव

आत्मा = भा (प्रकाश)

***

प्रकृति कभी कारण नहीं पूछती, वह कारण बताती है।

***

तुरंत तो प्रतिक्रिया मिलती है, उत्तर नहीं।

***

विवाह अहंकार और अधिकार का एक प्रयोग है।

***

समूह में तो जानवर चलते हैं। जानवर के लिए दुनियाँ वही है, जो चरवाहा या कसाई उन्हें बताता है। खोजी तो अकेले निकला करते हैं ढूँढने और वही अंततः पाते भी हैं।

***

महर्षि पतंजलि का अष्टांग योग

यम - अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, अस्तेय, ब्रह्मचर्य

नियम - शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्राणिधान

आसन

प्राणायाम

प्रत्याहार

ध्यान

धारणा

समाधि

***

जीवन में कोई आगे या पीछे नहीं चलता, बल्कि सभी एक ही केन्द्र के चारों ओर गोल-गोल चक्कर लगाते हैं। परमाणु से लेकर आकाशगंगा तक में यही होता है। क्यूँकि हम एक समय में, अपनी यात्रा का एक बहुत सूक्ष्म भाग देख पाते हैं। इसी कारण यात्रा हमें सीधी लगती है। इस प्रकार जो हमसे आगे दिखता है वास्तव में पता नहीं, कि वो आगे है या पीछे। हो सकता है, आगे वाला अपने पहले चक्कर पर हो और पीछे वाला अपने दूसरे चक्कर पर। वास्तव में आगे वो है, जो केन्द्र के ज्यादा निकट है। क्यूँकि वह निर्णय ले चुका है कि वह बाहरी आकर्षण की तरफ जाएगा या अपने सहज केन्द्र की ओर। अतः जीवन की वास्तविक यात्रा आगे और पीछे की नहीं। अंदर और बाहर की है।

***

हनुमान तो वानर जाति से आते हैं –

उनका धर्म क्या था?

उनके धर्म थे श्रीराम। उनका धर्म था राम से प्रेम ओर उनके प्रति समर्पण। उन्होंने अपना धर्म खोजा था। आप भी अपना धर्म खोजिए।

***

करना स्वयं कहता है कि कर (हाथ) तो है परंतु तुम्हारा नहीं। अपना समझने की भूल न करना।

***

पृथ्वी के नीचे कुछ सौ फीट पर पानी मिलता है। कुछ हजार फीट पर कोयला, कुछ हजार फीट और नीचे तेल मिलता है तथा हजार किलोमीटर नीचे ऊर्जा का अक्षय भंडार। जो धरतीवासियों के लिए करोड़ों साल तक पर्याप्त है।

(सूर्य के कोर का तापमान 6000 केल्विन। पृथ्वी के कोर का तापमान 7000 केल्विन।)

इस प्रकार एक सूर्य बाहर है और एक सूर्य भीतर। शरीर के लिए भी यही सत्य है। एक सूर्य बाहर और एक भीतर भी।

***

शरीर एक मशीन है, जो ढेर सारा कचरा पैदा करती है। शरीर के भीतर का कचरा बाथरूम में निकाला जाता है और बाहरी कचना डस्टबीन में एकत्र किया जाता है।

***

चेतना न पुरुष है, न स्त्री।

***

इस लोक का निर्माण वैसे ही किया गया है, जैसे मोबाइल गेम्स में हर स्तर पर मुश्किलें बढ़ाई जाती है। पृथ्वी पर वाद-विवाद, झगड़े, असमानता, लड़ाई, युद्ध, विश्वयुद्ध, धर्मयुद्ध सभ्यता के प्रारंभ से ही लड़े जा रहे हैं। हमारे समय में कुछ भी नया नहीं हो रहा। वाद-विवाद में उलझने का कोई कारण नहीं है। इन्हें देखते हुए बगल से निकल जाना ही श्रेयस्कर।

***

ये संसार एक पेड़ की भाँति है।

मुख्य तना– सत्य।

मुख्य शाखाएँ– प्रकृति।

पतली शाखाएँ– माया व मन।

सबसे ज्यादा पतली शाखाएँ ही काँपती हैं। मुख्य शाखाएँ यदा-कदा तथा मुख्य तना सदैव स्थिर रहता है।

***

समाज धर्म के उसी स्वरूप को मान्यता देता है, जो उसकी सहूलियत के अनुरूप हो।

***

धर्मों के बीच वाद-विवाद, तर्क-वितर्क, धर्म के उस स्वरूप पर होता है, जिसका उस समय का समाज पालन करता है।

***

मानव शरीर पदार्थ की तीनों अवस्थाएँ (ठोस, द्रव, गैस) का कचरे के रूप में निर्माण करता हैं।

***

डर को दबाने के लिए बल का प्रयोग होता है और भय को समाप्त करने के लिए शक्ति का।

***

जीव के शरीर लेने को 'उत्पन्न' होना कहते हैं। जन्म दिवस वास्तव में उत्पन्न दिवस है।

***

मेरे पास बातें करने को कुछ भी नहीं, पर कहने को बहुत कुछ है।

***

विभिन्नताओं पर विजय पाना ही इस जीवन का लक्ष्य है। लेकिन अगर विभिन्नता ही न रहे तो विजय का 'वि' भी न रहेगा। इस दशा में मात्र जय ही शेष रह जाता है।

***

वृक्ष इस बात को लेकर कभी चिंतित नहीं होते कि सूखने के बाद उनका नाम कौन लेगा। इसीलिए वे अपना नाम ही नहीं रखते।

***

कब, किसे, कैसे, पैदा होना है, यह निर्णय प्रकृति लेती है व संसाधन मुहैया कराती है।

***

वृक्ष स्वयं पर उगी पत्तियों के लिए ही पूर्णतया समर्पित है। किसी नए पेड़ को रोपने व पालने में उनकी ऊर्जा रत नहीं। जन्मने व पालने का काम, उन्होंने प्रकृति पर छोड़ रखा है।

***

यदि हमें परिवार और पूर्वजों की परंपरा का ही पालन करना है तो हम उस परंपरा का पालन क्यूँ न करें, जिसे हमारे दूरस्थ पूर्वज (वृक्ष) अभी भी मानते हैं और जिसके प्रति वे पूर्णतया समर्पित हैं।

***

जलवायु परिवर्तन मन के अनियन्त्रित हो जाने का परिणाम है।

***

समाज को हमारी बाहरी अभिव्यक्ति में ही रुचि है। हमारे भीतर क्या चल रहा है, उससे उसका कोई सरोकार नहीं। न हीं वह इसमें रुचि लेता है।

***

मैं न पुरुष हूँ, न स्त्री। पुरुष और स्त्री मिलकर मुझे पूर्णता प्रदान करते हैं।

***

उसे बस जिन्दा रहने दो। उसे मत दो अपनी सोच। मत बताओ कि वह कौन है। बच्चे को खुद बताने दो कि वह कौन है? उसके स्वभाव को उसका धर्म बनने दो।

***

व्यक्ति अपने स्वभाव के अनुसार चले, तो वह अपने परिवार को एक नई ऊँचाई दे सकता है। यदि अपने स्वभाव के विपरीत काम करे, तो परिवार के लोगों के लिए मात्र काम ही कर सकता है।

***

अपने स्वभाव के अनुसार काम करते हुए, आप खुद को ज्यादा सहजता से ढूँढ सकते हैं।

***

यदि आप अपने स्वभाव के अनुसार काम नहीं कर रहे, तो भी आप खुद को ही ढूँढ रहे हैं लेकिन गलत जगह पर।

***

चेतना की खुराक एकांत है।

***

अपना स्वाभाविक काम करना ही सहज होना है। बिना ये सोचे कि वो काम कितने पैसे देगा या कितना व्यवसाय उत्पन्न करेगा। उसे करना होगा, अपनी आंतरिक शांति के लिए। यही है सहजता।

***

अंधकार से अंधकार की ओर। अभी जो अंधकार है, उसमें हमारे सिवा सबकुछ चमक रहा है। इसी कारण जैसे कीड़ा लौ की ओर लपकता है, वैसे ही हम भी बाहरी चमक, आकर्षण और प्रलोभन की ओर लपकते हैं और स्वयं को जला बैठते हैं। इसके उलट वह

जो अंधकार है, वह सम्पूर्ण अंधकार है। क्यूँकि उसमें चमकने वाली वस्तु मात्र आप हैं। अपने प्रकाश के ही कारण, आप पूरे अंधकार में फैले होते हैं। यह अंधकार से अंधकार तक की ही यात्रा है। भीतरी अंधकार से बाहरी प्रकाश तक की। भीतरी अंधकार से भीतरी प्रकाश की। बाहरी रोशनी से बाहरी अंधकार की। अभी आपका भीतरी अंधकार, बाहरी प्रकाश की ओर दौड़ता है और तब आपका बाहरी अंधकार, भीतरी प्रकाश की ओर दौड़ेगा।

***

सहजता ही शांति की कुंजी है।

***

जीवनभर हम वही करते रहेंगे, जो दूसरे हमें बताते हैं तो हम सहज कब रहेंगे?

***

यदि जीवन सहजता से बीतेगा, तभी अंततः यह कह सकेंगे कि 'मैंने जिंदगी बहुत अच्छी जी है।'

***

संतृप्ति मात्र इच्छापूर्ति या इच्छाओं के शांत होने से ही नहीं जुड़ी। यह सम्बन्धित है संतुष्टि से। इच्छाएँ तो मात्र मन से जुड़ी हैं, बाकी भागों का तुष्ट होना भी आवश्यक है। संतुष्टि मिलेगी सहजता से। संतुष्टि सम्बन्धित है उस कार्य की पूर्णता से, जिसे सहज रहते हुए आप करते हैं। उस कार्य की पूर्णता से, जो स्वाभाविक रूप से आपके द्वारा किया जाता है। संतृप्ति सम्बन्धित है, जीवन के प्रयोजन पर कार्य करने से।

***

हिन्दू धर्म अर्थात् वह धर्म जो सिन्धु घाटी की सभ्यता से सम्बन्धित आबादी द्वारा पालन किया जाता है। ये वो धर्म है जो मुख्यतः गुण और स्वभाव से सम्बन्धित है। जैसे ब्राह्मण,

क्षत्रिय, व्यवसाय व सेवा। जिस प्रकार व्यक्ति अपने स्वभाव के अनुसार ही जीवन जीता है, वैसे ही उसका धर्म भी नियत है। इसी कारण किसी भारतीय मनीषी का जोर धर्म परिवर्तन पर नहीं रहा। हाँ अपने स्वभाव के अनुसार धर्म चुनने की सभी ने सलाह दी।

***

शिवलिंग = चेतना या साधक

कलश = शून्य

बूँदें = टपकता बोध

***

विशुद्धि चक्र ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के मध्य स्थित, पुल के मध्य है।

***

सात फेरे, सात चक्रों को अभिव्यक्त करते हैं।

***

कई पंडितों द्वारा चार फेरे करवाने का तात्पर्य है, प्रथम चार चक्रों के लिए एक फेरा। मूलाधार से अनाहत चक्र तक। अनाहत से आगे की यात्रा चेतना अकेले ही तय करती है।

***

लक्ष्मण जी को शक्ति लगी तो उपचार हिमालय में ही मिल सकता था। शक्ति अर्थात् प्रकृति। प्रकृति का उपचार माया कदापि नहीं कर सकती। अतः प्रकृति से ही उपचार प्राप्त किया जा सकता था।

***

अध्यात्म धर्म का केन्द्र है।

***

मेरा वास्तविक स्वरूप सिर्फ वर्तमान में है। अतीत और भविष्य मेरे भ्रम के भाग हैं।

***

घड़ियाँ हमें वर्तमान का समय बताती हैं और इस जानकारी का उपयोग, हम भविष्य की योजना बनाने में करते है। हमें बताया भी तो यही जाता है कि सुख भविष्य में है। अतः वर्तमान का उपयोग, भविष्य सँवारने में करो।

***

घड़ी समय तो दिखाती है अभी का, लेकिन घड़ी का सम्बन्ध मात्र अतीत और भविष्य से है। जैसे ही आप वर्तमान की परिधि में आते हैं, वैसे ही आप घड़ी के मोह और बँधन से भी छूट जाते हैं।

जो शून्य में खो गया, अब घड़ी उसके कुछ काम न आएगी। घड़ी की जरूरत उन्हें है, जो अभी भी बंधन में हैं। इसलिए कृष्ण कहते हैं कि काम भी वही करो, जो तुम्हारे स्वभाव के अनुकूल है क्यूँकि तब तुम्हें समय के बंधन का पता नहीं चलेगा।

***

जब तक मोह का सम्बन्ध है, तब तक सब कुछ आएगा परन्तु मस्ती नहीं। मस्त तो खुद में ही हुआ जा सकता है। दूसरों पर अधिकार करके, कैसे मस्त हुआ जा सकेगा?

***

जो कामरस से दूर हैं, वे सोमरस की ओर बढ़ सकते हैं।

***

बुद्ध का कहना कि निःस्त्राव से जाओ, का सम्बन्ध लार और वीर्य से है।

***

विशुद्धि चक्र ज्ञानेन्द्रिय क्षेत्र का द्वार है। यह चेतना को तब तक हृदय प्रदेश में रोके रखता है, जब तक ऊर्ध्व गमन का उचित समय न आ जाए और चेतना तप कर शुद्धता न प्राप्त कर ले।

***

जो गीता की आत्मरति है, वही कबीर की सुरति है।

***

गुरु गोरी = राधा = प्रकृति

ईश्वर काले = कृष्ण = शून्य

***

हमारे मूल तत्व से ही सूर्य का निर्माण हुआ। आज स्वरूप परिवर्तन के बाद सूर्य हमें सींचता है। इस प्रकार जो हमसे चलता है, घूमकर वापस आता है।

***

महाभारत हर व्यक्ति का युद्ध है। यही तो वो जीवन में करता है। या तो स्वयं से लड़ता है या दूसरों से लड़ता रहता है। दुःखद यह है कि अंत में इस युद्ध में प्रायः कौरव ही जीतते हैं। कौरव तब तक जीतते हैं, जब तक पांडव इसे न जीत लें। कौरव अर्थात् मन से किस प्रकार जीतना है, गीता यही बताती है।

***

दूसरों से लड़कर अपनी ऊर्जा क्यूँ व्यर्थ करते हो? लड़ना ही है तो स्वयं से लड़ो।

***

जो ढूँढने जाता है, पा लेने पर वहीं खो जाता है। वो वापस नहीं लौट पाता, जैसे सिद्धार्थ वापस नहीं लौट पाए।

***

जननांग सदैव धरती की ओर इंगित करते हैं और ब्रह्म रन्ध्र सदैव आकाश की ओर।

***

ब्लैस = बी लैस = अहंकार कम हो। बुद्धि और मन पर निर्भरता कम हो।

गॉड ब्लैस यू = भगवान की तुम पर कृपा हो। जिससे मन, बुद्धि, अहंकार पर आपकी निर्भरता कम हो।

***

प्रकृति कभी कुछ व्यर्थ नहीं करती। इसी कारण साधु भी शक्ति व्यर्थ नहीं करता।

***

जिस प्रकार एक बीज, अपने भीतर छुपे वृक्ष को बाहर निकालकर ही संपूर्णता प्राप्त करता है। वैसे ही जब तक आप, अपने भीतर छुपे खज़ाने को खोजकर यज्ञ में उसकी आहुति नहीं दे देते, तब तक खोज जारी रहेगी।

***

बाहर हमें भले ही दो व्यक्ति वाद-विवाद करते दिखाई दें। लेकिन वास्तव में, वे दोनों अपने विचारों के वश में हुए, अपने शरीर का उपयोग, अपने विचारों को स्थापित करने में कर रहे हैं।

***

बुद्धि दिमाग के तालाब में खिला कमल है।

***

कर्मकाण्डियों के यहाँ पुराण से काम चलता है और ज्ञानकाण्डियों के यहाँ वेद व उपनिषद।

***

अपना धर्म निभाए बिना, धरणी (पृथ्वी) से मुक्ति कैसे मिलेगी?

***

आपको लगता है कि आप पदार्थ हैं, इसी कारण आप पदार्थ की ओर भागते हैं। यदि आप जान जाएँ कि आप पदार्थ नहीं, तब पदार्थ की ओर भागने का क्या कारण बचेगा?

***

कारण कृति से पहले आता है। माँ बच्चे से पहले आती है। इसी कारण पृथ्वी, जंतुओं से पहले आई।

***

काम सम्बन्धित विचार अच्छे या बुरे नहीं हैं। वे या तो हैं, या तो नहीं हैं।

***

क्या आपका भी यही प्रश्न है कि मुझे नहीं पता कि मुझे क्या करना है? हाँ इतना पता है कि जो कर रहा हूँ, वो नहीं करना है। लगता है, मैं कुछ खोज रहा हूँ– 'मैं क्या करूँ?'

***

शक्ति की कमीं ही आलस्य का कारण है।

***

अंधेरे में पहचान समाप्त हो जाती है लेकिन व्यक्तित्व बना रहता है।

***

जिस प्रकार सभी जीवों का केन्द्र समान है, भले ही बाहरी विभिन्नता बढ़ती ही जाती हो। वैसे ही ब्रह्माण्ड का मूल तत्व समान है। भले ही ब्रह्माण्ड का विस्तार बढ़ता जाता हो।

***

नरेन्द्र के पिता की अगर चलती तो वे उन्हें बैरिस्टर ही तो बनाते। ठीक ही हुआ नहीं चली वरना दुनियाँ, स्वामी विवेकानन्द से अपरिचित रह जाती।

***

इच्छाधारी नाग = इच्छाओं को धारण या नियंत्रण करने की शक्ति। जिसकी गमन में रुचि नहीं। जो स्थिर है और स्थिरता द्योतक है।

***

आज्ञाचक्र शिव का स्थान है। इसी कारण इस पर चंदन, कुमकुम लगाया जाता है।

***

पृथ्वी पर तब दुख नहीं था, जब मात्र वृक्ष ही थे। जंतुओं के आने के साथ दुख आया और मानवों में यह चरम पर पहुँच गया। मानव के विकास के साथ दुख भी बढ़ता है।

***

जल, भूमि (भोजन, आधार) वायु की निरंतर पूर्ति होती रहती है। ठंड में जब अग्नि या ताप की पूर्ति नहीं हो पाती तो शरीर असमान्य होने लगता है। अग्नि तत्व यदि अत्यंत कम हो जाए तो व्यक्ति हाइपोथर्मिया का शिकार हो, दम तोड़ सकता है।

***

दुनियाँ हमें सच्ची नहीं, सुविधाजनक बातें बताती है।

***

सत्य से चूक जाना सबसे आसान है। अपने चारों ओर मात्र सत्य ही होने के बाद भी, हम उससे चूकते ही चले आ रहे हैं। सत्य को पहचानना सबसे मुश्किल है। यही मुश्किल काम रामायण में हनुमान और महाभारत में बरबरीक ने आसानी से कर लिया।

***

हर स्त्री अपने शिव को ही ढूँढती है।

***

राधा, कृष्ण की शक्ति हैं। राधा जितनी प्रेममयी होंगी, कृष्ण उतने ही सम्पूर्ण होंगे।

***

हमें ठंड क्यूँ लगती है? सूर्य की किरणें सीधी न होने व विरल होने के कारण, वातावरण के ताप में कमीं आती है। जिससे शरीर अपनी ऊष्मा, वातावरण में खोने लगता है। अग्नि तत्व कम पड़ने लगता है। वातावरण व शरीर की ताप असमानता के कारण, शरीर ठंड का अनुभव करता है। यह संकेत है कि शरीर को गरम रखो। अग्नि को बढ़ाओ।

***

शिव और शक्ति के मिलन से जो प्राप्त होती है, वही संतति है। जब तक हम खुद को शरीर मानते हैं, तब तक हमारे लिए संततियों का तात्पर्य, एक सजीव शरीर है। जब हम जान जाते हैं कि हम कौन हैं। तब हमारे लिए संततियों का अर्थ भी बदल जाता है।

***

आपने गोदाम से कुछ बीज निकालें और उन्हें छिड़क दिया खेत में। बीज अब प्रकृति के पास है। प्रकृति ही अब उन्हें अंकुरित करेगी व पूर्ण विकसित पौधे का स्वरूप प्रदान करेगी। न बीज आपका, न खेत आपका, न प्रकृति की उर्वरा शक्ति ही आपकी। लेकिन फिर भी हम कहते हैं कि पौधा मेरा है। अब इससे ज्यादा विवेकहीनता की बात क्या हो सकती है?

***

अधिकतर साधु ठंडे स्थानों पर भी कम कपड़ों के साथ कैसे रह लेते हैं? क्यूँकि उनकी ताप सम्बन्धी आवश्यकताएँ, उनकी आंतरिक शक्ति पूर्ण करती रहती है।

***

शिव के त्रिशूल का तात्पर्य - आत्मा (सत्य), शक्ति, मन।

***

जीवनभर की कमाई, लोग एक क्षण में छोड़ने का निर्णय ले लेते हैं। कोई ऐसी चीज बताओ, जिसे पाकर कभी कोई छोड़ना न चाहे।

***

रुपये से सब कुछ खरीदा तो जा सकता है, लेकिन रुपये से सब कुछ पाया नहीं जा सकता।

***

हम अपने ही धर्म के बारे में भ्रमित हैं, इसी कारण वाद-विवाद व तर्कों द्वारा इसे श्रेष्ठ साबित करने की कोशिश करते हैं। जिस दिन हम वास्तविक धर्म का पालन करने लगेंगे, उस दिन हमें वाद-विवाद और तर्कों की आवश्यकता नहीं रहेगी। क्यूँकि तब भ्रम गायब हो चुका होगा।

***

बचपन में एक प्लास्टिक की नाव बिकती थी। जिसके पीछे कपूर का एक टुकड़ा लगा देने पर, वह अनियंत्रित होकर इधर-उधर भागती थी। कपूर के टुकड़े के अलग हो जाने पर, एक जगह शांति से ठहर जाया करती थी। हम भी उस छोटी नाव जैसे हैं, जो मन की उपस्थिति में अनियंत्रित होकर इधर-उधर भागते रहते हैं और मन के शांत होते ही स्थिरता का अनुभव करते हैं।

***

पानी बहता भी रहता है और वाष्पित भी होता रहता है। इस प्रकार वो अपना स्वरूप बदलता रहता है। चक्र चलता रहता है। यदि उसी पानी को हम एक प्लास्टिक की बोतल में सील बंद कर, नदी में फेंक दें, तो वो उसी बोतल में बंद हो, अपने वास्तविक चक्र से अलग हो जाएगा। मनुष्य भी इसी प्लास्टिक की बोतल रूपी शरीर के भीतर बंद रहकर, अपने चक्र से कटा रहता है। बोतल बदलती रहती है, बंधन चलता रहता है।

***

नींद में न कर्ता और न ही दृष्टा
न मन और न ही जीव
कितना अशक्त है जीव
नींद के आगे भी बेबस।

***

मेरा घर – शरीर

मेरे पिता – आत्मा

मेरी माता – शक्ति

मेरी पत्नी – मन

मैं – चेतना

घर की बिजली – सूर्य

***

जिसे हम घर कहते हैं, वह वास्तव में गुरुकुल है। जहाँ रहकर हम दुनिया के बारे में सीखते व अपने अनुभव एकत्र करते हैं। और स्वयं की खोज प्रारंभ करते हैं।

***

संतृप्ति प्राप्ति के मार्ग में, जो हम दुनिया को देते हैं, वही हमारी संतति है।

***

कृष्ण जो सबसे शक्तिशाली थे, उन्होंने महाभारत में भाग ही न लिया।

***

सामने वाले से जीतकर, खुद से हार जाने से क्या प्रयोजन। सामने वाले से हार कर, स्वयं को जीत जाना उचित होगा।

***

बल बाहरी दुनिया के लिए। शक्ति आंतरिक दुनिया के लिए।

***

समाज को प्राथमिक और स्वयं को द्वितीयक नहीं बल्कि स्वयं को प्राथमिक और समाज को द्वितीयक समझें।

***

वास्तविक आय तो यम का आना है। वास्तविक व्यय यम का खर्च होना है।

***

कमाने के साथ आय शुरु कीजिए।

***

मजेदार तथ्य है कि जो पानी हमारी प्यास बुझाता है, वो मात्र पानी है और जो पानी विभिन्न धार्मिक स्थलों पर मिलता है, उसे पवित्र जल कहा जाता है।

***

भविष्य की आवश्यकता तभी तक है, जब तक स्वयं को नहीं पाया। स्वयं को पा लेने के बाद भविष्य की क्या आवश्यकता होगी? तब भविष्य में जाकर करोगे भी क्या?

***

भविष्य में भी हम, स्वयं को ही ढूँढने तो जाते हैं।

***

यदि एकांत उपलब्ध न हो पाता तो रुपान्तरण घटित न हो पाता।

***

विपरीत आकर्षित तो करता है परंतु एक दूसरे को उदासीन नहीं करता। आवेश बंध बना लेते हैं लेकिन उदासीन नहीं होते।

***

पूर्ण स्थिरता अर्थात् न आदि न अंत, वही आनंद है। आनंद अर्थात काल के चक्र के उस पार छलांग।

***

इस संसार में या तो प्रकाश है या अंधकार। इसके अलावा किसी तीसरे पक्ष की कोई उपस्थिति नहीं है।

***

प्रकृति है शांति और प्रकाश है आनन्द।

***

आश्चर्यजनक है कि प्रकाश में सात रंग हैं और शरीर में सात चक्र।

***

उत्तर चाहिए तो भीतर उतरें, दूसरों को आवाजें देने से क्या लाभ।

***

पूर्ण शांति ही प्रकाश पाने की तैयारी है। प्रकाश के आने के ठीक पहले की अवस्था।

***

संकट – जो असमानता से उत्पन्न होता है।

***

यदि दूसरे को समझना है तो स्वयं के भीतर उतरिये।

***

वायु पंचतत्वों में से एक तत्व है। वायु को प्रदूषित करना अर्थात् स्वयं को प्रदूषित करना।

***

शक्ति के बिना शरीर शांत तो हो सकता है, परंतु शांति नहीं मिल सकती।

***

शक्ति में जो 'ई' है, वही 'ई' इच्छा में भी है। अब या तो यह 'ई' शक्ति के काम आएगी या तो इच्छा के।

***

वीतरागी अर्थात् जो राग से बीत चुका हो। राग अब उसके लिये गुजर चुका अतीत है।

***

झूठ सामने वाले से नहीं बोला जा सकता। जो है ही नहीं उससे झूठ कैसे बोला जाएगा। झूठ तो खुद से ही बोला जा सकता है। क्यूँकि वो है और देख रहा है।

***

घर तो वही है, जो जीवनभर नहीं बदलता। ये शरीर ही तो है, जो जीवनभर नहीं बदलता। बाहरी घर तो जीवन में तीन-चार बार बदल जाया करते हैं।

***

शक्ति से बल उत्पन्न होता है, बल से शक्ति नहीं। इसी कारण शक्ति की अराधना की जाती है। बलशाली भी शक्ति ही माँगता है।

***

सामाजिक धर्म से वास्तविक धर्म में छलांग लेना आवश्यक है।

***

सनातन धर्मी वह है, जो गीता के धर्म को धारण करे और हिन्दू वह है जो प्रचलित सामाजिक धर्म से जुड़ा हुआ है।

***

ईश्वर की सबसे रचनात्मक कृति है – समय।

***

जीवन की जितनी भी असुंदर सच्चाइयाँ हैं, वे सभी बंद दरवाजों के पीछे की जाती हैं। मल त्याग, मूत्र त्याग, उल्टी, दाँत साफ करना, काम, नाक साफ करना, ऑपरेशन, नहाना। केवल सुंदर पक्ष ही लोगों के सामने रखा जाता है। जैसे साफ चेहरा, नहाया शरीर, सुंदर कपड़े, मेकअप वगैरह।

***

नमस्ते के दौरान दोनों हाथ एक-दूसरे के पूरक हैं। अर्थात् शिव व शक्ति (दायाँ व बायाँ अंग) समत्व में।

***

बादल दिखते हैं पर उनमें छिपा पानी नहीं। पानी बादलों में कहीं छिपा है, ठीक वैसे ही जैसे सत्य, हर दिखाई देने वाली वस्तु में छिपा है।

***

(आंतरिक जगत् में)

इस पार – यम व नियम

(व्यक्तिगत स्तर पर)

मध्य में – नियम

(समाज में)

दूसरे पार – कानून

***

माँ आनन्दमयी तब होती है, जब वह प्रकाश प्राप्त करती है।

***

बुद्ध का कहना कि 'स्त्रावरहित हो जा' का तात्पर्य ऐच्छिक हार्मोनल प्रक्रियाओं को रोकने से है।

***

उगते और डूबते सूरज का रंग गेरुआ (सिंदूरी, भगवा) होता है। यह रंग प्रारंभ का भी प्रतीक है और अंत का भी। अंत सामाजिक, गृहस्थ जीवन का, प्रारंभ सन्यास का। साधुओं के गेरुआ रंग के कपड़े पहनने का तात्पर्य यही है कि गृहस्थ समझ जाएँ और उनसे

समाजिकता व व्यवहारिकता की बातें न करें। बातें हो तो भ्रम से बाहर निकलने के प्रयासों की।

***

शरीर को मल, मूत्र, पसीना, वमन, श्लेष्मा, गैसों व दुर्गंध से पूर्ण व घृणित इसलिए बनाया गया कि मनुष्य, शरीर को पूर्ण व प्राप्त होने योग्य श्रेष्ठतम संरचना न समझे। वह जाने कि यह एक साधन है और इसकी भी एक सीमा है।

***

यदि इच्छा ही समस्या है तो यह उपस्थित है ही क्यूँ? क्यूँकि यह मार्ग ढूँढना चाहती है। कष्ट पाकर में कहती है कि बस बहुत हो चुका, अब शांति की इच्छा है।

***

अधिकतर लोग यह मानते हैं कि अग्नि देने वाला महत्वपूर्ण है। मुठ्ठी भर लोग हैं जो यह जानते हैं कि अग्नि महत्वपूर्ण है, कोई भी दे।

***

आरंभ से अनंत तक। आरंभ से अंत तक नहीं।

***

जो मानता है, वो जानेगा कैसे?

जो जानता है, वो मानेगा क्यूँ?

***

समाज हमें सुख प्राप्ति के जिस मार्ग पर भेजता है, वह दूसरे छोर पर बंद है। इसी कारण वह जोर देता है कि आरंभ मोह से करो और इसका अंत कहाँ पर है, सभी जानते हैं।

***

हर सत्यान्वेशी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी ही तो है। वह अपने मन से लड़ रहा है अपनी स्वतंत्रता पाने हेतु। स्वामी होने हेतु।

***

शरीर में स्थित शक्ति के, शरीर में ही स्थित शिव से मिलने से, 'चेतना' रूपी संतति का जन्म होता है। आपका जन्म होता है।

***

यह गुणों का लोक है। इसके आगे चेतना का लोक स्थित है।

***

लाभ के आगे लोभ है।

***

मौन अर्थात् आत्म में खोए रहना। चेहरा भावशून्य। चेतना शांत व स्थिर, अंतस शून्य।

***

भगवान को पीठ मत दिखाओ अर्थात् सच्चाई से मुँह मत मोड़ो।

***

दीपक बुझ गया– जब तेल बचा हो, हवा के झोंके से या गिरकर बुझ जाना।

दीपक बढ़ गया– तेल, प्रकाश में परिवर्तित हो गया, पदार्थ प्रकाश में रुपांतरित हो गया।

***

रहस्य (रहें स्याह) तभी खुलते हैं, जब प्रकाश आता है और स्याह अंधेरा धीरे-धीरे मिटने लगता है।

***

जानना वहाँ से आता है, जहाँ से जान आती है, जहाँ से जन्म आता है।

***

मानना वहाँ से आता है, जिसे आप मानते हैं, सम्मान देते हैं।

***

कर्ता के पास एक रास्ता है, उसे बाहर की ओर जाना है। दृष्टा के पास दो रास्ते हैं, उसे भीतर की ओर जाना है। साक्षी को कहीं नहीं जाना। वो परम गंतव्य है। वह पूर्ण शांति और आनंद में स्थिर है।

एक भ्रम फैलाता है। एक प्रश्न पूछता है और एक के पास उत्तर है।

***

राजा की नजर में फ़कीर दया का पात्र है क्यूँकि राजा के लिए जीवन संसाधनों को एकत्र करने की एक दौड़ है, जिसमें फक़ीर बहुत पीछे चल रहा है। फक़ीर की नज़र में राजा दया का पात्र है क्यूँकि राजा के पास जाने को एक ही रास्ता है और फक़ीर के पास एक रहस्यमय रास्ता है, जो उसने खोज लिया है। फक़ीर जानता है, राजा जिस रास्ते पर जा रहा है, वो आगे से बन्द है और राजा सबसे आगे दौड़ रहा है।

***

कर्ता के पास एक रास्ता उपलब्ध है और दृष्टा के पास दो। बाहरी और भीतरी। इसी कारण दृष्टा बाहरी रास्ते पर उतना ही चलता है, जितना कि आवश्यकता पूरी होने हेतु आवश्यक है। जो ऊर्जा इच्छाओं को पूर्ण करने में खर्च होनी है, उसी ऊर्जा का उपयोग, वह भीतर की ओर जाने में करता है। अपने भीतरी रास्ते को तय करने में करता है।

***

कर्ता शांति के साथ बैठ नहीं सकता। उसे लगेगा कि समय खराब हो रहा है। दृष्टा शांति के साथ बैठ सकता है। उसे समय के पीछे नहीं भागना क्यूँकि उसे समय से कुछ नहीं माँगना। दृष्टा शांति में खोना चाहता है। साक्षी स्वयं शांति है।

जीवन कुछ बनने की नहीं, कुछ खोजने की यात्रा है।

***

जिसे पाना कहते हैं, वही तो खोना है। जिसे खोना कहते हैं, वही तो पाना है। किसी और को पाना अर्थात् अपना समय और ऊर्जा खोना। किसी और को खोना अर्थात् अपना समय और ऊर्जा पाना।

***

जो मिला, वो बहुत है। जो नहीं मिला, उसकी आवश्यकता नहीं है।

***

पहेली तो पहले सामने आती है और जवाब, खोजने के बाद।

***

फल को अग्नि द्वारा पकाना नहीं पड़ता और अन्न को अग्नि की आवश्यकता पड़ती है पकने हेतु।

***

दृष्टिकोण को दृष्टिक्षेत्र से बदल दीजिए।

***

आयुर्वेद के अनुसार जिन शरीरों में अग्नि की प्रबलता होती है, वे शरीर बीमार कम पड़ते हैं। यह अग्नि है यम की।

***

सुख और दुख तभी तक हैं, जब तक संतुष्टि नहीं। संतुष्टि प्राप्ति के पश्चात् सुख और दुख का कोई अस्तित्व नहीं।

***

देश तो स्वतंत्र हो गया, क्षेत्र कब स्वतंत्र होगा? गीता शरीर को क्षेत्र कहती है।

***

मृत्यु का भय वास्तव में मृत्यु से भय नहीं है। बिना अपनी खोज पूरी किये, मर जाने का भय है।

***

पौधों, वृक्षों को मल मूत्र करने की आवश्यकता नहीं क्यूँकि वे सूर्य से सीधे सम्बन्धित हैं और हम सूर्य से दूर।

***

रहने के स्थान में आसक्ति का न होना अर्थात् मकान और शरीर दोनों में आसक्ति का न होना।

***

गुणों में आसक्ति के साथ, किया गया कार्य ही कर्म है।

***

अपने जीवन के प्रति ईश्वर की योजना को एकांत व मौन में ही जाना जा सकेगा। जहाँ एकांत और ध्यान है, वहीं तो माँ हैं। माँ अर्थात् प्रकृति। माँ ही बताएँगी कि अस्तित्व के किस कार्य को आपको आकार देना है।

***

अस्त मतलब 'नहीं'। अस्ति मतलब 'है'। इस प्रकार होने और नहीं होने के बीच अंतर मात्र ई का है, शक्ति का है।

***

विवाह चरम सुखों का एक प्रयोग है और सन्यास परम सुख का प्रयोग।

***

विवाह दो अपूर्ण लोगों का, एक दूसरे में अपनी पूर्णता ढूँढने का प्रयास है।

***

मनुष्य के होने का कारण आया शून्य से। उसका भोजन आता है सूर्य से। उसका शरीर आया धरती व शेष चार तत्वों से। फिर वह किसी स्थान विशेष, शहर या गली विशेष का कैसे हो सकता है?

***

हर व्यक्ति में बुद्ध हैं। ठीक वैसे ही जैसे, हर एक शिला में सुन्दर मूर्ति छिपी हुई है। अंतर बस इतना है कि कुछ लोगों ने स्वयं को तराश लिया और कुछ लोग, अभी इस प्रक्रिया में हैं।

***

बुद्ध ने कुछ प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया क्यूँकि कुछ प्रश्नों के उत्तर ही नहीं, मात्र अनुभूतियाँ हैं। कोई शब्दों के माध्यम से, आपको आपकी अनुभूति कैसे दे सकता है?

***

हर एक प्रश्न का अलग-अलग तलों पर अलग-अलग स्पष्टीकरण है। आपको क्या उत्तर प्राप्त होता है, यह निर्भर करता है कि उत्तर देने वाला उस एक क्षण में किस तल पर है।

***

मेरे पास अपना कोई चेहरा नहीं है और उसकी जरूरत भी नहीं है।

***

शिष्य के दो सर्वश्रेष्ठ गुण – 1. समर्पण, 2. धैर्य।

***

कर्ता जगत् की सक्रियता के विपरीत, दृष्टा जगत् मात्र धैर्य का जगत् है। जहाँ पर धैर्य ही स्पष्टीकरण प्राप्त होने का साधन बन जाता है।

***

जो भी आपसे आपके गुणों के कारण जुड़ेंगे, वे सम्बन्ध अस्थायी होंगे।

***

नशे से ज्यादा खतरनाक नशे की इच्छा है।

***

पदार्थ और प्रकाश यही दो ध्रुव हैं, इस ब्रह्माण्ड के। बाकी सभी कुछ, मात्र भ्रम हैं।

***

या तो तपस्या में सब कुछ जला डालो या बाद में पश्चाताप में जलो।

***

घूमने के लिए स्थान परिवर्तन आवश्यक है लेकिन यात्रा तो आसन पर बैठे-बैठे ही की जा सकती है।

***

यदि सब कुछ स्थूल स्तर पर ही है तो क्यूँ वैज्ञानिक, सूक्ष्म स्तर पर (पार्टिकल भौतिकी), कणों में जीवन की उत्पत्ति के रहस्यों को ढूँढ रहे हैं?

***

चित्र में चेहरे के चारों ओर आभा को दर्शाना अर्थात् चेतना का सहस्त्रार से ऊपर उठना। जब सूर्य पर्वतों के बीच से ऊपर उठेगा, तभी प्रकाश दर्शनीय होता है।

***

विक्रम और बेताल की कहानी, हमारी अपनी कहानी है। विक्रम है चेतना और बेताल है मन।

***

गाड़ी आगे की दिशा में तेजी से जा रही हो या पीछे की दिशा में, दोनों ही दशाओं में गाड़ी से उतरने का प्रयास करना, दुर्घटना को दावत देना है। दुर्घटना की अवस्था में सफर अपूर्ण रह जाएगा। प्लेटफार्म पर सुरक्षित उतर कर, अपने गंतव्य तक के सफर पर आगे

बढ़ जाना ही यात्रा है। गाड़ी से उतरना तभी ठीक होगा, जब उसकी चाल, प्लेटफार्म की चाल के बराबर हो अर्थात् शून्य। इसी प्रकार शरीर त्यागने से पहले अतीत और भविष्य से मुक्त हो, वर्तमान में स्थिर हो जाना ही, एक चरण की पूर्णता का संकेत है। इस दशा में शरीर से उतरकर आगे की यात्रा पर बढ़ जाना, गंतव्य पर पहुँचने को आवश्यक होगा।

***

आत्म के आत्मा में और खुद के खुदा में परिवर्तन हेतु ऊर्जा की आवश्यकता है। जब ऊर्जा आत्म या खुद को प्राप्त हो, मन को नहीं।

***

गुण कभी मनुष्य को बाँध नहीं पाते, हाँलाकि वे उसे आकर्षित अवश्य करते हैं। परंतु एक स्तर आने पर मनुष्य उनसे ऊबने लगता है। वास्तव में उन गुणों में भी मनुष्य खुद को ढूँढता है क्यूँकि गुण उसका अपना भाग नहीं। इसी कारण गुणों से मोह उचाट होना स्वाभाविक है। मनुष्य गुणों को नहीं, गुणों के कारण को खोजता है। वही कारण, उसके अपने होने का कारण भी है।

***

प्रेम आपसे है, मोह आपके शरीर से होगा।

***

पति के पास दो मार्ग हैं – 1. पता लगाने निकल पड़े, 2. पतित हो जाए।

***

आज्ञाचक्र पर पहुँचकर, शक्ति शिव से बँध बनाकर शांत हो जाती है और चेतना मन से मुक्त हो जाती है। यह चेतना का उदय है, जन्म है। यही चेतना का आत्मज्ञान है। अब चेतना मुक्त है। यही मोक्ष है। अब चेतना शून्य में ऊपर उठ सकती है।

***

विवाह अर्थात् दोनों हाथों में लड्डू :

(1) यदि पति-पत्नी की बनीं और सब कुछ मन मुताबिक चला तो कुछ लोग खुश होंगे। जैसे कि माँ-बाप, पति-पत्नी, बच्चे। माँ बाप इसलिये खुश होंगे क्यूँकि वे तो बच्चों के माध्यम से ही अपनी पूर्णता खोज रहे हैं। बच्चों का विवाह भी, इसी पूर्णता के प्रयोग का हिस्सा है। बच्चों का विवाह यदि सफल रहता है तो समाज से उन्हें सफलता का प्रमाणपत्र प्राप्त होता है। अर्थात् बाहरी व्यक्ति उन्हें बताते हैं कि वे सफल रहे। जिसे वे अपनी सफलता मान लेते हैं।

पति पत्नी इसलिए खुश हैं कि उन्हें काम सम्बन्धी प्रयोग की स्वतंत्रता मिली। काम संतुष्टि मिली। जिसने कामना सम्बन्धी प्रयोगों का रास्ता खोल दिया। अब धन, सम्पत्ति, सम्मान और संतति के माध्यम से अधिकार और अहंकार सम्बन्धी प्रयोग किये जाएँगे। सुख और दुख को जीवन की सफलता और असफलता का पैमाना मानकर, जीवन जीने का प्रयोग किया जाएगा। मन आपके इस प्रयोग करने के निर्णय से खुश है क्यूँकि आप उसके कहने पर ही ये प्रयोग कर रहे हैं।

मन इसलिए भी खुश है क्यूँकि आप उसके अनुसार अपना समय व्यतीत कर रहे हैं। इस प्रयोग के परिणाम पर, मन ही खुश या दुखी होने का उद्दीपन देता है क्यूँकि हम मन से जुड़े हैं, इसी कारण हम खुश या दुखी होते हैं।

(2) जब मन के मुताबिक यह प्रयोग सफल होता न दिखे अर्थात् मन को ऊर्जा तो प्राप्त हो रही हो, परन्तु वह चेतना को परिणाम न दे पा रहा हो। इस दशा में चेतना विचलित होती है। चेतना की व्याकुलता को देख मन उसे विकल्प देता है, विवाहेत्तर सम्बन्ध का या विवाह सम्बन्ध तोड़ देने का। ताकि विवाह सम्बन्धी यही प्रयोग, किसी और शरीर के साथ किया जा सके। वहीं जब मन द्वारा दिए गए, किसी विकल्प पर अमल न किया जाए, तो व्यक्ति की तपस्या आरंभ हो जाती है। मन के उद्दीपनों पर ध्यान न देना ही तो तपस्या है। तपस्या में व्यक्ति अपने मन पर नियन्त्रण स्थापित कर, अपनी शक्ति को बढ़ाता है। व्यक्ति

जब उपस्थित परिस्थितियों को स्वीकार कर, मन द्वारा दिए गए, किसी भी विकल्प पर अमल नहीं करता तो वह तपस्वी हो जाता है। वह खुद को तपाता है, ताकि उसमें घुली अशुद्धियाँ ताप के माध्यम से धीरे धीरे वाष्पीकृत हो जाएँ। ठीक वैसे ही जैसे दूध को तपाने पर दूध का सत्व अर्थात् खोवा प्राप्त होता है और अशुद्धियाँ समाप्त हो जाती हैं। इस दशा में विवाह सम्बन्ध ही तपस्या का रूप ले लेता है। जिनका वैवाहिक सम्बन्ध अच्छा चलता है, वे सभी खुश हैं और जिनका मन मुताबिक न चला, वे सभी तपस्वी हैं।

***

सुख व दुख की अवधारणा चिंता से जुड़ी है। यदि हम चिंतित हैं, तो हम दुखी हैं। यदि कोई चिंता नहीं, तो हम सुखी हैं।

***

तपस्या का परिणाम या फल है, व्यक्ति का अपने नियंत्रण को पुनः प्राप्त करना। अपने ऊपर स्वामित्व प्राप्त करना अर्थात् स्वामी हो जाना। विजातीय अर्थात् मन से सम्बन्ध विच्छेद करना। पुनः उसे प्राप्त करना, जो अपना भाग है अर्थात् अपनी आत्मा को प्राप्त करना। आत्मज्ञान प्राप्त करना।

***

जीवन खेल है विभिन्नताओं को मानने का और फिर विभिन्नता में निहित समानता को जानने का। इस प्रकार यह यात्रा मानने से, जानने तक की है।

***

शून्य ही समत्व है।

***

महाभारत वह युद्ध है, जो हर एक व्यक्ति के भीतर प्रतिक्षण चलता रहता है।

***

यात्रा उनके मार्गदर्शन में, उन्हीं प्रकाश के कारण संभव व उन्हीं तक पहुँचने की है।

***

जब तक 'म' जाएगा नहीं, 'मजा' आएगा कैसे?

***

कामुकता हमें बताती है कि सुख बाहर मिलेगा। काम सुख के लिए शरीर के उभरे तथा गहरे अंगों का सहारा लिया जाता है। बाहर से प्राप्त सुख भी, किसी शरीर में उपस्थित शक्ति से ही उत्पन्न होता है। इस प्रकार सुख शक्ति से ही प्राप्य है। चाहे वह अपनी हो या दूसरे शरीर की। यही शक्ति जब बाहर की ओर प्रवाहित होती है तो सुख और दुख में परिवर्तित हो समय से बाँधती है और यही शक्ति जब भीतर की ओर प्रवाहित होती है, तो आनन्द में परिवर्तित हो, काम के बँधन को उत्तरोत्तर अशक्त करती है।

***

जब आप इस सुख को दूसरों में फैलाएंगे तो खुद को प्राप्त सुख का, मात्र दस प्रतिशत ही दूसरे को दे सकेंगे। इस प्रकार मूल सुख का मात्र दस प्रतिशत ही, हर स्तर पर आगे बढ़ पाता है। वहीं जब आप इस शक्ति को, भीतर की ओर मोड़ लेते हैं तो शक्ति सौ प्रतिशत आनंद में परिवर्तित हो जाती है। यह आनंद आपसे मिलने वाला हर व्यक्ति महसूस कर सकता है। इस प्रकार आपके आनंद का लाभ, औरों को अल्पजीवी कामसुख की अपेक्षा, कहीं ज्यादा प्राप्त होता है। इसी घटना को ओशो 'बुद्धक्षेत्र' या 'बुद्धा फील्ड' कहते हैं।

***

नशा बाहर से नहीं नशा भीतर से आएगा।

***

उद् अर्थात् उदय – जब उत्थान इस स्तर पर पहुँच जाए कि चेतना उदित हो सके।

***

हाँ सद्गुरु आपका ब्रेनवॉश करना चाहते तो हैं लेकिन बाद में वे उस खाली जगह पर दूसरे विचार या विचारधारा नहीं डालना चाहते। वे चाहेंगे कि खाली दिमाग उतना ही खाली हो, जितना की शून्य है। वहीं विचारधाराएँ, चाहे वे दक्षिणपंथी हो या वामपंथी, राजनैतिक हो या धार्मिक, संकीर्ण हो या विस्तृत, पूर्वी हो या पश्चिमी, भोगवादी हो या आतंकवादी। सभी ब्रेनवॉश के बाद, अपनी विचारधारा आरोपित करना चाहेंगे।

***

मैं कुछ सोच नहीं रहा, बस पा रहा हूँ।

***

बेचैन होकर घूमता बाहर हूँ। पर पाता सदैव अपने भीतर ही हूँ।

***

यम मनुष्य के अंदर का वह भाग है, जिसकी आवश्यकताएँ अति सीमित हैं। वह मात्र ब्रह्मचर्य पर जीवित रह सकता है। अहिंसक है। सत्य में मग्न है। पदार्थ में रुचि नहीं (अपरिग्रह, अस्तेय और यम पर जिसका राज है, वह है मनुष्य की आत्मा।

***

सत्य जीवनभर दखल नहीं देता। जब तक आप उसे नहीं खोजते, वह अपनी उपस्थिति नहीं जताता। वह आपकी स्वतंत्रता में कभी दखल नहीं देता। पूरे जीवन में वह मात्र, मृत्यु के समय ही क्रियाशील होता है। जब वह चेतना, जीव और उसकी अशुद्धियों (मन, बुद्धि, अहंकार) को लेकर शरीर के बाहर निकल जाता है।

***

सत्य और शक्ति मिलकर, इस शरीर की रचना करते हैं। प्राण इसमें तभी तक रहता है जब तक जीवनीशक्ति बची रहती है। शक्ति समाप्त, जीवन समाप्त। जीवात्मा मुक्त, पुनः शक्ति के साथ, नया शरीर रचने हेतु।

***

ज्ञान प्राप्ति के बाद क्यूँ पुनर्जन्म न होना कहा गया। क्यूँकि शरीर की द्विध्रुवीय व्यवस्था समाप्त। दोनों विपरीत ऊर्जाएँ मिलकर एक हो गईं। विद्युत सर्किट पूरा हुआ और फलस्वरूप चेतना मुक्त हुई।

***

हमारा हर डर, समय से जुड़ा है।

***

जीवन में दो विकल्प हैं–

1. या तो पहुँच वाले लोगों से पहचान बनाइये या फिर 2. खुद तक पहुँच जाइये।

***

जड़ तत्व समय से बँधे हैं और चेतन तत्व समय से मुक्त।

***

बाहरी विचारधारा पर भीतरी गुण हावी होते हैं। इसी कारण एक ही धर्म, जाति व परिवार के लोगों के मध्य भी मतभेद व बैर दिखाई देता है।

***

बुद्धि = बुद्ध + इ (शक्ति)

बुद्धि में निहित शक्ति, जब शिव से मिलने गमन कर जाती है, तब बुद्ध का उदय होता है।

***

पिंडदान में अर्पित पिंड भी अन्न से बनता है। पिंडदान अर्थात् जीवात्मा को सूचना देना कि हमसे मोह समाप्त हुआ। अब नया पिंड अर्थात् शरीर धारण करो। अब नये शरीर से मोह करो।

***

समुद्र में चलने वाली नाव जितनी तेज और बड़ी हो, अपने पीछे उतनी ही बड़ी लहर पैदा करती है। वो लहर दूर से ही देखी जा सकती है लेकिन थोड़ी देर बाद वो लहर पानी की सतह पर कहीं गुम हो जाती है। हमारा जीवन और हमारा प्रभाव भी कुछ ऐसा ही है।

***

कहानी बस इतनी सी है कि आप इस पार हैं या उस पार। इस पार हैं तो कुछ यम है और कुछ नियम। उस पार हैं तो कानून।

***

बुद्ध व्यक्ति कृष्ण को कृष्ण, मुहम्मद को मुहम्मद, नानक को नानक और क्राइस्ट को क्राइस्ट क्यूँ कहते हैं? क्यूँकि वे जानते हैं कि इनसे सामान्य तो कोई है ही नहीं। इनके अलावा जो कोई भी हैं, वो सभी महत्वपूर्ण हैं।

***

नरक में भी ठेला ठेली। - नरक में ही तो है ठेला ठेली। स्वर्ग में कहाँ है, ठेला ठेली। वहाँ तो मात्र दो लोग हैं। आप और आपकी आत्मा। बाकी पूरा इलाका खाली।

***

बुद्ध के रोग, वृद्धावस्था, मरण और जीवन के यथार्थ से सम्बन्धित प्रश्न को यदि कोई मनोचिकित्सक सुन ले तो वो इसे डिप्रेशन ही तो कहेंगे।

***

काम और सोम दोनों में 'म' है। काम का 'म' कहता है कामना हूँ मैं। सोम का 'म' कहता है शिव हूँ मैं। जो कामना को तृतीय नेत्र द्वारा भस्म कर सकता है।

***

क्यूँ ऐसे लोग ज्यादा विनम्र और सहनशील हो जाते हैं, जो जीवन के उस कगार से लौटकर आ पाते हैं, जिस कगार पर या तो खेल खत्म हो सकता था या टूटा ही जा

सकता था। उस पहाड़ के छोर से बचकर आ पाने वाले, जहाँ पर आगे खाई थी और पीछे धक्का देने पर उतारू शत्रु। वे लोग जो भीषण दुर्घटना से, प्लेन क्रैश से, बचकर आ पाए। वे जिनके पाले पोसे बच्चे, उनके सामने चले गए। वे जो भीषण बीमारियों से बचकर वापस आ पाए। वे जो टूटने की कगार तक पहुँच गए थे। वे जिन्होंने ये महसूस किया कि ये सब मेरे साथ ही क्यूँ हुआ? किसी का बुरा किये बिना भी, ये सब मेरे साथ क्यूँ?

एक बात जो इन सभी लोगों में समान है, वो है कि वे अब ये जानते हैं, कि जो भी मैंने अपने जीवनभर या पच्चीस तीस सालों तक माना। जिसे मैंने निश्चित माना और जिसके लिए मैं निश्चिंत रहा। वो सभी कुछ, एक दिन में ही खत्म हो सकता है। इन सभी लोगों ने माया के उस छोर को देख लिया, जिसे अभी बाकियों को देखना बाकी है। ऐसे अनुभवों ने इन सभी लोगों के भ्रम को, बल को, सुरक्षा की भावना को और मानसिकता को तो तोड़ा लेकिन बदले में पहले से ज्यादा शक्ति से भर दिया और इस शक्ति के कारण ही उनमें सहनशक्ति बढ़ी। भ्रम टूटने के कारण ही विनम्रता बढ़ी। अब वे खुद के ज्यादा नज़दीक हैं और इसी कारण ज्यादा विनम्र और सहनशील भी।

***

आप खोजने जाते हैं, सत्य को और पा लेते हैं खुद को।

***

भावना जगत सुख और दुख का जगत् है। सत्य की ओर की यात्रा में एक समय आता है, जब आप भावना जगत् से आगे बढ़ जाते हैं। वह है भाव जगत्। वहाँ पर सुख और दुख उपस्थित नहीं है और न ही भावनाओं का ज्वार-भाटा।

***

भावना जगत में रहते हुए अपना कर्म करने हेतु, आपको अपने कर्म स्थान पर वापस आना होगा। कर्म स्थान से अलग हटकर, आप कर्मशील नहीं रह सकते।

***

भाव जगत् में स्थित हुए आप, दुनिया के किसी भी भाग में अपना कर्म करते रह सकते हैं। क्यूँकि आपके कर्मों का स्त्रोत अब धरती नहीं, ब्रह्माण्ड से जुड़ा है।

***

जिन्होंने जीवन में गरीबी का व्रत लिया, आज हर नोट पर उन्हीं की फोटो है। ये है त्याग का प्रभाव।

***

यदि दैव के प्रयोजन से जीवन में आत्मज्ञान प्राप्त होना है और यदि आप साधना नहीं कर पाए तो आपका जीवन और घटनाएँ ही साधना की कारक बन जाएंगी। यदि आप तपस्या नहीं कर रहे तो आपको सघन तपस्या जितना ही तपा दिया जाएगा।

***

दीपदान में प्रकाश व प्रकृति एक हुए। दीप अब प्रकृति के प्रवाह का एक भाग। दीप में कोई पतवार नहीं, वह प्रकृति के साथ बहने को तैयार। अग्नि और जल सामंजस्य में। नदी ने दीपक को आधार दिया और दीपक ने वातावरण को प्रकाश।

***

धरती ब्रह्माण्ड से जुड़ी है, सूर्य के माध्यम से। हमारा ब्रह्माण्ड से कोई सम्पर्क नहीं। यदि सर के ऊपर वाले से जुड़ना है, तो पैर के नीचे वाली से इसका मार्ग पूछना होगा।

***

जिन धर्मों में पुनर्जन्म की अवधारणा नहीं, उनमें मृत्यु के बाद भी शरीर की महत्ता बनी रहती है। इसी कारण शरीर को दफना दिया जाता है क्यूँकि धरती ही शरीर को एक नियत स्थान दे सकती है।

***

जिन धर्मों में पुनर्जन्म की अवधारणा है, उनमें मृत्यु के बाद शरीर की कोई उपयोगिता नहीं। चेतना के नए शरीर लेने को, उसके पुराने शरीर से मोह समाप्त होना आवश्यक है। अतः शरीर का जलकर विखण्डित होना आवश्यक है।

***

सभी सत्यान्वेशियों का प्रयास, दुख के कारण को जानने का है। बुद्ध ने भी पहले दुख को देखा और फिर उसके कारणों को ढूँढने निकले। जिसने दुख नहीं देखा, वह उसके कारण को क्यूँ जानना चाहेगा?

***

भाव जगत् में स्थित होना ही स्थितप्रज्ञता है।

***

आत्मा और परमात्मा में क्या भेद हैं?

आत्मा वह है जो ये कहे कि वह आत्मा है। जो कहे अहं ब्रह्मास्मि।

परमात्मा वह है, जिसे कुछ कहने में कोई रुचि नहीं। जो बाहरी शोरगुल से पूर्णतः अविचलित, पूर्ण शांति व स्थिरता के साथ, मन से पूर्णतया अप्रभावित है। जो बाहर देखता तो है लेकिन देखने में उसकी कोई रुचि नहीं। जो वाह्य जगत् से पूर्णतः अप्रभावित, आत्म में पूर्ण शांत है।

***

कृष्ण कहते हैं कि वह देखता हुआ भी नहीं देखता, सुनता हुआ भी नहीं सुनता, मानता हुआ भी नहीं मानता। क्यूँकि मन भीतर बैठा, अब महत्वपूर्ण और विशेष को चिह्नित नहीं कर रहा। वह स्थितप्रज्ञ है।

***

इस ब्रह्माण्ड का 99.99 प्रतिशत हिस्सा दुख से अछूता है। एक देश में मात्र सूई की नोंक जितने हिस्से पर ही दुख है। इसका तात्पर्य है, दुख ब्रह्माण्ड का शाश्वत भाग नहीं है। पृथ्वी के भी मात्र उतने ही हिस्से में दुख है, जितने हिस्से में मन का राज चलता है।

***

अष्टांग योग

1. यम - चेतना के लिये
2. नियम - मन के लिये
3. आसन - शरीर के लिये
4. प्राणायाम - शरीर + चेतना के लिये
5. प्रत्याहार - शरीर के लिये
6. ध्यान - चेतना के लिये
7. धारणा - मन के लिये
8. समाधि - चेतना को प्राप्त

***

लाउडस्पीकर (मुँह) हमारा है और बोलते इस पर मन और बुद्धि हैं। मन और बुद्धि हमें अनुभव देते हैं और आत्मा देती है अनुभूति।

***

गागर में सागर का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण यह शरीर है।

शरीर - गागर

परमात्मा - सागर

***

समाज के पास देने को मात्र सम मान है, वो आपको समतत्व नहीं दे सकता।

***

जीव जगत् के पास खर्च करने को यदि कुछ है तो वह है समय। समय हम जितना चाहे खर्च कर सकते हैं। पदार्थ के रूप में, हम कुछ भी नहीं खर्च कर सकते। भोजन भी नहीं, क्यूँकि भोजन भी मल और मूत्र के रूप में बाहर निकल जाता है। भोजन से उत्पन्न ऊर्जा, रूप परिवर्तित कर बाहर निकल जाती है। सृष्टि में उपस्थित पदार्थों पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं। हाँ उनका उपयोग, हम अवश्य कर सकते हैं। खर्च करने को हमें मिला तो बस समय। इसी एक तथ्य से समझा जा सकता है कि समय का महत्व, परम तत्व के लिए कितना कम है।

***

परिवार में हम एक दूसरे की आवश्यकताओं और इच्छाएँ पूरी करने का प्रयास करते हैं और माना यह जाता है कि ऐसा करने से हमें संपूर्णता प्राप्त होगी। हम बच्चे इसलिए पैदा करते हैं कि हमें लगता है कि इससे हमें पूर्णता प्राप्त होगी और इस प्रक्रिया में हम खर्च करते हैं समय। यदि मात्र इतना करने से हमें सम्पूर्णता मिल जाती है तो बाकी के दो आश्रमों की कोई आवश्यकता नहीं थी।

***

समुद्र में तैरती एक नाव, तभी तक अपने अस्तित्व का दावा कर सकती है, जब तक की वो पलटी न हो।

***

व्यक्ति अपनी आवश्यकताएँ व इच्छाएँ पूरी करता है। अपने जीवन साथी की आवश्यकताएँ व इच्छाएँ पूरी करता है। अपने परिवार की आवश्यकताएँ व इच्छाएँ पूरी करता है और इसे करने हेतु उसे, अपनी पूरी शक्ति का दोहन करना होता है। वहीं एक सन्यस्त, मात्र अपनी आवश्यकता पूर्ति कर, शेष शक्ति को बचा लेता है और इसी शक्ति संवर्धन द्वारा, वह

शक्ति को आंतरिक जगत की ओर मोड़ देता है। जिसके माध्यम से, वह अपने चक्रों का जागरण करता है।

***

बुद्ध व्यक्ति का मात्र यह कार्य है कि वह ब्रह्माण्ड के प्रवाह को स्वयं में आने दे और दूसरी तरफ से बाहर निकल जाने दे। इसी प्रकार से वह, ब्रह्माण्ड का एक भाग बन जाता है।

***

उस परम तत्व में ही सभी बुद्ध समाए हैं। इसी कारण बुद्ध से प्रेरणा ली जा सकती है लेकिन डूबा तो ब्रह्माण्ड में ही जा सकता है।

***

बुद्ध व्यक्ति परम गंतव्य नहीं है। वे मात्र मार्ग में मिले, विश्राम स्थल के समान है। उनका मिलना मात्र यही इंगित करता है कि मार्ग सही है व यात्रा उचित दिशा में बढ़ रही है।

***

नाव का चालक	=	अहंकार/मन
चप्पू	=	कर्ता
नाव	=	दृष्टा
नाव विखण्डित	=	साक्षी (नदी)

***

साक्षी, दृष्टा और कर्ता दोनों को ही देख रहा है।

कर्ता	-	पाताल लोक
दृष्टा	-	धरती लोक
साक्षी	-	आकाश लोक

***

काम हमारी आवश्यकता नहीं, इच्छा है।

***

लकड़ी + कील + मेटल की चादर + पतवार + पानी रोधक लेप। इन सभी का सम्मिलित प्रभाव है नाव। किसी एक भाग में कमी आने पर नाव डूब जाएगी। नाव के भाग तो तब भी होंगे, लेकिन नाव न होगी। उसी प्रकार धरती, पानी, अग्नि, वायु और आकाश का सम्मिलित प्रभाव है व्यक्ति। किसी एक तत्व में भी असमान्यता उत्पन्न होने पर व्यक्ति विलीन। तत्व तो होंगे परंतु व्यक्ति समाप्त हो चुका होगा।

***

धाराएँ ब्रह्माण्ड के साथ ही प्रकट हुई। विचार धाराएँ तो विचारों के उत्पन्न होने पर विकसित हुईं। धाराएँ तब भी होंगी, जब विचार और विचारधाराएँ दोनों नहीं होंगी।

***

धाराएँ शाश्वत हैं, विचारधाराएँ अस्थिर और कालबद्ध। आप धाराओं में प्रवेश कर सकते हैं बस विचारों को अलग करके।

***

बुद्ध व्यक्ति का कोई भविष्य नहीं, वो ठहर चुका है।

***

समय की विशेषता है कि एक ही समय पर– वह चलता हुआ प्रतीत होता है, वह शून्य की तरह ठहरा भी हुआ है और उपस्थित भी नहीं।

***

वर्तमान में सभी भ्रम मिट जाते हैं। इसी कारण सभी यादें भी मिट जाती हैं।

***

प्राण का प्राणवायु से सम्बन्ध कुछ इस प्रकार है कि वायु की कमी होते ही, प्राण बेचैन और अनुपलब्धता होते ही व्यग्र हो जाता है। यदि फिर भी वायु अनुपलब्ध हो तो प्राण

शरीर से सम्बन्ध तोड़, प्राणवायु में विलीन हो जाता है। ठीक इसी प्रकार शरीर में शक्ति भी शिव को प्रतिक्षण ढूँढती रहती है। यही कारण है मनुष्य प्रतिक्षण चंचल और व्यग्र रहता है। जिस प्रकार प्राण, बिना प्राणवायु के नहीं रह सकता। उसी प्रकार शक्ति द्वारा शरीर के निर्मित होने का कारण ही है कि इसमें शिव भी स्थित होंगे। सत्य के बिना शक्ति, किसी शरीर का निर्माण न करेगी।

***

संतुष्टि बाहर से आएगी, संतृप्ति भीतर से।

***

मौन के पास सभी प्रश्नों का उत्तर है।

***

कृष्ण को अष्टभार्या के साथ संभोग करना पड़ा, उन्हें संतुष्ट करने के लिए। राधा को संतुष्टि की आवश्यकता न थी, वे कृष्ण के साथ संतृप्त थीं। उन्हें संतुष्टि नहीं चाहिए थी। वे स्वयं प्रेम हैं।

***

दो प्रकार के मनुष्य मिलेंगे –

1. जो बाहरी क्रियाकलापों में आंतरिक संतुष्टि ढूँढते हैं।
2. जो आंतरिक संतृप्ति प्राप्त कर, दूसरों को संतुष्ट करने का प्रयास करते हैं।

***

सत्य 'शोर और चित्र' के पीछे स्थित है, इसी कारण कानों द्वारा उसे सुनना और नेत्रों द्वारा उसे देखना संभव नहीं।

***

कृष्ण ने कंस को भी अंधेरे में न रखा। अपने जन्म से पहले ही, उसे उसकी गति बता दी।

***

शिव और शक्ति के मिलन से दृष्टा जन्म लेता है।

***

कृष्ण कहते हैं कि उसके लिए कोई कर्म नहीं। दृष्टा अपने जन्म के बाद, कर्तापन के बंधन से मुक्त है।

***

वैचारिक स्वतंत्रता आरंभ से अंत तक है। आंतरिक स्वतंत्रता आरंभ से अनंत तक।

***

वृक्ष अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नीचे धरती और ऊपर ब्रह्माण्ड पर निर्भर है। अपने गुणों का उपयोग वे स्वयं के लिए नहीं करते। अन्न, फल, रेशे, लकड़ी, ऑक्सीजन सभी का परित्याग कर, मात्र आवश्यकता पूर्ति में पूर्णतः संतुष्ट हैं।

***

आखिरी तीन सीढ़ियाँ कैवल्य की सीढ़ियाँ हैं। चौथी सीढ़ी के ऊपर रास्ता संकरा है, यहाँ से एकाकी यात्रा है। जैसे एक साथ दो निवाले नहीं निगले जा सकते। चार चक्रों के आगे एकाकी यात्रा प्रारंभ।

***

वर्तमान में स्थित होना ही स्थित प्रज्ञता है।

***

राजा धरती पर फैल रहे हैं। योगी आसमान में फैल रहा है। योगी राजा के फैलते राज्य को देख पा रहा है। राजा योगी के फैलाव को नहीं देख पा रहा।

***

प्रेम उससे होगा जो सामने है। वह प्रेम जो सुपात्र और अपने योग्य व्यक्ति से मिलने पर होगा, वह मोह है।

***

चेतना के चारों ओर से जब अतीत और भविष्य हटता जाता है, उस जगह को आनंद भरता जाता है।

***

पहले लगता था, मेरा शत्रु बाहर और मित्र भीतर (मन) है। अब पता लगा कि शत्रु (मन) भी भीतर और मित्र (आत्मा) भी भीतर। इसका मतलब मैं स्वयं तक सीमित रहकर, अपनी यात्रा कर सकता हूँ।

***

सभी महत्वपूर्ण वस्तुएँ आपकी शक्ति को खींच लेंगी। सभी सामान्य वस्तुएँ आपको शक्ति प्रदान करेंगी।

***

विचारधाराएँ कहती हैं एक तरह के इंसान अच्छे, दूसरे तरह के इंसार बुरे। विचार कहते हैं ये इंसान अच्छा, वो इंसान खराब।

***

असंतुष्ट, असुरक्षित व्यक्ति किसी को स्वतंत्रता नहीं दे सकता।

***

जो सूक्ष्म है, वही तो विस्तृत है, जैसे चेतना। शेष सभी कुछ सीमित है, जैसे अहंकार।

***

विचार सबके अलग-अलग हो सकते हैं लेकिन निर्विचारिता सबमें एक जैसी ही है।

***

बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के बाद, कुछ दिन उसी वृक्ष को दूर से अपलक देखते हुए बिताया। वे उस वृक्ष को देखते हुए मात्र प्रतीत हो रहे थे। वास्तव में वे देख रहे थे, अनन्त की ओर। आंतरिक दृष्टि अब प्राप्त हो चुकी थी, जो शून्य में निहार रही थी।

***

दुर्योधन कृष्ण का विराट रूप देखकर भी मन को काबू न कर पाया। अर्जुन विश्वरूप देखकर वस्तु स्थिति पहचान गए।

***

तृतीय नेत्र खुलना अर्थात् शून्य में देखने की क्षमता प्राप्त होना।

***

बुद्ध अपने स्त्रोत की ओर इशारा कर रहे थे, जब आनंद के पूछने पर उन्होंने कहा कि अभी तो मात्र इतना ही बोला है जितने हाथ में पत्ते हैं। उनका स्त्रोत अनंत है, जिसका कोई ओर छोर नहीं।

***

स्वप्न और समाधि दोनों ही सेतु हैं। स्वप्न शून्य में स्थित होकर, धरती से सम्बन्ध का सेतु है। समाधि धरती पर स्थित रहकर, शून्य से सम्बन्ध का सेतु है।

***

यदि स्वयं स्वतंत्र रहना चाहते हो, तो दूसरों को स्वतंत्र करो।

***

इंसान खुद से भी कई बार ऊब जाता है क्योंकि उसकी भी अपनी एक सीमा है। और जब सीमा है तो स्वतंत्रता कहाँ है।

***

ओशो ने जाने से पहले आश्रम की कई इमारतों को काले रंग से रंगने को कहा। यह शून्य का द्योतक है। अब आश्रम में दो रंग थे, हरा और काला। प्रकृति और शून्य।

***

ये वर्तमान का साहित्य है।

***

डॉक्टर काम तो शरीर पर करते हैं परंतु निगाह वे चेतनता पर ही रखते हैं।

***

कुछ लोग मन की नाव में सवारी करते हैं। उन्हें मन जल्दी ही अंजाम तक पहुँचा देता है।
कुछ लोग एक पैर मन की नाव पर रखते हैं और दूसरा पैर बुद्धि की नाव पर।
कुछ लोग इन दोनों नावों पर सवार न होकर, विवेक की नाव पर सवार होते हैं।

***

योगी योग प्राप्ति के बाद, इन तीनों ही नावों पर सवारी नहीं करता। वह ब्रह्म की नाव पर सवार हो जाता है।

***

सगुण से निर्गुण में छलांग ही 'ज्ञान' है।

***

अधिकतर मनुष्य जहाँ पर अपना जीवन समाप्त करते हैं। वहीं से सिद्धार्थ ने अपना जीवन प्रारंभ किया था। अर्थात् जीवन में उपस्थित दुखों को महसूस करके।

***

जीवन ऊर्जा रुपान्तरण का खेल है।

***

ज्ञान प्राप्ति आंतरिक रुपान्तरण की प्रक्रिया का सम्पन्न होना है।

रुपान्तरण = रूप + अंतरण = रूप का बदल जाना = जीव का चेतना हो जाना।

***

पैसे को अपने खाते में आप क्रेडिट करते हैं और समय को आपके खाते में दैव क्रेडिट करता है। हमारे पास पैसा पूरा हो न हो, समय पूरा होता है। हमारा पैसा हमसे कोई भी छीन सकता है। लेकिन हमारा समय हमसे, सिर्फ हमारा मन ही छीन सकता है।

हमारे मन को भी, हमारे समय से तभी तक मतलब है, जब तक हम समय से जुड़े हुए हैं।

***

जो रुका हुआ दिखता है, वह सतत् यात्रा पर हो सकता है। जो सतत् व्यस्त दिखता है, वह बिल्कुल रुका हुआ हो सकता है।

***

समत्व को कहीं नहीं जाना, वो बिल्कुल रुका हुआ है। वो बस आते-जाते लोगों को देखता रहता है।

***

हमारे पास दो विकल्प हैं –

1. या तो हम समय को यूँ ही मन द्वारा लुटते हुए देखें। 2. या स्वयं को समय की परिधि से सिकोड़ लें। समय से लगाव का त्याग कर दें।

***

मस्तिष्क इस ब्रह्माण्ड में सबसे बाद में बनीं, रचनाओं में से एक है। ब्रह्माण्ड का निर्माण किसी मस्तिष्क द्वारा नहीं हुआ है। इसी कारण मस्तिष्क से परे हटकर भी, इस ब्रह्माण्ड के रहस्यों को जाना जा सकता है।

***

वृक्षों का कोई चेहरा नहीं होता। उन्हें चेहरे की आवश्यकता नहीं क्योंकि उन्हें कोई भ्रम नहीं।

***

बुद्ध ने विज्ञान को दुखमय कहा। विज्ञान के मूल में बुद्धि है। बुद्धि बिना, विज्ञान की समझ नहीं। विज्ञान अर्थात् बुद्धि दुखमय है।

***

किसान को फसल से मोह है लेकिन फसल को किसान से कोई मोह नहीं।

***

व्यक्ति में से 'इ' अर्थात् शक्ति निकल जाए तो मात्र वही बचा रह जाता है, जो उसने व्यक्त किया था।

***

समय बाहर है, हमारे भीतर कोई समय नहीं। घड़ी, दिन, रात, धूप, अंधेरा सब बाहर हैं।

***

यदि हम त्वचा और शरीर का गठन देखकर ही, यदि किसी का चुनाव करते हैं तो हम मात्र शरीर का चुनाव कर रहे हैं।

***

बुद्धि एक परिवार के लिए है या समाज के एक भाग के लिए। बुद्ध पूरी सभ्यता के लिए हैं।

***

समय से समय हीनता की यात्रा, चेतना करती है। निद्रा में चेतना, समय हीनता में स्थित होती है।

***

जब भी हम किसी बाहरी वस्तु / शरीर / यंत्र से सुख प्राप्ति की चेष्टा करते हैं, तो बदले में हमें खर्च करना होता है समय।

***

आवश्यकता का लोक, संतुष्टि का लोक है। इच्छालोक में ही असंतुष्टि है।

***

शून्य की यात्रा शरीर द्वारा संभव नहीं। मात्र चेतना ही शून्य की यात्रा कर सकती है।

***

हमारे पास खर्च करने को यदि कुछ है तो वह है समय। सिर्फ समय। यही है जिसे आप बिना कमाए भी खर्च कर सकते हैं। इस समय को आप दो प्रकार से खर्च कर सकते हैं– 1. समय के चक्र में और उलझते जाने को। 2. समय के चक्र से बाहर निकलने को।

***

जो आवश्यकतापूर्ति में संतुष्ट हैं, वे अपना बाकी का समय, समयचक्र से बाहर निकलने में उपयोग करते हैं। आवश्यकतापूर्ति तक स्वयं को सीमित कर लेने का रहस्य यही है।

वास्तव में समयहीनता में प्रवेश करने को कोई प्रयास है ही नहीं। अपितु सभी प्रयासों से दूरी ही कुंजी है।

***

प्रतिक्रिया भीड़ में से निकलती है और उत्तर एकांत से।

***

बुद्धि शांति का नहीं, सफलता व असफलता का रास्ता बताती है।

***

त्याग; इच्छा, आकांक्षा, कामनाओं का नहीं, वरन् मन का।

त्याग; सफलता, संपत्ति, सम्मान, अधिकार का नहीं वरन् बुद्धि का।

***

क्रोध, कपट, काम, कामना, भय, सम्मान, मोह, अनादर, कमीं, कमनीयता सभी बाहर से आते हैं। अंदर से आता है तो मात्र प्रेम।

***

खुशी जीवन की परिधि की ओर दौड़ती तरंगे हैं। दुख, परिधि पर उपस्थित दीवार से टकराकर लौटती तरंगे।

***

जीवन के प्रथम दो आश्रम, ऊर्जा की प्रयोगशाला हैं। जीवन के शेष दो आश्रम, शक्ति की प्रयोगशाला हैं।

***

भोगी सुख और दुख जानते हैं। योगी शांति और आनंद जानता है।

***

मैं किसी व्यक्ति की ओर बाहर से पहल करता हूँ। जबकि मैं उसे भीतर से छू सकता हूँ।

***

धर्म सभी तक अपनी पहुँच बाहर से बनाता है। अध्यात्म सभी को भीतर से छूता है।

***

जो बाहर है, वही मेरे भीतर भी है। जो सबसे बाहर है, वही मेरे सबसे भीतर भी है।

***

अनुभव है तो अनुभवी भी है। अनुभूति तो है परंतु उसे प्राप्त करने वाले के लिए कोई शब्द नहीं। उसकी सत्ता अनुभूति में विलीन।

***

चेतना को सुषुम्ना नाड़ी में ले जाना, आंतरिक शुद्धिकरण की प्रक्रिया है।

***

दृष्टिकोण संपूर्ण नहीं होता।

***

प्रकृति ही शरीर, ऊर्जा, शक्ति, धूप, छाँव, पानी, फल, अन्न, वायु और अंततः योग भी प्रदान करती है।

***

भोगी आक्रान्त है, अकेलेपन से।

***

अध्यात्म अचिंत्य है।

***

अतिसूक्ष्म चेतना ही सुषुम्ना नाड़ी में प्रवेश कर सकती है।

***

शरीर के बाहर का वातावरण ही यम है।

***

प्रकृति प्रत्यक्ष ईश्वर है।

***

मनुष्य जीवन में जो भी करता है, वह मन, बुद्धि और अहंकार की ही अभिव्यक्ति है। चाहे वह जीवनभर व्यस्त रहे लेकिन व्यस्त वह इन्हीं तीनों में रहेगा। तात्पर्य यह है कि वह चूक जाता है। उससे जो इन तीनों के परे है और प्राप्य भी है।

***

जब भी हम कोई महँगी वस्तु की खरीद करते हैं तो उस वक्त भी हमें कुछ मुफ्त मिल रहा होता है। वह है साँसे।

***

आप खुद से मिल सकते हैं। मन और बुद्धि के पार।

***

संतुष्टि जड़ तत्वों से मिलेगी और संतृप्ति चेतन तत्वों से।

***

हम दुनिया से तीन बातों का अदान-प्रदान करते हैं –

1. अपने विचार, 2. अपने अनुभव, 3. अपनी अनुभूतियाँ

***

गृहस्थ की जीवन यात्रा :

बचपन, जवानी – क्रीड़ा

अधेड़ावस्था – बीड़ा

तत्पश्चात – पीड़ा

***

हम मात्र पदार्थ को ही विकसित कर सकते हैं, प्रकृति को नहीं। प्रकृति ने तो पूर्ण विकसित होने के बाद ही, हमें धारण किया है।

***

आना, रहना और जाना। ये शब्द मनुष्यों के साथ ही जुड़े हैं। प्रकृति सदैव या सनातन है।

***

कोई भी अनुभव, चाहे वह आर्थिक या भावात्मक रूप में हमें पीछे ले जाए। लेकिन चेतना रूप में हमें हमेशा आगे ही बढ़ाता है।

***

बुद्धि हमें सफलता तो दे सकती है लेकिन शांति नहीं।

***

जिस प्रकार तपना सोने के लिए जरूरी है। उसी प्रकार तपस्या, हमारे शुद्ध होने के लिए जरूरी है।

***

विभिन्न देशों में अंतर मात्र विकास में है। सभी जगहों पर प्रकृति बिल्कुल एक जैसी है।

***

विभिन्नता क्यूँ है? क्यूँकि आप उसमें एकता ढूँढ सकें।

***

योग के पहले और बाद में शांति पाठ क्यूँ? क्यूँकि हम आते हैं शांति से और लौट जाते हैं शांति में। इन दोनों के बीच का वक्त वियोग और योग में बीतता है।

***

प्रकृति जिम्मेदारी खुद उठाती है। वह हमें जिम्मेदारी नहीं देती। वह हमें सीखने का अवसर देती है।

***

हम विचारों के द्वंद में उलझे रहने को बाध्य हैं। जब तक कि आंतरिक द्वार न खुल जाएँ। उसके खुलते ही नदी की तरह, सारे विचार समुद्र में समा जाते हैं।

***

शुरुआत मौन से कीजिए।

***

टॉयलेट हम अपने ब्लैडर और अपनी आँतों को खाली करने जाते हैं।

***

संतुष्टि भीड़भाड़ में तो संतृप्ति सदैव एकान्त में ही मिलेगी।

***

बीच में खड़ा हूँ। जब तक भीतर से जुड़ा होता हूँ, तब बाहर भी ज्यादा सहज होता हूँ। भीतर से जो मिलता है, उसे मैं बाहर दे सकता हूँ। जब कभी भीतर से कटा महसूस करता हूँ, तब बाहर भी असहज होता हूँ। तब मेरे पास कुछ भी नहीं होता, बाहर देने के लिए। भीतर जुड़ाव है, शक्ति के माध्यम से। जब शक्ति ऊर्जा में परिवर्तित हो नष्ट हो जाती है, तब भीतर से कट जाता हूँ।

***

शक्ति को ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं – मन, बुद्धि और अहंकार।

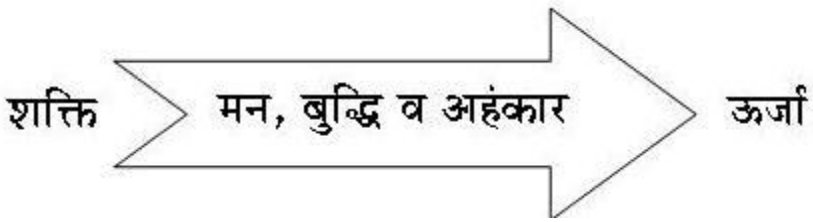

***

मेरा शरीर – ये कुछ भी नहीं। पुरुष का दिखता और लोग इसे एक नाम से जानते हैं। मेरा वाहन, साधन और माध्यम।

मेरा मन – नाम के रूप में मेरी पहचान।

मेरी बुद्धि – बतलाती है कि मेरा व्यवसाय क्या है।

मेरा अहंकार – बताता है कि जो कुछ भी मुझसे जुड़ा है, मेरा है। और इस पर मुझे अधिकार करना चाहिए।

मेरी चेतना – उसे कोई भ्रम नहीं। वह शून्य है।

मेरी आत्मा – चैतन्य है। ईश्वर है।

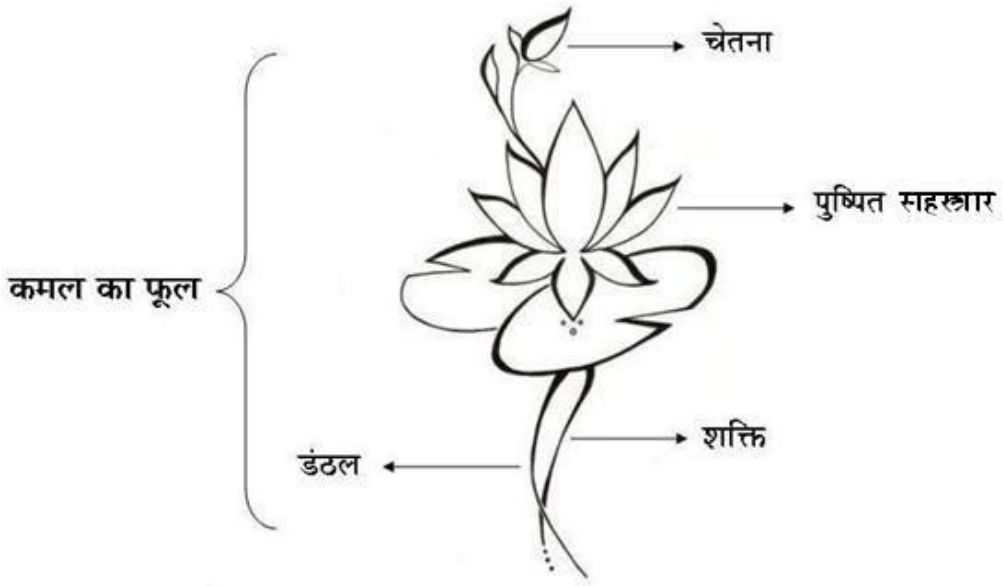

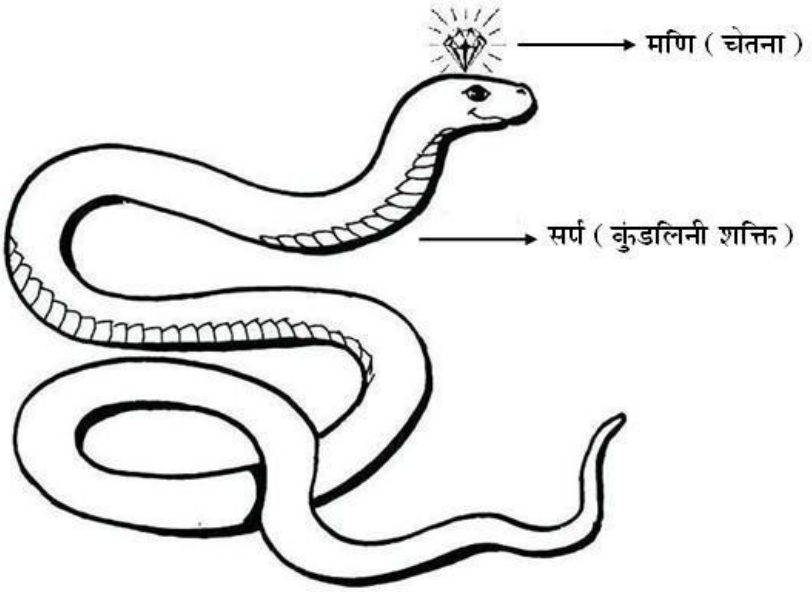

***

शिव ही अतीत और भविष्य का संहार कर, वर्तमान प्रदान करते हैं।

***

आराम अर्थात् बुद्धि को आराम, मन को आराम। आराम अर्थात् राम का आवरण।

***

मनुष्य के आज्ञा चक्र पर तिलक लगाया जाता है और शिव का सहस्त्रार पूजन होता है।

***

वास्तव में हमारी यात्रा, भ्रमित से संशयहीन होने की है।

***

किसी भी रिश्ते की शुरुआत होती है अच्छी बातों से और समाप्ति होती है बुरी बातों पर।

***

बुद्ध व्यक्ति के पास सभ्यता को देने के लिए बहुत कुछ है लेकिन प्रकृति को देने के लिए उसके पास भी कुछ नहीं। वह स्वयं अपनी झोली भरने, प्रकृति के पास जाता है।

***

अपनी शक्तियों को अपने पास रखने वाला ही स्वामी है। वह आसन के माध्यम से अपनी ऊर्जा का उपयोग, अपने शरीर के रखरखाव में व प्राणायाम के माध्यम से मन को नियन्त्रित करने व प्राणशक्ति बढ़ाने में प्रयुक्त करता है।

***

इस्लाम कहता है सला अल्लाह इलायाह वसल्लम। इसाई कहते हैं Rest in peace, हिन्दू कहते हैं, भगवान आत्मा को शांति दें। अंत में जब सब शांति ही माँगते हैं तो उसी शांति को जीते जी क्यूँ नहीं प्राप्त करने का प्रयास करते?

***

धर्म आपको बस शांति तक पहुँचा सकते हैं। उसके आगे का काम सत्य का।

***

दुनिया छोटी है और चेतना बड़ी।

***

चेतना पदार्थ पर अधिकार कर सीमित हो जाती है और पदार्थ से मुक्त हो असीमित।

***

नाम खत्म होते है, अवस्थाएँ आ जाती हैं, जैसे– बुद्धत्व, शिवत्व।

***

शुद्ध और एकान्त देश में रहने का स्वभाव। मन को खींचने हेतु कोई आकर्षण नहीं। बुद्धि लगाने को कोई अवसर नहीं। सारी ऊर्जा अहंकार तोड़ने हेतु प्रयुक्त की जा सकती है।

***

प्राणायाम वह पम्प है जो विचारों को बाहर फेंकता है और मन की सफाई करता है।

***

जीवन दो प्रकार से बिताया जा सकता है-

1. या तो विचारों के लिए लड़ने में बीते, 2. या फिर विचारों से लड़ने में बीते।

***

अधिकतर जनसंख्या अपनी परिधि की ओर जाती है और वहीं पर रहते हुए शरीर त्याग करती है। यह है दक्षिणायन।

***

कम ही लोग अपने केन्द्र की ओर जाते हैं और वहाँ रहते हुए पदार्थ का त्याग करते हैं। यह है उत्तरायण।

***

वृक्ष उत्तरदायी हैं प्रकृति के लिए और प्रकृति के माध्यम से सभ्यता के लिए। वृक्ष मात्र उन वृक्षों के लिए उत्तरदायी नहीं, जो उनसे उत्पन्न होते हैं।

***

पागल तो वही है, जिसने जो 'पाया' उसे 'गला' दिया। क्यूँकि जो उसके पास सदा से था, वही काफी था।

***

शिव इसलिए भोले हैं कि वे मन और बुद्धि से परे हैं।

***

सामान्य अग्नि तेल, बाती और वायु के कारण जलती है और वह अग्नि जो बुद्ध के सहस्त्रार पर जलती है, वह शक्ति, चेतना और शून्यता की उपस्थिति में जलती है।

***

बुद्ध व्यक्ति का कार्य उसके शरीर में रहने या नहीं रहने पर निर्भर नहीं करता। शरीर में रहते हुए, उसका कार्य जिस प्रकार चलता है, शरीर के बाद भी उसका कार्य सतत् चलता रहता है।

***

बाहर देखने पर 'सम्बन्ध' दिखाई देंगे और भीतर से देखने पर 'समत्व'।

***

शक्ति ∝ चेतना को प्राप्त आनंद।

***

मनुष्य अपने मन और बुद्धि के माध्यम से अपने अहंकार पर कार्य कर रहा है और योगी अपनी चेतना पर।

***

आँखें = सी0सी0टी0वी0

चेतना= दृष्टा (देखने वाला)

मन = डायरेक्टर, जो उसे बताता है कि वहाँ देखो।

***

शिव और शक्ति का अलग रहना ही तो द्वैत है। शिव और शक्ति का मिल जाना ही अद्वैत।

***

कृष्ण सभी मनुष्यों को भूत कहते हैं। भूत अर्थात् अतीत। अतीत उपस्थित है मन के कारण और मनुष्य भी मन के कारण ही उपस्थित है। इसी कारण मनुष्य को भूत कहा गया।

***

आत्मा एक ऐसा शब्द है, जिसके लिए स्त्री लिंग और पुल्लिंग, दोनों ही संबोधन प्रयुक्त किए जाते हैं। दोनों ही सही हैं और सही नहीं भी हैं।

***

चेतना के बारे में आप तभी जान सकते हैं, जब उसका जन्म हो जाए या वह स्वतंत्र हो जाए। ठीक वैसे ही जैसे बच्चे के बारे में आप तभी जान सकते हैं, जब उसका जन्म हो जाए।

***

इस पृथ्वी पर उपस्थित सबसे बड़ा रहस्य है, चेतना। इसी की खोज हर मानव की सबसे बड़ी खोज है। हर मनुष्य इसी की खोज कर रहा है। इसी से कट कर वह स्वयं को खो देता है और इसे ही पाकर वह स्वयं को पा लेता है।

***

योगमाया का एक अंश – पदार्थ शून्य का 1×10^{-23} भाग है और पृथ्वी उस पदार्थ का भी न्यूनतम भाग है।

***

दुनिया को अब 'चेतना – धर्म' को समझना चाहिए।

***

चेतना हल्की होकर उठती जाती है। जैसे हीलियम से भरा गुब्बारा, वायु से हल्का होने के कारण ऊपर उठता जाता है।

***

सन्यासी सम्बन्ध तोड़कर या छोड़कर आगे नहीं बढ़ता। सम्बन्ध वहीं के वहीं रहते हैं, बस वो आगे बढ़ जाता है।

***

जैसे प्रकाश की उपस्थिति में चीजें दिखाई देने लगती हैं। वैसे ही ज्ञान की उपस्थिति में उन चीजों का यथार्थ दिखने लगता है। इसी कारण ज्ञान प्राप्ति को प्रकाश प्राप्ति कहा गया।

***

दुनिया में जो सफल होता है, वो एक कदम आगे बढ़ जाता है। परम तत्व की जब कृपा होती है, तो वह चेतना को एक कदम अंदर खींच लेता है।

***

हर स्त्री अपने शिव को ढूँढती है और उसकी इसी खोज का फायदा मन उठाता है। वह उसे बताता है कि तुम्हारा शिव कोई पुरुष है। ढूँढो उसे। यही कारण है, हर स्त्री जीवन में प्यार ढूँढती रहती है और वो चाहती है कि कोई पुरुष उसे प्यार दे। जब उसे ये लगता है कि उसके मन मुताबिक पुरुष उसे मिल गया है, तब वह उससे समानता चाहती है क्यूँकि शिव यही करते हैं। वह अपने शिव को किसी से बाँट नहीं सकती। इसी कारण जब उसका पुरुष किसी और की ओर आकर्षित होता है तो स्त्री स्वीकार नहीं कर पाती और प्रतिक्रिया देती है। जब पुरुष के प्रेम से उसे अलग होना पड़ता है, तो उसे लगता है कि शिव उससे बिछड़ गए। यह समय उसके लिये भावनात्मक ज्वार-भाटे का होता है।

***

बरबरीक को महाभारत द्रष्टा भाव में देखना था। कर्ता भाव में नहीं। इस हेतु उन्हें वर्तमान में स्थित होना आवश्यक था। समय चक्र का उल्लंघन करना आवश्यक था। कर्तारूप में उनका कार्य पूर्ण हो चुका था। दृष्टा रूप में स्थिति को शरीर से ऊपर उठना अनिवार्य है, इसी कारण कृष्ण ने बरबरीक का शीश माँगा।

कृष्ण ने कहा शीश दो, उसे पहाड़ पर स्थित करूँगा अर्थात् चेतना दो उसे वर्तमान में स्थित करूँगा। भूत, भविष्य से ऊपर, वर्तमान में स्थित करुँगा। महाभारत तो भूत के कारण, भविष्य हेतु लड़ा जा रहा युद्ध है। तुम वर्तमान से इसे देखो।

***

हर साधना का उद्देश्य है, महत्व से समत्व तक की यात्रा।

***

प्राण, पखेरु हैं और आत्मा हंस।

***

बुद्धत्व से शिवत्व तक की यात्रा विजातिय को छोड़ते जाने और सजातिय को ग्रहण करते जाने की है।

***

वीर्य इस शरीर का फल है। जैसे फल में बीज है, वैसे ही वीर्य में शुक्राणु। जैसे वृक्ष कभी फल का उपयोग, अपने सुख के लिए नहीं करते। वैसे ही वीर्य का उपयोग सिर्फ कामोत्तेजना हेतु करना उचित नहीं।

जैसे फल में वृक्ष के श्रेष्ठतम गुण संकलित रहते हैं। वैसे ही वीर्य में शरीर के श्रेष्ठतम गुण संकलित रहते हैं। वृक्ष जड़ है, परंतु वह चलयमान प्राणियों हेतु फल उत्पन्न करता है। वैसे ही यह जड़ शरीर, चेतन तत्व हेतु अर्थात् नए शरीर की उत्पत्ति हेतु यह फल उत्पन्न करता है। यदि चेतना इसका उपयोग न कर सके तो वीर्य व्यर्थ गया।

फल में बीज संतानोत्पत्ति हेतु होता है और गूदा परहित हेतु। वीर्य में शुक्राणु संतानोत्पत्ति हेतु होता है और शेष परहित हेतु। मनुष्य के लिए परे कौन है? ईश्वर और स्वयं उसकी अपनी खोज। इस प्रकार वीर्य को अनावश्यक व्यर्थ न करना ही, स्वयं की खोज के यज्ञ में डाली गई आहूति है।

***

भक्ति ही धारणा है।

***

खोजने वाला अधिकतर खो जाया करता है और खोज आया करता है।

***

महर्षि रमण कहते हैं कि अपने सहज स्वरूप में रहिए। वास्तव में चेतना का सहज स्वरूप दृष्टा ही है।

***

भारत क्यूँ विश्वगुरु है? क्यूँकि उसने ही सर्वप्रथम चेतना के बारे में विश्व को बताया। और उसे प्राप्त करने के तरीके भी।

***

ये जगत मात्र गुणों की एक प्रयोगशाला है। इसी कारण ईश्वर इसमें साक्षी बनकर विद्यमान हैं।

***

जितनी देर तक शक्ति शिव से मिलती है। उतनी देर तक आप अनंत में झाँक सकते हैं।

***

प्राणायाम शरीर की अतिरिक्त ऊर्जा का प्रयोग कर, उसे शक्ति में परिवर्तित कर देता है। अर्थात् प्राणशक्ति। जो स्वस्थ रहने के लिए उत्तरदायी है।

***

अपने शुद्धतम और सूक्ष्मतम स्वरूप को, यम नियमों के पालन द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

***

ये शरीर पदार्थ से बना एक मंदिर है। जिसमें भक्त भी है और भगवान भी।

***

समानता से विभिन्नता और विभिन्नता से फिर समानता। यही है जीवन का चक्र।

***

बुद्ध ने सहस्त्रार पर ज्योति प्रज्जवलित की और उसी को ज्योतिर्लिंग कहा जाता है।

***

शरीर स्वादिष्ट, सुगंधित और सुंदर पदार्थ को मल – मूत्र में बदल देने की मशीन है।

***

सौ गालियों तक कृष्ण ने संयम शक्ति का प्रदर्शन किया और सौ गालियों के बाद संकल्प शक्ति का।

***

सामान्य मनुष्य विचलित होते हैं क्यूँकि उनके पास एक दृष्टिकोण है। बुद्ध पुरुष बहुत कम विचलित होते हैं क्यूँकि उनके पास एक दृष्टिक्षेत्र है, जो विस्तृत है। ईश्वर कभी विचलित नहीं होते क्यूँकि उनका दृष्टिक्षेत्र संपूर्ण है।

***

मनुष्य अपना जीवन, ऊर्जा पर खड़ा करते हैं। सन्यासी अपना जीवन शक्ति पर।

***

ओज आंतरिक शराब है।

शराब पीकर आप अपनी प्रेमिका से ही प्रेम कर सकते हैं। आंतरिक शराब पीकर आप सभी से प्रेम कर सकते हैं।

***

गुरु का स्थान ऊपर तथा शिष्य का स्थान नीचे क्यूँ है? क्यूँकि गुरु धरती की ओर देखता है और शिष्य आकाश की ओर।

***

ब्रह्मचर्य को समझने के लिए एक वृक्ष की ओर देखिये।

कृष्ण जन्माष्टमी–

कृष्ण (चैतन्य) + जन्म + अष्टम (अपरा शक्ति के आठ भेद) + ई (शक्ति)

जन्म अर्थात् चैतन्य का जड़ से अलग होना। कृष्ण को तभी जाना जा सकेगा जब जड़ तत्व अलग हो जाएँ। यह कार्य, शक्ति के माध्यम से सम्पन्न होगा।

***

बुद्ध पुरुष समाज की जड़ मान्यताओं के विरोध में भी हैं। और उनका हर एक कार्य भी समाज के लिए ही है।

***

रथ	–	शरीर
घोड़े	–	मन
कृष्ण	–	आत्मा
अर्जुन	–	जीवात्मा
कुरुक्षेत्र	–	जगत

***

चेतना इस शरीर रूपी पौधे में जन्म लेने वाला पुष्प है।

***

वास्तव में कर्म उतना ही किया, जितना दूसरी चेतनाओं पर किया।

***

चेतना – ब्राह्मण

इच्छाशक्ति – क्षत्रिय

विवेक – वैश्य

मन – शूद्र

जैसे कृष्ण के भीतर ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र समाए हुए हैं। ठीक वैसे ही हमारे भीतर भी चारों समाए हुए हैं।

***

जैसे हर कामयाब पुरुष के पीछे, एक स्त्री होती है। वैसे ही हर स्वतंत्र चेतना के पीछे शक्ति होती है।

***

भावनाएँ दूसरों के लिए जागती हैं और भावुक, व्यक्ति स्वयं के लिए होता है।

***

हर समस्या सिर्फ बुरे कर्म का फल ही नहीं, अप्रत्यक्ष कृपा भी हो सकती है।

***

भाव, भावना की सफाई करता है।

***

दक्षिण दिशा में दूर निकल जाने पर मृत्यु है। उत्तर दिशा में दूर निकल जाने पर जन्म।

***

नींद और जागना, दो बिल्कुल विपरीत ध्रुव हैं। जागी अवस्था में चेतना, मन के पूर्ण नियंत्रण में होती है और निद्रा में पूर्णतः आत्मा के। पूर्ण नियंत्रण अर्थात् पूर्ण अज्ञान।

नियंत्रण अर्थात् आदेश पालन। नियंत्रण अर्थात् अवलोकन की संभावना नहीं। नियंत्रण अर्थात् विवेक की महत्ता नहीं।

***

संसार में दो तरह के दृष्टिकोण मिलेंगे–

1. जिनकी रुचि खुद पैदा करके पालने में है। 2. जिनकी रुचि पालने में है। इनके लिये ये महत्वपूर्ण नहीं कि पैदा किसने किया।

***

हमें लगता है कि शुक्राणु बीज है, परंतु वास्तविक बीज है जीवात्मा।

***

अपनी शक्तियाँ अपने पास होना ही सबसे बड़ा सुख है और इन शक्तियों का खर्च/समाप्त हो जाना ही सबसे बड़ा दुख।

***

समय के चक्र से जुड़े रहने का, सबसे अच्छा तरीका है काम।

***

ये जगत् एक बहुरूपिया खेल है। इसमें व्यक्ति जो नहीं है, वही दिखने की कोशिश करता है और इसी प्रयास में, वो अन्य बहुरूपियों से सम्बन्ध बनाता है। इस खेल का अंत तब होगा, जब चेतना परम चेतना में विलीन होगी।

***

भारत में ईश्वर की खोज मूर्तियों से प्रारंभ होती है, क्यूँकि वे मनुष्यों से ज्यादा पवित्र हैं। उनमें मन, बुद्धि और अहंकार का अभाव है। मूर्तियाँ मनुष्य की खोज पूरी तो नहीं करतीं।

मगर हाँ, उन्हें बल अवश्य देती हैं। अंततः मनुष्य सत्य की खोज, अपने भीतर ही पूरी करता है।

***

हम इस जगत् में इससे सम्बन्ध जोड़ने नहीं, बल्कि इसमें रहते हुए इससे सम्बन्ध तोड़ने आए हैं।

***

पूरे अखबार के सोलह पृष्ठों में से पन्द्रह पृष्ठ, मन और बुद्धि की बात करते हैं। सिर्फ एक पृष्ठ जो अध्यात्म का है, वो मन और बुद्धि के परे की बात करता है।

***

हम शक्ति से जुड़े हैं और शक्ति खोज रही है, शिव को। जब तक ये खोज जारी है, तब तक सुख कहाँ?

***

काम सुख नहीं, सुख के छींटे हैं।

***

योगी के लिये काम सुख नहीं, सुख की हत्या है।

***

गृहस्थ चरम सुख ढूँढ रहा है और सन्यासी परम् सुख। गृहस्थ महत्वपूर्ण होना चाहते हैं और सन्यासी तत्वपूर्ण।

***

शिव ही शिखर हैं और इस शिखर के आगे है अनन्त।

***

दौड़ समय से समय तक है। समय के पूर्ण बोध में स्थिति से, समय का बोध खो देने तक की।

***

बुद्धत्व से शिवत्व की यात्रा, अपना नियंत्रण पूर्णतः अपने हाथ में लेने की यात्रा है।

***

'इच्छाशक्ति' सेनापति है तो 'ओज' सैनिक। इच्छाशक्ति ओज के माध्यम से ही, मन पर विजय हासिल करती है। 'इच्छाशक्ति' के कमजोर पड़ने पर, मन इसी 'ओज' का प्रयोग चेतना के विरुद्ध करता है।

***

अनुभव भविष्य हेतु है और अनुभूतियाँ वर्तमान हेतु।

***

एकान्त चेतना का भोजन है।

***

मन – प्रश्न पूछता है।

चेतना – खोजती है, क्यूँकि वह शक्ति से बँधी है।

आत्मा – उत्तर देती है।

***

मनुष्य आता दक्षिण दिशा से है और लौटता भी दक्षिण से ही है। योगी आता दक्षिण से है परन्तु लौटता उत्तर से है। दक्षिण से उत्तर, यही है मानव की जीवनयात्रा।

***

मूर्ति में वो जड़ रूप में हैं। सभी प्राणियों में वे चैतन्य रूप में हैं। मूर्ति से अमूर्ति तक। हम मूर्ति पूजा इसलिए करते हैं क्यूँकि हम जब बाहर देखते हैं तो मन के चश्में से गुजरकर ही बाहर देखना होता है। इसी कारण बाहर उनका, पदार्थ स्वरूप 'विग्रह' बनाया जाता है।

***

ऐसे व्यक्ति जो शरीर में रहते हुए भी, आत्मा जितने ही उन्नत हैं, प्राप्त होने बड़े कठिन हैं। यदि वे हमें मिल भी जाएँ तो हमारा मन, उन्हें स्वीकार नहीं करता। इस दशा में काम आते हैं वे 'मार्गदर्शक' जो शरीर छोड़ चुके हैं। मन का उनसे कोई विरोध नहीं। वे अपनी किताबों द्वारा मनुष्यों की मदद करते हैं और खोजी उनकी मदद लेते हैं।

***

सनातन धर्म व हिन्दू धर्म :

सनातन धर्म	हिन्दू धर्म
वास्तविक धर्म	सामाजिक धर्म
वेद, उपनिषद पर आधारित	पुराणों पर आधारित
आश्रम व्यवस्था का सम्मान	आश्रम व्यवस्था की अनदेखी
ज्ञान काण्डिय पक्ष	कर्म काण्डिय पक्ष
कर्म आधारित जाति व्यवस्था	जन्म आधारित जाति व्यवस्था
वेदों द्वारा स्थापित	समाज द्वारा स्थापित
जातिवाद से मुक्त	जातिवाद से ग्रसित
छुआछूत से मुक्त	छुआछूत से ग्रसित

चेतना पर कार्य	व्यक्तित्व पर कार्य
ब्रह्म, प्रमुख ध्येय	ब्रह्म की उपेक्षा
सत्य की प्रधानता	देवताओं की प्रधानता
धर्म को जानने का प्रयास	मानने का प्रयास
मोक्ष चरम और इसके हेतु सतत् प्रयास	स्वर्ग चरम, परन्तु इसके हेतु उत्कण्ठा नहीं, पुण्य प्रधान
प्रकृति की समझ	प्रकृति से सम्बन्ध विच्छेद
गुणों के उल्लंघन की यात्रा	गुणों की यात्रा

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

***

हम सभी यहाँ अपने-अपने तरीके से, एक दूसरे की सहायता करने को हैं। कोई यह काम धन के माध्यम से करता है, कोई सेवा से, कोई कर्मयोग के माध्यम से, तो कोई स्वयं को प्राप्त ज्ञान के माध्यम से। बुद्ध भी किसी की सहायता बोध के माध्यम से करते थे, तो कोई उनकी सहायता भोजन देकर करता था।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

अभिभावक वे हैं, जिनके आसपास रहने पर हम भाव में स्थित रहते हैं। जैसे माता-पिता के आसपास रहने पर सुरक्षा का भाव, आत्मियता का भाव।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

बाहरी रोशनी से हम आसक्त हैं और अंधेरे में असहज व डरे हुए। जब हम अंधेरे के साथ सहज और निर्भीक हो जाते हैं, तब हम अपने आंतरिक प्रकाश के साथ साम्य में होते हैं और अंधेरे में हम विलीन होने को तैयार होते हैं।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

पहले पदार्थ की तीन अवस्थाएँ ज्ञात थीं और जीवन के चार आयाम – मन, बुद्धि, अहंकार और चेतना। अब पदार्थ की चार अवस्थाएँ ज्ञात हैं और जीवन के मात्र तीन आयाम माने जाते हैं – मन, बुद्धि और अहंकार। अब हर एक व्यक्ति अपने जीवन में इसी चौथे आयाम को ढूँढ रहा है। जो है 'चेतना'।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

वृक्षों से फल लेने जाओ तो वे साथ में छाया भी बिन माँगे दे देते हैं।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

जैसे पानी ह्यूमन वेस्ट को फ्लश कर देता है, वैसे ही आँसू भावनात्मक वेस्ट को फ्लश कर देते हैं।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

ईश्वर अर्पित किए गए प्रसाद को नहीं, प्रसाद के साथ अर्पित भाव को ग्रहण करते हैं।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

सत्य की खोज एक ऐसा जंगल है, जिसमें घुसने वाला खोजी कभी बाहर नहीं आना चाहता। उसके अंदर कमियाँ भी होती हैं, लेकिन उन कमियों से लड़ता हुआ, वो भीतर ही बने रहना चाहता है। सत्य की ओर जाने वाला खोजी, अपनी कमियाँ लेकर ही जाएगा। अपनी कमियों से लड़ने की ताकत भी वो ब्रह्माण्ड से ही प्राप्त करता है, जैसे भोजन शक्ति। ऐसा वह ब्रह्माण्ड से एकाकार हो जाने हेतु करता है।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

दो चेतनाओं के बीच की भाषा है, प्रेम। चेतना और शुद्ध बुद्धि के बीच की भाषा है, बोध। जीवात्मा और जीवात्मा के बीच की भाषा है, मोह और दो व्यक्तियों की बीच की भाषा है शब्द और वाक्य।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

प्रवचन चेतना द्वारा जीवात्मा हेतु होता है।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

जन्मदिन पर प्राप्त उपहार की ही तरह, हर व्यक्ति को अपने जीवन में, भाग्य से बहुत उपहार मिलते हैं। जिन्हें जीवन में ज्यादा उपहार मिले हैं, उनके पास दो रास्ते हैं। पहला, कि वे जीवन में उपहारों को खोलकर देखते रहें और उसी में व्यस्त रहें। दूसरा, कि वे उपहारों से ऊब कर अब खोजना प्रारंभ करें। जिन्हें जीवन में कम उपहार मिले हैं, उनके पास भी दो रास्ते हैं, पहला कि वे उन थोड़े से उपहारों को ही सहेज कर रखें और सोचते रहें कि कम क्यूँ मिला? और दूसरा कि वे खोज पर निकल जाएँ। उनके पास पूरी दुनियाँ है खोज लेने को।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

जो नहीं मिला, उसके बारे में क्या जानूँ? जो मिला है, उसे तो सहेज लूँ और आगे बढ़ा दूँ।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

परीक्षा हमारी इच्छाशक्ति की जाँच हेतु होती है।

***

बुद्धि का उतना ही उपयोग ठीक है, जो आवश्यकता पूरी करने हेतु हो। बुद्धि जब इच्छाओं को पूरी करने में लग जाती है तो समस्या बन जाती है।

जब हम खाली हाथ आते हैं और खाली हाथ ही जाते हैं, तो जीवन में पाने योग्य है क्या? और जीवन में आने का मतलब क्या हुआ? जीवन में पाने योग्य है 'आत्म'/'स्वयं' और जो इसे पा लेता है, उसे व्यर्थ की वस्तुएँ आसपास जमा करने की आवश्यकता नहीं।

***

जब मैं स्वयं को जानूंगा, तभी तो जान पाऊँगा कि मेरा वास्तविक प्रेमी कौन है। जब तक स्वयं को नहीं जानता, तब तक तो बस भ्रम की स्थिति है।

***

जो करीब है, वो गरीब कहाँ?

***

हर मनुष्य (पुरुष या स्त्री) स्वतंत्र रूप से बिना सम्बन्ध बनाए, संतान पैदा कर सकता है। यह शरीरी शिशु नहीं, अशरीरी शिशु होता है। हर साधक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए इसी संतान को जन्म देने का प्रयास करता है। ये शिशु ही उसकी साधना का फल है। इस

अशरीरी शिशु को पाने के बाद, किसी शरीरी शिशु को उत्पन्न करने की आवश्यकता नहीं होती क्यूँकि इस चेतना रूपी शिशु को प्राप्त करने के पश्चात् हर प्राणी आपका अपना शिशु होगा। इसके जन्म के पश्चात् व्यक्ति की सारी शक्ति, इसी शिशु के पीछे एकत्र हो, इसे इसके गंतव्य तक पहुँचाती है। इस बच्चे का नाम है 'चेतना'। ये शिशु जिस किसी के भी शरीर में जन्म ले, उसका नाम यही होता है।

और यहीं से हमारी विषमता से समता तक की यात्रा प्रारंभ होती है। काम से आप शरीरी शिशु उत्पन्न करते हैं और ब्रह्मचर्य से आप अशरीरी शिशु को जन्म देते हैं। हमारे शरीर में बैठे शिव और शक्ति मिलकर इस 'चेतना' को जन्म देते हैं। जिस प्रकार बच्चा माँ के शरीर से नाल से जुड़ा होता है और नाल के कटने पर ही वह माँ के शरीर से अलग हो पाता है। वैसे ही चेतना भी मूलाधार से कुण्डलिनी शक्ति से जुड़ी होती है। यही शक्ति जब शिव से मिलती है, तब कुण्डलिनी शक्ति चेतना को मुक्त कर शिव से जुड़ जाती है। इस प्रकार चेतना इस शक्ति रूपी नाल से मुक्त होती है और जन्म प्राप्त करती है।

धर्मशास्त्रों में वर्णित 'पुत्र', जिसके जन्म लेने पर पिता मुक्ति प्राप्त करता है। यही 'चेतना' वह पुत्र है। सामाजिक तौर पर 'पुत्र' को 'नर' जीव मान लिया गया। सत्य की मायार्थ परक विवेचना भी तो 'माया' ही है। गृहस्थ शरीरी बच्चे को जन्म देते हैं और साधु अशरीरी बच्चे को। ये वो बच्चा है, जो इस पार से उस पार जा सकता है। समय की नदी के उस पार तैर सकता है।

***

गाय ही वैतरणी पार क्यूँ कराएगी?

गाय, प्रकृति का जीवित स्वरूप है। प्रकृति अर्थात् शक्ति। यह संयोग नहीं कि बुद्ध, महावीर और ओशो ने प्रकृति के माध्यम से ही वर्तमान में प्रवेश किया। प्रकृति के माध्यम से ही सृष्टि प्रदत्त रहस्यों को समझा जा सकता है। प्रकृति प्रदत्त रहस्यों को जानकर, उन्हें स्वयं में

आत्मसात करना अर्थात् गाय की पूँछ पकड़ लेना। प्रकृति के इस छोर पर वर्तमान है और उस छोर पर चैतन्य। प्रकृति सत्य का विस्तार है। इस प्रकार प्रकृति के साथ यात्रा ही, वैतरणी पार की यात्रा है।

***

अपने भीतर के खालीपन को भरने के लिए, हम अपने घर को भरते हैं।

***

अहंकार हमारे और ब्रह्माण्ड के बीच की दीवार है। जब तक यह खड़ी है, हम ब्रह्माण्ड से कटे हुए हैं। हमारा ब्रह्माण्ड से कटे होना अर्थात् हमारी स्वतंत्र सत्ता होना ही हमारी सबसे बड़ी समस्या है। जब तक यह दीवार है, हम अकेले हैं। जैसे ही दीवार गिरी, आपको आपका परम् प्रेमी मिला। इसके आगे चेतना और चैतन्य के बीच का रास।

***

व्यक्ति जिस चरण पर होता है, अपने बच्चे को कम से कम उस चरण तक पहुँचाना चाहता है। जैसे कि धन, बुद्धि, सम्मान, सफलता। विनोबा की माँ ने उन्हें ब्रह्मज्ञानी बनने को कहा। इससे आप उनकी माता कि आंतरिक समृद्धि के बारे में समझ सकते हैं।

***

स्त्री और पुरुष मिलकर ही संतान पैदा करते हैं लेकिन यह जानना होगा कि ये स्त्री और पुरुष हैं कौन?

***

वर्तमान, अतीत और भविष्य से थोड़ा ऊपर है। इसी संरचना के कारण, वर्तमान में कुछ रुकता नहीं। गिरकर अतीत और भविष्य में पहुँच जाता है।

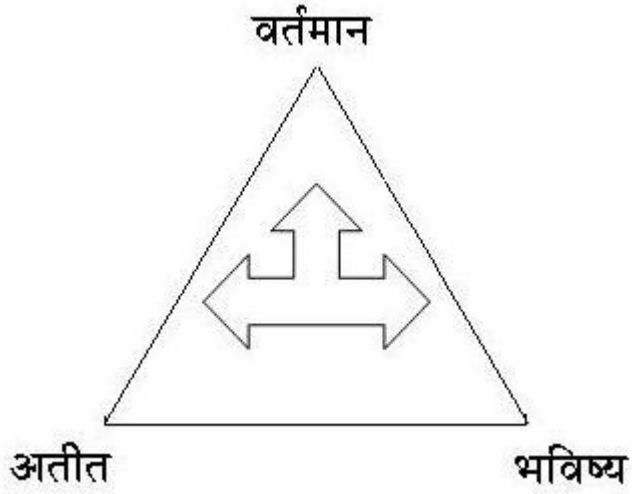

***

हम हमेशा शक्ति की गोद में हैं। इसी कारण शक्ति ही हमारी माँ है।

***

जीवन में संचय करने योग्य है, इच्छाशक्ति।

***

भीड़भाड़ भरी जगहों पर, ओंकार पर ध्यान केन्द्रित कीजिए।

***

बुद्धि की रचना ईश्वर ने इसलिए की कि हम पदार्थ के मध्य स्वयं को संभाल सकें। परंतु बुद्धि पर अति निर्भरता ने हमें पदार्थ से बाँध दिया और ब्रह्माण्डिय चेतना से दूर कर दिया।

***

पिता पर्वत पर रहते हैं और माँ मैदानी इलाकों में। माँ का शिखर पर पहुँच जाना ही जीवन की पूर्णता का संकेत है।

***

राम का सीता को त्यागना, लव-कुश के कारण था। राम सत्य रूप में शिखर पर स्थित तथा सीता शक्ति रूप में वन में स्थित। साधनारत दोनों चेतनाएँ (लव और कुश) व्यग्र और भ्रमित। अंतस में कई प्रश्नों को लिए। शक्ति शिव से और माता-पिता से मिल, सृष्टि के रहस्यों को जान पूर्ण होती है। और चेतना, प्रकृति अर्थात् माँ के माध्यम से सृष्टि के रहस्यों को जानती है।

***

गंगा, यमुना और सरस्वती अर्थात् सुषुम्ना, इड़ा और पिंगला। जिस प्रकार इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना मिलती तो हैं परन्तु आगे सिर्फ सुषुम्ना ही बढ़ती है। ठीक वैसे ही जैसे गंगा, यमुना और सरस्वती मिलती हैं परन्तु आगे दोनों, गंगा में विलीन हो जाती हैं।

***

कुंभ में तीनों धाराएँ मिलती हैं। धर्म, अध्यात्म और परम।

***

कुंभ की तीन धाराएँ –

कर्ता – गृहस्थ

दृष्टा – सन्यासी, संत

साक्षी – अधियज्ञ (परमात्मा)

***

विचार सतह पर उठने वाली लहरें हैं। जो सतत् उठती रहती हैं और गायब होती रहती हैं। अनुभूतियाँ तट पर आ चुके सीपी हैं, जिन्हें आप तुरंत या थोड़ी देर बार भी चुन सकते हैं।

***

प्रेम चेतना से प्राप्त होता है और काम व्यक्तित्व से।

***

उपलब्धियाँ दो तरह की होती हैं –

1. जिन्हें जीवन के साथ छोड़ना होता है।

2. जो अगले जीवन में साथ चली जाएँ।

***

स्वामी – जो इस जन्म में स्वामित्व के निकट है। वह अगले जन्म में नियत समय पर, स्वामित्व प्राप्त कर लेगा।

***

जिस सत्य को हजारों साल पहले ऋषियों-मुनियों ने प्राप्त किया। उसी सत्य को हजारों साल बाद अन्य सत्यान्वेषी प्राप्त करेंगे। सत्य समय के साथ बदलता नहीं। समय बदलता रहता है, सत्य स्थिर है। ठीक वैसे ही, जैसे मथनी स्थिर और मथा जाने वाला दूध, दही अस्थिर।

***

यदि कोई आपके प्रति अपनी जिम्मेदारी पूरी कर रहा है, तो ब्रह्माण्ड का यह आपको संकेत है कि आप अपने प्रति अपनी जिम्मेदारी पूरी करें। इसे पूरा करने के पश्चात् आप, ब्रह्माण्ड के प्रति अपनी जिम्मेदारी पूरी कर सकते हैं।

***

शब्दहीन संगीत चेतना के लिए है और गाने व्यक्तित्व के लिए।

***

प्रकृति के चक्र के साथ ही, दैव का चक्र भी चलता रहता है। प्रकृति का चक्र दृश्य है। दैव का अदृश्य।

***

ओज की सीढ़ी पर चढ़कर ही, आप प्रकृति के रहस्यों तक पहुँच सकते हैं।

***

ओज खर्च करने के मार्ग - काम, क्रोध, लोभ, मोह।

***

ज्ञान प्राप्ति के क्षण में, आपको अंतःकरण का एक भाग समाप्त हो जाता है और एक भाग जन्म लेता है। नश्वर भाग विलीन हो जाता है और शाश्वत भाग जन्म लेता है।

***

बाहरी ध्वनियाँ दो प्रकार की होती हैं।

1. पदार्थिक ध्वनियाँ, 2. प्राकृतिक ध्वनियाँ।

***

सभी पदार्थिक ध्वनियाँ बंधन का कारण हैं। वे चेतना को नीचे की ओर खींचती हैं। सभी प्राकृतिक ध्वनियाँ स्वतंत्रता की कारक हैं। इन्हें सुनकर तैरने या उड़ने की अनुभूति होती है। नाद इस नियम का उल्लंघन करता है। यह उत्पन्न होता है पदार्थ से (घंटा, घंटी) परंतु स्वतंत्र करता है चेतना को।

प्रयत्न अर्थात् वाह्य बल व ऊर्जा का उपयोग तथा ओज का क्षय। तप अर्थात् वाह्य अनावश्यक ऊर्जा का क्षय और ओज में वृद्धि।

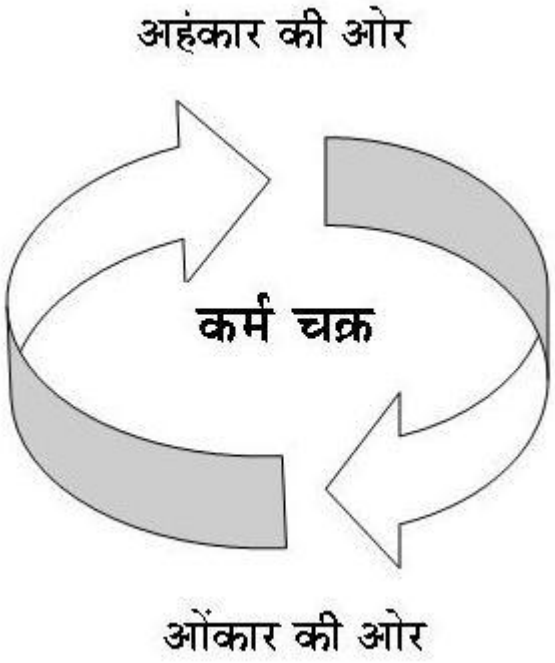

चमत्कार शक्ति से आकार लेते हैं। उन्हें करने हेतु शक्ति व्यय करनी होगी। इस समय दुनिया को चमत्कारों की नहीं, सत्य की आवश्यकता है।

***

ओज गुरुत्व के विरुद्ध उठता है और ऊर्जा गुरुत्व की ओर गिरती है।

***

अपने मन से लड़ने हेतु शक्ति चाहिए और दूसरे के मन से लड़ने हेतु बल।

***

आम पाने के लिए पेड़ के पास जाना होगा। बाज़ार से आम पाए नहीं जा सकते। बाजार से उन्हें सिर्फ खरीदा जा सकता है। ठीक उसी प्रकार, बाजार से सुख बस खरीदा जा सकता है। उन्हें पाया नहीं जा सकता। उन्हें पाने हेतु शान्ति के पेड़ लगाने होंगे। क्यूँकि सुख, शांति के पेड़ पर उगने वाला फल है। जिसके पास पेड़ है, वह आनंद में है क्यूँकि

वह फल भी पाता है और वृक्ष की छाया भी। साथ ही पेड़ पर चहकने वाली चिड़ियों की चह-चहाअट भी। अभी हम बाजार में खड़े, सुखों को खरीद रहे हैं। इसी कारण शांति से दूर हैं। थोड़े-थोड़े मिलने वाले सुख पर हम आश्रित हैं। जिस दिन हमारी खरीदने की क्षमता या सामर्थ्य नहीं रहेगी। उस दिन हमारे पास न सुख ही होगा, न शांति ही। और उस वक्त धूप में खड़े तपना होगा।

***

सामान्य व्यक्ति का युद्धक्षेत्र बाहर है और बुद्ध व्यक्ति का युद्धक्षेत्र है भीतर।

***

शिवत्व ही समत्व है। शिवलिंग को छूने में न जाति, न धर्म, न गोत्र, न लिंग, न धन, न असमानता। किसी का भेद नहीं। शिव के पास पहुँचते ही सभी भेद समाप्त।

***

शिव को स्त्रियों से डर नहीं लगता। कोई भी स्त्री शिवलिंग तक बेहिचक जा सकती है। शिव माया का अतिक्रमण कर चुके हैं। बुद्ध उस बिन्दु तक पहुँचने की यात्रा पर हैं।

***

मनुष्य व बुद्ध :-

मनुष्य	बुद्ध
अपनी परिस्थितियों से लड़ता है।	अपने मन से
मन ही परम मित्र है	अनियंत्रित मन ही परम शत्रु है
अपनी चेतना को तपा रहा है।	अपने मन को तपा रहा है
लड़ाई बाहर चलती है, हार–जीत का पता	लड़ाई भीतर चलती है, हार–जीत का पता

समाज को होता है।	चेतना को होता है।
युद्ध का परिणाम जो भी आए, बंधन/ पराधीनता बढ़ जाती है।	युद्ध से स्वामित्व प्राप्त होता है।
अपनी इच्छाओं पर कार्य कर रहा है।	अपनी इच्छाओं के विरुद्ध लड़ रहा है।
कर्ता बन व्यस्त है।	उत्तर प्राप्त कर, परम कारण की ओर बढ़ रहा है।
बुद्धि मनुष्य को जानवरों से अलग करती है। मनुष्य को सफल बनाती है।	बुद्धि के मोह से पार चले जाते हैं।
मनुष्य एक व्यक्तित्व है	बुद्ध एक चेतना हैं
मनुष्य मन के बंधन में है	बुद्ध ब्रह्माण्ड से जुड़ने हेतु मुक्त हैं
दक्षिण की ओर जा रहे हैं	उत्तर की ओर जा रहे हैं
पृथ्वी से सम्बन्ध आवश्यकताओं और इच्छाओं का है।	मात्र आवश्यकताओं का
किनारे पर व्यापार में मग्न है।	मध्य में है। एक तरफ से प्राप्त कर दूसरी ओर दे रहे हैं।
महत्वपूर्ण है	बुद्ध सामान्य हैं
ढूँढ रहा है परंतु वह ये जानता नहीं	बुद्ध को मिल चुका है
घुमक्कड़ है	स्थिर हैं
मन और बुद्धि की चर्चा करता है।	मन और बुद्धि के पार की।
काम के छोर पर है	सोम के छोर पर हैं।
प्रेमी को ढूँढते हुए, शरीरों से सम्बन्ध जोड़ रहा है।	प्रेम को पहचानते हैं।

प्रेम शरीरों में ढूँढ रहा है	प्रेम पाकर बाँट रहे हैं।
महत्व पाने की इच्छा	समत्व पाने की इच्छा
प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष खोजी	खोज पूर्ण
एकांत समस्या	एकांत परम् आनन्द दायक
मृत्यु अर्थात् जीवन की समाप्ति। शोक और दुख का अथाह समुद्र	रूप परिवर्तन का उत्सव
गुरु उपलब्ध नहीं	गुरु अपने भीतर उपस्थित
मानता है कि आँखें देखती हैं	जानता है कि गुरु देखते हैं
भ्रमित	समाधान जानते हैं
सत्य से दूर, माया से बँधे	सत्य में स्थित, माया को दूर से देख सकते हैं परंतु युद्ध अभी समाप्त नहीं।
माता-पिता को मानते हैं	वास्तविक माता-पिता को जानते हैं
स्वयं को नहीं जानते	स्वयं को जानते हैं
खुद को नहीं पहचानते	हर मनुष्य और जीव को पहचानते हैं
इच्छाओं के लिए द्वंद जारी	इच्छाओं से द्वंद जारी
ऊर्जा प्रमुख	शक्ति प्रमुख
रचनाएँ ऊर्जा से आकार लेती हैं	रचनाएँ शक्ति से आकार लेती हैं सत्य के माध्यम स्वयं के बारे में ईश्वर की योजना से परिचित मन व बुद्धि से मुक्त
समत्व नहीं, सम्बन्ध प्रमुख	सम्बन्ध नहीं, समत्व प्रमुख शांति से परिचित

***

मृत्यु अर्थात् जेल से पैरोल पर रिहा होना।

***

पूरब व पश्चिम दोनों में एक बात सामान्य है कि दोनों ही खोजी स्वभाव के लोग हैं। पूरब प्रारंभ से ही खोज रहा था इसीलिये यहाँ गणित, विज्ञान, ज्योतिष शास्त्र, चिकित्सा पद्धति, आध्यात्मिकता पर काफी काम हुआ। खोजते-खोजते पूरब अपने प्रश्नों के कारण तक पहुँच गया। पश्चिम अभी उन प्रश्नों का कारण ढूँढ रहा था। इसी कारण अध्यात्मिकता भारत से पश्चिम में गई। भारतीय धर्म प्रचारक नहीं थे। इसी कारण वे वहाँ गए, जहाँ खोज हो रही थी अर्थात् पश्चिमी जगत् में।

***

साधना वन में क्यों?

क्यूँकि वन में चेतना हेतु सभी परिस्थितियाँ उपलब्ध। शांति, पक्षियों का कलरव, ताज़ी हवा का संगीत और प्रकृति।

***

चेतना का दृष्टा और कर्ता का चक्र चलता रहता है। शरीर मुक्त अवस्था में वह दृष्टा होती है और शरीर में वह एक कर्ता बन जाती है। यदि शरीर में रहते हुए हम दृष्टा बन सके, तो फिर कर्ता बनने की कोई बाध्यता न होगी।

***

हमारा स्वभाव ही हमारा वास्तविक धर्म है। इसे बाहर नहीं ढूँढना पड़ता। ये भीतर ही मिल जाता है।

***

ये दुनिया सामाजिक धर्मों की दुनिया है। लोग सामाजिक धर्मों को मानते हैं लेकिन पालन अपने स्वभाविक धर्म का करते हैं। इसी दुनिया में कुछ लोगों का, धर्म से उन्नयन कर, आध्यात्मिक जगत् में प्रवेश करा दिया जाता है। इन्हें समाज में एक माध्यम के रूप में रोक दिया जाता है। ये दृष्टा बनकर प्रकृति के रहस्यों व नियमों का समाज को स्पष्टीकरण देते हैं। ये जीवों और उनके गुरु के बीच के माध्यम का भी काम करते हैं। प्रकृति और समाज के बीच की खाई को पाटने का काम करते हैं। ये आपको और आपके गुरु दोनों को जानते हैं।

***

बाहरी जो भी गुरु आप प्राप्त करते हैं, वे वास्तव में गुरु नहीं, बल्कि आप और आपके गुरु के बीच के माध्यम हैं। ये आपको आपके गुरु से मिलने को तैयार करते हैं। गुरु बस एक है। सबका गुरु भीतर है। गुरु योग प्राप्ति पर मिलते हैं।

***

काम से ज्यादा संतुष्टिदायक काम का विचार है। काम सम्बन्धी विचारों के कारण चित्त में चित्र चलते रहते हैं। जिससे प्रेरित होकर मनुष्य बाहरी चित्रों या फिल्म तक पहुँच बनाता है। विचारों के दौरान पूरी ऊर्जा एक तरफ केन्द्रित होती है। वहीं काम के दौरान मुख्य ऊर्जा क्रिया में और शेष विचारों को मिलती है। काम क्रिया के दौरान विचारों को पूरी ऊर्जा स्खलन के दौरान मिलती है। मन के एक दिशा में केन्द्रित हो जाने के कारण ही पोर्नोग्राफी इतना बड़ा व्यवसाय है। काम के दौरान शरीर की दुर्गंध आपको परेशान कर सकती है,

परन्तु विचारों में यह दुर्गंध भी मिट जाती है। इस प्रकार स्त्री शरीर के आकर्षण को मन, कई गुना बढ़ा कर प्रस्तुत करता है। आकर्षण स्त्री शरीर का नहीं, मन का उसे एक हथियार के तौर पर उपयोग करने का है। इसी कारण काम से दूरी, आप ज्यादा सहजता से बना सकते हैं। परंतु काम सम्बन्धी विचारों से लम्बी लड़ाई लड़नी पड़ती है।

***

साक्षी का संदेश, दृष्टा भाव में ही सुना जा सकता है। जैसे कोच का संदेश खिलाड़ियों के लिये है। कर्ता बने रहकर साक्षी से सम्बन्ध जुड़ना संभव नहीं। दृष्टा अर्थात् बाहर - भीतर की पूर्ण शांति।

***

दुनियाँ जीतने से कोई लाभ नहीं। ये दुनिया आपका भाग नहीं। इसे जीतकर आप करेंगे भी क्या?

***

एकान्त में ही दृष्टा और साक्षी मिल पाते हैं। दो प्रेमी मिल रास रचाते हैं। इसी कारण सत्यान्वेषी एकांतप्रिय होते हैं। एकांत में ही शिव और शक्ति भी मिलते हैं। चेतना और चैतन्य संवाद भी एकांत में ही होता है।

***

मनुष्य के लिए प्रकृति विजातिय है और चेतना के लिए प्रकृति सजातिय। मनुष्य के लिए मनुष्य सजातिय है और चेतना के लिए मनुष्य विजातिय।

***

हमारा सामाजिक और पारिवारिक भोजन, नमक और चीनी के बिना पूरा ही नहीं होता।

***

जिस प्रकार पृथ्वी पर सभी की ऊर्जा का स्रोत एक ही है, जो है सूर्य। वैसे ही सभी सत्यान्वेशियों के शब्दों का स्रोत भी एक ही है, जो है चैतन्य।

***

हमें हमारे जीवन का लक्ष्य एकांत में मिलता है। जैसे विवेकानन्द, मदर टेरेसा, महर्षि अरविन्द, महर्षि रमण इत्यादि के साथ एकांत में ही ये घटना घटी। इसलिए एकांत से भागिये मत। आपको आपके लक्ष्यों से परिचित करवा सकता है।

***

पदार्थिक और चैतन्य जगत् के बीच अध्यात्म खड़ा है। यही दोनों जगत् को जोड़ने का कार्य करता है।

***

कई अध्यात्मिक व्यक्ति, अपने जीवन में पुस्तकों को आकार देते हैं। वे बस आकार देते हैं। उन पुस्तकों के माध्यम बनते हैं। उन सभी को लिखने वाली शक्ति बस एक है। ईश्वर इन पुस्तकों को समाज में भेजते हैं, ताकि उनकी मदद की जा सके जो अपनी मदद करना चाहते हैं।

***

जब हम अपने इस जन्म को देखते हुए, कोई निष्कर्ष निकालते हैं तो वह अपूर्ण होता है। क्यूँकि हम चित्र का एक टुकड़ा मात्र देख रहे होते हैं। हर जन्म में ये अपूर्णता हमारी नियति होती है और इसी कारण हम भ्रमित और व्यग्र रहते हैं। गीता वह माध्यम है, जिसके द्वारा इस तस्वीर को, हम पूर्ण करने की अंतर्दृष्टि प्राप्त करते हैं।

***

मेरा काम चैतन्य के रत्नागार से रत्न चुनना है और उसे दुनिया की ओर उछाल देने का है। अब जो भी चाहे, उसे लपक सकता है।

***

चेतना और चैतन्य का मिलन ही रास है। चेतना राधा है और चैतन्य कृष्ण। राधा, कृष्ण को सिर्फ प्रेम द्वारा ही आकर्षित कर सकती है। दोनों के मिलने पर जो वातावरण उपस्थित होता है, वही है आनंद।

***

जल तो रहे ही हैं तो क्यूँ न तप ही लें।

***

मनुष्य की जीवन यात्रा : पदार्थ, चेतन, चैतन्य।

***

वाह्य नेत्र माया हेतु। चित्त नेत्र का उपयोग कामना करती है। आंतरिक नेत्र मात्र प्रकृति व सत्य हेतु।

***

ब्रह्माण्ड में प्रकृति अर्थात् पृथ्वी ; प्रकृति में ब्रह्माण्ड अर्थात् शरीर।

***

यह माया ही है, जो शुद्ध चेतना को पुरुष या स्त्री के रूप में परिवर्तित कर देती है।

***

किसी भी बुद्ध की यात्रा बुद्धत्व पर समाप्त नहीं होती। उसकी यात्रा शिवत्व प्राप्त कर चैतन्य में विलीन हो जाने की है।

***

यदि भ्रम से प्रेम करोगे, तो अंत में भ्रम ही मिलेगा। यदि कृष्ण से प्रेम करोगे, तो अंत में आत्मज्ञान मिलेगा।

***

इस सृष्टि का एक ही नियम है। जो चाहो, वो मिलेगा। कुछ न चाहो, तो ज्ञान मिलेगा। मिलना तय है।

***

पुरुष को सत्य प्राप्त करने के लिए तप कर, शक्ति में वृद्धि करनी होती है। स्त्री तो स्वयं शक्ति स्वरूपा है। उसे बस आंतरिक रूपान्तरण की आवश्यकता है। वह अपने भीतर की माया को धीरे-धीरे शक्ति में परिवर्तित कर, शिव को प्राप्त कर सकती है।

***

जो एकान्त में मिलेगा – अनुभूति से मिलेगा। (स्थायी निधि)

वही वेदान्त में मिलेगा – विद्या से। (अस्थायी निधि)

और वही देहान्त में मिलेगा – अनुभव से। (अथायी निधि)

***

दृष्टा देख सकता है कि क्या बाहर से आ रहा है और क्या भीतर से। कर्ता के पास यह सुविधा उपलब्ध नहीं है।

***

भ्रम के उस पार और इस पार, दोनों ही पार शांति है। शांति अर्थात् भ्रम की समाप्ति। दोनों पार, अलग-अलग मार्गों से प्राप्य हैं। अपने लिए उपयुक्त दिशा की तलाश करने हेतु 'विवेक' की आवश्यकता होगी।

***

चेतन के प्रभाव में, हम सृष्टि के उस पक्ष के लिए जाग्रत होते हैं, जो परिवर्तनशील है। जो स्थिर नहीं। यदि स्वप्न अतिक्षणिक है, तो हमारे चारों ओर की संरचना और शरीर क्षणिक।

***

स्वप्न : अर्थात् चेतन मन का मात्र कुछ अंश सक्रिय होना।

***

जीवन के 2/3 भाग में चेतन मन सक्रिय होता है। जो शेष 1/3 भाग अर्थात् रात में विश्राम करता है। इसी कारण जीवन प्रदीर्घ स्वप्न है। स्वप्न अब चेतन से जुड़ा है। स्वप्न और जीवन दोनों ही क्रियाशील हैं। बस स्वप्न का कार्यक्षेत्र चित्त है और जीवन का कार्यक्षेत्र धरती है।

***

जलन (ताप) जलाती है और तप सिंकाई करता है। जलन से जीव कष्ट का अनुभव करता है और सिंकाई से आराम पाता है।

***

चेतना के प्रभाव में हम सृष्टि, उसके रहस्यों, उसके नियमों के प्रति जाग्रत हो उठते हैं।

***

रहस्य वो नहीं, जिसे धरती में गाड़ा गया या फिर ताले या लॉकर के पीछे छिपाया गया। रहस्य पदार्थ के पीछे नहीं, पदार्थ की परिधि से बाहर है।

***

सृष्टि के रहस्य माया को नहीं बताए जाते। वास्तव में माया को इन रहस्यों से कोई लेना-देना नहीं। उसके पास अपने उपकरण हैं और वह अपना प्रदर्शन पूरे मनोयोग से करती है।

***

भीड़ में बुद्धि चलती है और एकांत में चेतना।

***

कृष्ण – राधा के रास का अर्थ क्या?

चेतन – चैतन्य का मिलन। परम् और परा का मिलन।

***

गंगा का स्वर्ग से वेग से उतरना। शक्ति का वेग से ऊपर उठना और शिव का सहस्त्रार पर उन्हें धारण करना।

***

गंगा माँ क्यों?

गंगा अर्थात् कुण्डलिनी शक्ति। क्यूँकि यही शक्ति चेतना को धारण करती है, इसी कारण वह माँ है।

***

काम ऊर्जा के रूपान्तरण से ही स्वाधिष्ठान होता है।

***

मनुष्य एक ही समय में, एक प्राणी से काम और दूसरे से प्रेम कर सकता है। ठीक वैसे ही जैसे हम समाजिक से सम्बन्धों से जुड़े होकर भी, ईश्वर से शुद्ध प्रेम कर सकते हैं। काम और प्रेम दोनों बिल्कुल अलग-अलग हैं। काम मिश्रित प्रेम अर्थात् जैसे खट्टा दही, बासी भोजन तथा ठंडी चाय।

***

दृष्टा बनने की सलाह क्यूँ दी जाती है?

क्यूँकि हम अपने हर जीवन में सीखते हैं। दृष्टा बने रहकर हम तेजी से सीखते हैं। कर्ता के सीखने की गति धीमी होती है। इस प्रकार दृष्टा एक जीवनकाल में कई जन्मों का काम पूरा कर सकता है।

***

अधिकारों की इच्छा, कर्तापन को निमंत्रित करती है और एक कर्ता कभी शांति नहीं प्राप्त करता। यदि शांति नहीं, तो सुख कहाँ? दृष्टा शांत है। जो शांत है, वही सृष्टि के रहस्यों को प्राप्त करता है। जो शांत है, वही सत्य को प्राप्त करता है। सत्य की प्राप्ति ही, ब्रह्माण्डिय शांति का द्वार खोलती है।

***

जानवर भी इंसान की ही तरह, अपने क्षेत्र पर अधिकार के विचार से ग्रस्त हैं। अधिकार का विचार अर्थात् मन की उपस्थिति। वृक्ष इस समस्या से मुक्त हैं।

***

जानवर और इंसानों में एक अंतर है। इंसान जानवर को देखकर सोचते हैं कि हम इन्हें खाकर इनकी संख्या नियंत्रित रखने में सहयोग करेंगे। हम नहीं करेंगे तो कौन करेगा इसे?

जानवर अलग हैं। इंसानों की बढ़ती जनसंख्या देखकर भी, वे नहीं सोचते कि इन्हें खाकर हम इनकी जनसंख्या नियंत्रित करने में सहयोग करेंगे। शायद वे हमसे बेहतर जानते हैं कि ये किसका काम है। ये काम है प्रकृति का। पर्यावरण में कैसे संतुलन रखना है, वो ये काम बखूबी जानती है। यदि कोई एक प्रजाति खतरनाक स्तर तक बढ़ती है, तो वो उन्हें निर्ममता से नियन्त्रित करना जानती है। प्रकृति माँ है और सभी उसके लिए एक समान हैं। कीड़े से लेकर मनुष्य तक। बस यही एक बात मनुष्य की समझ से परे की है। वो समानता नहीं जानता। वो जानता है तो मात्र महत्व।

***

दृष्टा बनते ही, हमारी सीखने की प्रक्रिया तेज हो जाती है। क्यूँकि तब हमें आंतरिक माँ और पिता दोनों का सहयोग मिलता है। दोनों से ही हम जुड़ जाते हैं।

***

जीवन में तीन प्रकार के लक्ष्य हैं –

1. जो बाहरी लोग हमें देते हैं। 2. जो हमारा मन हमें देता है। 3. वे लक्ष्य जो हमारी चेतना के हैं, जो चैतन्य से हमें प्राप्त होते हैं।

***

स्त्री-पुरुष के मिलने पर आनंद मिलता ही है। अपने भीतर के स्त्री-पुरुष को मिला सदैव आनंद में रहने की व्यवस्था कर लो।

***

मैं जो हूँ, उसके बारे में मुझे स्वतः ही पता चल जाना चाहिए। जिसके बारे में मैं जानता ही नहीं, वो मैं कैसे हो सकता हूँ? अर्थात् शरीर।

***

यदि इस एक क्षण में, आप मन और बुद्धि से परे हैं तो आप वर्तमान में हैं।

***

ओज चेतना का भोजन है।

***

बुद्ध ही दृष्टा हैं। दृष्टा ही बुद्ध हैं।

***

साक्षी अंतर्यामी है। दृष्टा अंतःयामी।

***

अपनी शक्ति की रक्षा करना ही 'क्षेम' है।

***

कर्म अर्थात् अपनी शक्ति की, अपने मन के यज्ञ में आहूति।

अकर्म : अपनी शक्ति की ब्रह्माण्डिय यज्ञ में आहूति।

विकर्म : अपनी शक्ति की, दूसरे मन के यज्ञ में आहूति।

***

बुद्धि ही इस शरीर को जानती है और इसके सम्बन्ध में अनुसंधान कर इसे और जानने का प्रयत्न करती है। शरीर को जानने हेतु, बुद्धि को विकसित करना जरूरी है।

***

कर्ता और दृष्टा में मुख्य अंतर यह है कि कर्ता अपनी शक्ति को नहीं जानता और दृष्टा अपनी शक्ति को जानता भी है और उसे संरक्षित करने का प्रयत्न करता है।

***

रागी आपका मन है। वैरागी आप हैं।

***

शक्ति + सूर्य की ऊर्जा + गुण = कर्ता

चेतना + शक्ति = दृष्टा

***

यदि अपने काम से छुट्टी लेने की, आपको कोई जरूरत न महसूस होती हो तथा आप अपने कार्य में ही पूर्णतः मग्न हैं, तो आप अपने 'सहज' क्षेत्र में हैं।

***

पहले पहल चेतना ने एक बच्चे को पैदा किया। बच्चा जब चेतना को पैदा कर देता है, तब चक्र पूरा होता है।

***

जिस दिशा से मल निकलता है। शरीर भी उसी दिशा से उत्पन्न होता है। चेतना उससे ठीक विपरीत दिशा से निकलती है।

***

धरती की शक्ति ही हर नशे का कारण है। तंबाकू, ताड़ी, अफीम, शराब, सुपारी सभी। वही शक्ति हमें भोजन से प्राप्त होती है। शक्ति को सीधे नशे में बदलने का उपाय ढूँढ लो।

***

जीव के पास धन है, चैतन्य के पास शक्ति।

***

शक्ति ही शांति है।

***

प्रत्येक जन्म में हम कुछ खोते हैं और कुछ पाते हैं। खोते हैं कुछ इच्छाओं को और पाते हैं थोड़ी संतुष्टि को।

***

दुनियाभर के बुद्धिमान मनुष्य, उस व्यक्ति की ओर आकर्षित होते हैं, जो बुद्धि की बातें बिल्कुल नहीं करता क्यूँकि बुद्धि के तल पर उथल-पुथल है और शुद्ध बुद्धि के पास स्पष्टीकरण है।

***

सतचित् आनंद – सत्य की ओर देखता (अंतर्मुखी) चित्त ही आनन्द है।

***

चेतना जब चैतन्य में झाँकती है, उसे अंतर्मुखी होना कहते हैं।

***

जो भीतरी युद्ध है, वही तो जिहाद है।

***

चार देश – 1. मन देश, 2. बुद्धि देश, 3. चेतन देश, 4. चैतन्य देश

***

कृष्ण ने यदुवंश का नाश, अपने रहते करवा दिया। तो दुनिया अपने वंश के लिए इतनी चिंतित क्यूँ हैं?

***

स्त्रियों के लिए कौमार्य, विवाहित और वैधव्य तीनों अवस्थाओं के लिए निश्चित रहन-सहन है। पुरुषों के कोई भी नहीं।

***

पुस्तक का कवर पृष्ठ, चित्त को आकर्षित करने के लिए और उस पर लिखा संदेश मन को आकर्षित करने के लिए।

***

जब तक मोह जुड़ा रहता है, तब तक कोई खोज नहीं चलती। मोह के टूटने पर, खोज पुनः प्रारंभ होती है। मोह का टूटना शुभ है।

***

सभी देवता बुद्धि से जुड़े हैं। बुद्धि से परे कोई भी देवता नहीं। बुद्धि के परे मात्र सत्य है।

***

मनुष्य योनि में प्रवेश करने पर, जो वरदान मनुष्य को मिलता है, वह है बुद्धि का। बुद्धि के क्रमशः विकसित होते जाने पर, अंततः यही बुद्धि हमारे लिए समस्या बन जाती है। इस प्रकार वरदान ही समस्या में बदल जाता है।

***

बुद्धि के पार का जो लोक है, बुद्ध वहीं रहते हैं।

***

मनुष्य पहले जरूरतें उत्पन्न करता है। फिर उन जरूरतों को पूरा करने का प्रयास करता है। पहले से मौजूद जरूरतों को पूरा करने में, उसे कोई रुचि नहीं।

***

बुद्धि जगत् से सम्बन्ध जोड़ने में, हमें कम समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता। उसी प्रकार बुद्धि जगत् से सम्बन्ध तोड़ना भी आसान नहीं होगा। समस्याएँ आएँगी।

***

तंत्र सम्बन्धित है इच्छाओं से।

***

वृक्षों और मनुष्यों में एक मुख्य भेद है। वृक्ष धरती से प्राप्त शक्ति को, शक्ति रूप में ही जीव-जंतु जगत को पहुँचा देते हैं। और जीव उस शक्ति को ऊर्जा में परिवर्तित कर उपयोग कर लिया करते हैं। प्राप्त शक्ति को, शक्ति रूप में ही आगे बढ़ा देना ब्रह्मचर्य है।

***

सहस्रार चेतन और चैतन्य का मिलन स्थल है।

***

शिवलिंग – आधार – प्रकृति

लिंग – ज्योति

अर्थात् सत्य प्राप्ति हेतु प्रकृति पर्याप्त है।

***

शरीर है यन्त्र। यन्त्र + इच्छाएँ = तन्त्र

***

कृष्ण हैं चैतन्य, राधा हैं चेतना।

***

राधा का मात्र प्रेम स्वरूप होना ही पर्याप्त है, कृष्ण को पाने हेतु। इसी कारण हर बुद्ध, मोह का पूर्ण त्याग कर देता है। कृष्ण जब राधा को सभी में प्रेम बाँटते देखते हैं, तो उनका राधा के प्रति स्नेह और बढ़ जाता है।

***

बुद्धि जगत् के निवासियों के लिए, अध्यात्म एक बोझिल शब्द है। मन कब चाहेगा कि वे स्वयं के बारे में जानें।

***

जैसे अग्नि मोम को पिघला देती है। वैसे ही प्रेम, मन की अशुद्धियों को पिघला देता है।

***

जैसे बुद्धि देश के प्राणी, समाज और परिवार के बिना नहीं रह सकते। वैसे ही बुद्ध एकांत के बिना नहीं रह सकते।

***

इच्छा भी नहीं, विरोध भी नहीं। सुख भी नहीं, दुख भी नहीं। ये भी नहीं, वो भी नहीं। नेति नेति।

***

साधु के पास कमण्डल और बुद्ध के पास पात्र क्यूँ?

कमण्डल और पात्र में जितना भोजन आएगा, उससे व्यक्ति की ऊर्जा आवश्यकता पूरी हो जाएगी। यह संदेश भी है कि इंसान की आवश्यकताएँ बस इतनी सी हैं।

***

जो है, उसका भी कोई कारण है और जो नहीं, उसका भी कोई निश्चित कारण है।

***

मृत्यु के पश्चात् ही हम वास्तव में जागते हैं। मृत्यु के पश्चात् तो सभी जागते हैं। जीवन के बीच जाग जाना दुर्लभ है।

***

मनुष्य को पार कराना होता है अपनी चेतना को और वह पार कराने लगता है मोह जनित सम्बन्धों को।

***

फूलों की बगिया में नहीं, इत्र इंसानी बाज़ार में बिका करते हैं।

***

सपने में हम मात्र, घटनाओं को घटते देखते हैं। उन पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं होता। हमारा ये जीवन भी एक सपने के समान ही होता है। जिसपर हमारा अपना कोई नियन्त्रण नहीं होता। मृत्यु के पश्चात् जब व्यक्ति वास्तव में जागते हैं तो पाते हैं कि जीवन भी सपने के समान अनियंत्रित होकर बीत गया। जब तक व्यक्ति जीवन रूपी सपने में था तो इस पर अपना कोई नियन्त्रण स्थापित नहीं कर पाया। हमारे सपने और हमारा जीवन, दोनों भावनाओं से भरे होते हैं। जब तक जीवन में हम भाव में नहीं उतर पाते, तब तक हमारा जीवन सपने के समान व्यर्थ रहता है। जीवन में वास्तविक परिवर्तन तब आता है, जब मनुष्य भाव में उतरता है। यह भाव ही स्थिर हो, स्वभाव बन जाता है। जिसे हर व्यक्ति, नए जीवन में साथ लेकर जाता है। भावनाएँ नदी की सतह पर आने वाली लहरों के समान हैं। तो भाव ऊपरी सतह के नीचे रहने वाला सतत् शांत प्रवाह है।

***

जो लड़ाई कौरव पक्ष, अपने मन से हार चुका था। वही लड़ाई अर्जुन भी हारने जा रहा था। जब उसने कहा कि युद्ध नहीं कर सकूँगा। कृष्ण ने कहा तुम कौरवों से हारो या जीतो, इससे मुझे फर्क नहीं पड़ता। लेकिन तुम अपने मन से हार नहीं सकते।

***

महाभारत में उतरने से पहले पांडव एक लड़ाई जीत चुके थे। जब उन्होंने कहा कि हम मात्र पाँच गाँव से संतोष कर लेंगे। हम, हमारे कुटुम्ब और सेना की आवश्यकताएँ, पाँच गाँव से पूर्ण हो जाएँगी। हमें राज्य की इच्छा नहीं, मात्र आवश्यकता पूर्ति में हम संतुष्ट हो जाएँगे। कौरव अपनी इच्छाओं को नहीं जीत पा रहे थे।

***

नदी को समुद्र बनना है और यह बात, वह बहुत अच्छे तरीके से जानती है। इंसान को क्या बनना है, यह बात उसे जाननी चाहिए। उसके पास दो विकल्प हैं। या तो वो कृत्रिम फूल बने या कमल का फूल।

***

पृथ्वी पर लड़े जाने वाले, सभी युद्धों को मन रचता है। महाभारत में बहुत कम लोग ही जान पाए कि कृष्ण कौन हैं। क्यूँकि हमारी दृष्टि एकपक्षीय है, यह सिर्फ बाहर ही देख सकती है। जिनमें आंतरिक गहराई थी, वे कृष्ण को पहचान गए।

***

मानव की उत्पत्ति के पहले लाखों सालों तक, ईश्वर अन्य जीवों जानवरों के साथ रहते आए हैं और उन्हें विकसित होते हुए देखते आए हैं और अंततः मनुष्य के विकास के साक्षी रहे

हैं। इसलिए ये मानना कि वे मनुष्यों से ज्यादा प्रेम करते हैं या अन्य जंतुओं को उन्होंने मनुष्यों के लिए बनाया, ये विचार व्यर्थ है।

***

खुद को खोने पर ही, अध्यात्म अनुभूति बनता है। खुद को खोए बिना, अध्यात्म मात्र एक शब्द है।

***

विकास की आवश्यकता है, मन और बुद्धि को। चेतना को चाहिए उद्विकास।

***

या तो हमारा अहंकार फैलेगा या चेतना। अहंकार फैलेगा तो हम नष्ट हो जाएँगे। चेतना फैलेगी तो अमर।

***

आज भी बुद्ध पर प्रश्न उठता है कि उन्होंने परिवार के नियमों को क्यूँ छोड़ा?

सिद्धार्थ ने परिवार के नियमों को छोड़ा शाश्वत नियमों को जानने, उन्हें खोजने के लिए। उन नियमों को खोज लेने के बाद, शेष जीवन उन्होंने समाज को उन नियमों को खोज लेने को प्रेरित करने में बिताया। अगर भ्रम को तोड़, शाश्वतता की ओर जाना दोष है तो वे दोषी हैं। आपकी बुद्धि के लिए वे दोषी हैं परंतु आपकी चेतना के लिए, वो एक मार्गदर्शक हैं।

***

चप्पलें इस शरीर से ज्यादा पवित्र हैं। ये बाहरी गंदगी से बचाती व आंतरिक गंदगी को ढोती हैं।

***

इच्छाएँ हैं तो भविष्य है। इच्छाएँ नहीं तो फिर कैसा भविष्य? इच्छाओं के लुप्त होते ही आप भविष्य से भी मुक्त हुए।

***

ये आँखें हमें सच्चाई नहीं दिखातीं। सच्चाई देखने के लिए आँखें बंद करनी पड़ती है। ये आँखें उसी शरीर को सुंदर दिखाती हैं जो मैल, लार, श्लेष्मा, पसीना, मल, रज और मूत्र से भरा है।

***

जो जितना स्वतंत्र है, वह दूसरों को भी उतनी ही स्वतंत्रता देगा। जो जितना खुद से बँधा हुआ है, वह दूसरों को भी उतना ही बाँधना चाहेगा।

***

ईश्वर कभी किसी के प्रति आकर्षित या किसी से क्रोधित क्यूँ नहीं होते?

आकर्षित, क्रोधित या उत्तेजित होने के लिए एक अन्य सत्ता की आवश्यकता है और वो है ही कहाँ? ईश्वर के लिये आप उनसे अलग नहीं हैं।

***

न मुझे तुम्हें जगाना है, न मुझे तुम्हें उठाना है, मुझे तुम्हें गुदगुदाना है।

***

मनुष्य महान और विशेष है। ईश्वर सरलतम व सबसे सामान्य है। इसी कारण ईश्वर मिलने पर सभी महत्वपूर्ण चीजें छूट जाएँगी।

***

जीवन के तीन चरण हैं – 1. अधो (नीचे), 2. उत (ऊपर), 3. उद् (उदासीन)

उद् तक पहुँचने हेतु उत्तेजना से गुजरना होगा और उद से नीचे आने पर भी उत्तेजना ही मिलेगी।

***

श्रुति : जिन्हें समाधि की अवस्था में मन और बुद्धि के पार जाकर सुना गया। जिन्हें गुरु शिष्यों को श्लोकों, दोहों इत्यादि के रूप में कंठस्थ कराता है। शिष्य जिन्हें सुनकर याद कर लेते हैं।

स्मृति : जो बातें मुँह द्वारा कही गईं। कानों द्वारा सुनी गईं और जो स्मृति में संचित हैं।

***

तपने और जलने में वही अंतर है जो खाने के पक जाने और जल जाने में है।

***

जब शिव, शक्ति, गंगा, वैकुण्ठ, दिशाएँ, प्रेम, चेतना और परमतत्व सभी भीतर हैं तो गुरु बाहर कैसे मिल सकते हैं। गुरु भी भीतर ही हैं। आधी समस्या गुरु के मिलने पर समाप्त हो जाती है और आधी उन तक पहुँचने के बताए मार्ग पर चलने पर।

***

हमारी समस्याओं की जड़ है कि हमें गुरु नहीं मिलता। मिलता है तो एक मनचला मन।

***

दृष्टा भाव में स्थिर हो जाना ही समाधि है।

***

निर्विकल्प समाधि कर्ता जगत् को पूर्णतः छोड़ने की घोषणा है।

***

कर्षण के बाद ही घर्षण है। कर्षण नहीं तो घर्षण नहीं।

***

आवेश के कारण ही तो आकर्षण है।

***

अनाज और फलों में एक अंतर है। अनाज को खाने से पहले, खाने लायक बनाना होता है और फल खानें को तैयार स्थिति में आते हैं। अनाज को हम पकाते हैं व फलों को प्रकृति।

***

'पाने को आसमान है'। आसमान अपरिमित है और व्यक्ति परिमित। आसमान की सीमा नहीं, व्यक्ति की सीमा निश्चित है।

***

दृष्टि अर्थात् दृश्य है अष्ट। दृ + अष्टि। दृष्टि मात्र आठ जड़ तत्वों और उनके प्रभाव को ही देख सकती है।

***

बुद्धि दो प्रकार की होती है – 1. सात्विक, 2. कुटिल

सात्विक बुद्धि मन के अतिक्रमण से रहित है और कुटिल बुद्धि मन मिश्रित है।

***

गृहस्थ संतुष्टि चाहता है और सन्यासी संतृप्ति।

***

हर व्यक्ति खुद को किसी के प्रति जवाबदेह बनाना चाहता है। अब चाहे वह पति, पत्नि, बच्चे, परिवार या समाज हो। चेतन देश के निवासियों की जवाबदेही मात्र चैतन्य के प्रति है।

***

पृथ्वी पर अपनी जीवनयात्रा को एक गिलास शर्बत से समझिये। शर्बत बनाने के लिए चीनी चाहिए और पानी। मतलब भर की चीनी और पानी मिल जाना ही संतुष्टि है और इसे पीकर मन को जो प्राप्त होता है वह है संतृप्ति।

***

शक्ति को मात्र शिव ही नियंत्रित कर सकते हैं। शक्ति को नियंत्रित करने का सामर्थ्य मन में नहीं, बिल्कुल भी नहीं। इसी कारण मन को कभी, शक्ति नहीं दी जाती। मात्र ऊर्जा दी जाती है। इस ब्रह्माण्ड की सभी शक्तियाँ, मन से परे हैं।

***

समाज खुद का संचालन करने हेतु, बुद्धिमान मनुष्यों को चाहता है और धर्म चलाने हेतु बुद्धिरहित चेतनाओं को।

***

मन – कर्ता

चेतना – दर्शक

चैतन्य – फाइनेन्सर व प्रोड्यूसर

***

मनुष्य अभिनय को भी, वास्तविकता समझ किए जाता है। वहीं प्रकृति को पता है कि वास्तविकता क्या है।

***

ज्ञान दो अलग दुनियाओं के बीच का द्वार है। इस दुनिया में प्रधानता है पदार्थ की। उस दुनिया में प्रधानता है चेतन की। ज्ञान प्राप्त होता है, पदार्थ के माध्यम से लेकिन प्राप्ति होती है चेतन की।

***

बलि माया को चाहिए। प्रकृति कभी बली नहीं माँगती। प्रकृति माया की बलि लेती है।

***

हमारा समाज बुद्धि प्रधान समाज है। बुद्धि जानती है सफलता और असफलता को। इसी कारण वे व्यक्ति जो गलत कार्यों के माध्यम से भी सफल है, समाज उन्हें सम्मानित मानेगा।

***

मनुष्यों में सबसे ज्यादा साधारण कोई है तो बुद्ध। बुद्ध से भी ज्यादा कोई साधारण है तो सत्य।

***

ईश्वर के सादेपन का अंदाज, इस बात से लगाइये कि दुनिया की हजारों भाषाओं ने उन्हें हजारों नाम दिए लेकिन किसी भी नाम से उन्हें जुड़ाव नहीं। वास्तव में जब आप एक नाम छोड़ते हैं तो आपको कई नाम मिल जाते हैं।

***

सफलता दो प्रकार से मिलती है – 1. गुणों के संवर्धन से, 2. बुद्धि के अत्यधिक उपयोग से।

***

अपरिग्रह अर्थात् असुरक्षा की भावना से मुक्त होना। परिग्रह हम असुरक्षा की भावना को दूर रखने को करते हैं।

***

पृथ्वी पर मात्र चार की ही उपस्थिति है – 1. चैतन्य, 2. चेतन, 3. प्रकृति, 4. मन। ये चारों ही हर शरीर में उपस्थित हैं। इसी कारण शरीर, पृथ्वी जितना ही सम्पूर्ण है।

***

मृत्यु के पश्चात् चेतना के पास सत्य, प्रकृति और वे कारण बचते हैं। जो शरीर लेने के लिए उत्तरदायी हैं। मृत्यु के पश्चात् प्राण बचता है।

***

मस्तिष्क भावनाओं का उद्गम स्थल है और नेत्र अश्रुओं के माध्यम से भावनाओं के निकलने का स्थल।

***

प्राणायाम नाक के माध्यम से भावनात्मक अशुद्धियों को साफ करते हैं और अश्रु नेत्र के माध्यम से।

***

प्रश्न के साथ प्रश्न पूछने वाला भी है। यदि प्रश्न पूछने वाला केन्द्र में रहेगा तो उत्तर नहीं, प्रतिक्रिया मिलेगी। यदि प्रश्न केन्द्र में है, तभी उत्तर प्राप्त होगा।

***

इस दुनिया में जितनी भी गंदगी है, सब मन की फैलायी हुई है। इस दुनिया में जितना भी प्रदूषण है, बुद्धि का फैलाया हुआ है।

***

हमारे सारे गहने मिलकर भी, हमारी गरीबी को नहीं छिपा सकते।

***

अगर ये शरीर मल, मूत्र, पसीना और मैल नहीं उगलता, तो हम कभी इसके मोह के पार नहीं जा पाते।

***

ज्योति प्रज्जवलित करना – शक्ति और ज्योति दोनों ही गुरुत्व के विरुद्ध उठती हैं।

***

प्राणायाम अर्थात् अंगीठी को नीचे से हवा देना, ताकि वायु संपीडित होकर ऊपर उठे और अग्नि/शक्ति की संभावना बढ़ जाए।

***

देश अलग हैं और उन्हें नियंत्रित करने वाली विचारधाराएँ अलग। देश बुरे नहीं होते, उन्हें नियंत्रित करने वाली विचारधारा बुरी हो सकती हैं। देश वही रहते हैं। देश पर शासन करने वाली विचारधाराएँ बदलती रहती हैं।

***

उसका साथ, अपना उद्विकास।

***

अलग-अलग सभ्यताओं और भाषाओं ने परम् को अलग-अलग नाम दिए। जैसे सभी धर्म अंततः अध्यात्म में समा जाते हैं। वैसे ही ईश्वर के सभी नाम अंततः 'सत्य' में समा जाते हैं।

***

आदमी जिस किसी भी धर्म का हो, उसका अनुसरण करके, वो चार गुणों का ही संवर्धन करता है – 1. विवेक, 2. इच्छाशक्ति, 3. सहनशक्ति, 4. प्रेम।

***

मोह तोड़ेंगे या अवसर चूकेंगे? चयन आपका।

***

कर्तव्य काम से जन्म लेता है।

***

जिन्हें अपने नाम को एक-डेढ़ पीढ़ी तक जिंदा रखना है, वे वंशवाद को अपना ईंधन देते हैं। जिन्होंने अपने नाम को जीते जी ही विसर्जित कर दिया, उन्होंने अपना ईंधन बचा लिया।

***

कुछ करना हमारी आदत है। खुद कुछ भी न करना और सब कुछ आंतरिक प्रकृति को करने देना तपस्या है।

***

शक्ति संवर्धन से प्रेम की सिद्धि प्राप्त होती है।

***

मनुष्य का आधा जीवन विकास के लिए और शेष आधा जीवन उद्विकास के लिए। यदि जीवनभर वो विकास ही करता रह गया तो उद्विकास कब करेगा।

***

मनुष्य शक्ति को स्थिर रख सकता है, ऊर्जा को नहीं।

***

लीला, रास और जीवन

लीला – चैतन्य द्वारा

रास – चैतन्य व चेतना द्वारा

जीवन – माया व मन द्वारा

***

जीवन एक कमरा है, जिसकी दो दीवारों पर खिड़कियाँ हैं। एक खिड़की के उस पार दुनियाँ अपनी पूरी चमक-दमक के साथ मौजूद है तो दूसरी खिड़की के उस पार प्रकृति अपने पूर्ण सौन्दर्य के साथ उपस्थित है।

***

सम्बन्ध गुणों के माध्यम से बनते हैं। सम्बन्ध चूरन के समान हैं, जो कभी कभी और कम मात्रा में खाने पर स्वादिष्ट लगते हैं और ज्यादा मात्रा में लेने पर उबन प्रदान करते हैं। और ज्यादा खाने पर तबियत खराब होने की संभावना होती है। यदि किसी चूरन को ज्यादा खाने पर खराबी हो जाए, तो उससे मोह रूपी सम्बन्ध टूटने के कगार पर पहुँच जाता है।

***

अपने परिवार से हम संतुष्टि, कर्तव्य और मोह के माध्यम से जुड़ते हैं।

***

आसपास के लोग व जगहें सभी के लिए अलग अलग होती हैं, लेकिन आसपास घटने वाली घटनाएँ सभी के लिए, काफी कुछ एक जैसी होती हैं।

***

वहाँ न पुरुष पहुँच सकता है, न स्त्री, न मन पहुँच सकता है और न बुद्धि।

***

सनत कुमार बुद्धि देश में, प्रवेश नहीं करना चाहते थे। इसी कारण पाँच वर्ष की उम्र पर ही रुक गए।

***

भावना जगत – तर्कों का जगत

भाव जगत – शांति का जगत

भा जगत – तथ्यों का जगत

भा जगत् में तर्क प्रवेश नहीं पाते क्यूँकि यहाँ पर मन और बुद्धि की उपस्थिति नहीं है।

***

लगातार बारिश होने से मन ऊब जाता है। बारिश न होने से चेतना तड़प उठती है।

***

सारे प्रश्न भावनात्मक अवस्था में उठते हैं।

***

बुद्धि के अनुसार मनुष्यों के तीन प्रकार हैं –

1. वे जो बुद्धि की सीढ़ियाँ चढ़ रहे हैं।

2. सीढ़ियाँ चढ़ चुके परंतु ऊपर रुके हुए हैं, 3. वे जो सीढ़ियाँ उतर रहे हैं।

***

जो माया के लिए राजा है, वो चैतन्य के लिये दयनीय है और जो चैतन्य हेतु राजा है वह माया की दृष्टि में तुच्छ है।

***

जो हमारे लिए कचरा है (मल, मूत्र, मृत शरीर, प्रदूषित जल, कार्बन डाइऑक्साइड) वही प्रकृति के लिए निवेश है।

***

वीर्य नीचे जाएगा और ओज ऊपर।

***

अपने क्षेत्र पर अधिकार करने की प्रवृत्ति, मनुष्य और जानवरों में समान है। राजनीतिज्ञ गाँवों से लेकर देश पर नियंत्रण चाहते हैं। तो सामान्य व्यक्ति अपने घर, जमीनों और अपने काम पर। इसी नियंत्रित क्षेत्र के भीतर, जानवरों के भी अपने नियंत्रित क्षेत्र हैं। चीटियों से लेकर शेर तक, सभी अपने क्षेत्र पर नियंत्रण के लिए प्रयासरत हैं। इस प्रकार एक ही क्षेत्र को चींटियों से लेकर मनुष्य तक, सभी अपना मानते हैं। एक ही क्षेत्र में रहने वाले जानवरों और मनुष्यों को, एक दूसरे के नियंत्रण वाले क्षेत्रों के बारे में कुछ ज्ञात नहीं।

***

जैसे कर्ण के पास जन्म से ही कवच और कुण्डल थे। वैसे ही आपके पास है, आपका स्वभाव और इच्छाशक्ति।

***

कृष्ण और राधा में बिछोह, मात्र मन को ही दिखाई देता है। वास्तव में बिछोह है ही नहीं। कृष्ण ने जीवन में सत्य को स्थापित किया और राधा ने प्रेम को। इस प्रकार कृष्ण ने, एक ही जीवन में सत्य व प्रेम दोनों को ही स्थापित किया।

***

हर जाग्रत चेतना के जन्म से सम्बन्धित है, समाज के कई भ्रमों का टूटना।

1- कृष्ण और सुदामा ने गरीबी और अमीरी के भ्रम को तोड़ा।

2- कृष्ण ने कंस के अहंकार को तोड़ा।

3- कौरवों के इस भ्रम को तोड़ा कि सामर्थ्यवान और बलवान ही अधिकारी हैं।

4- पांडवों के इस भ्रम को तोड़ा कि वे कर्ता हैं।

5- यदुवंशियों के कृष्ण के वंशज होने के भ्रम को तोड़ा। वंशवाद को तोड़ा।

6- कर्ण के माध्यम से अर्जुन के श्रेष्ठतम धनुर्धर होने के भ्रम को तोड़ा।

7- अर्जुन के कर्तापन के भाव को तोड़कर, उसे युद्ध हेतु तैयार किया।

8- गीता के माध्यम से सत्यान्वेशियों के सभी भ्रमों को तोड़ा।

9- दुर्योधन के इस भ्रम को तोड़ा कि गांधारी की कृपा दृष्टि के बाद, अब वह अजेय है।

10- बरबरीक से पूछा, अपने मनुष्य होने के भ्रम को तोड़ोगे? बरबरीक ने कहा, भ्रम पहले से ही टूटा हुआ है। ये लीजिये शीश।

11. कृष्ण ने राधा के साथ मिलकर वर्तमान और भविष्य के समाज के, इस भ्रम को तोड़ा कि विवाह प्रधान है, प्रेम द्वितीयक।

12- 16100 स्त्रियों के माध्यम से समाज के इस भ्रम को तोड़ा कि परतंत्रता सामाजिक स्वीकार्यता को स्थायी रूप से समाप्त कर देती है।

13- 16100 स्त्रियों के इस भ्रम को तोड़ा कि पति रूपी अधिकार प्राप्त करना ही चरम है। कृष्ण के शरीर छोड़ने के पश्चात् डकैत उन्हें हर ले गये।

14- अष्टभार्या के इस भ्रम को तोड़ा कि अधिकार और सामाजिक स्वीकार्यता, प्रेम से बड़ी है।

15- पूरे महाभारत काल में दो लोग थे, जो बिल्कुल भी भ्रमित नहीं थे। राधा और बरबरीक। एक कृष्ण का विस्तार बनीं और दूसरे कृष्ण में समा गए।

***

हर आदमी अपनी खोज प्रारंभ करता है और एक दिन पूरी भी करता है। कारण इतना सा है कि वह पनपता तो इस दुनिया में है लेकिन उसका दूसरा सिरा स्थित है, दूसरी दुनिया में। इसी डोर को पकड़ता हुआ, वह उस दुनिया में पहुँच जाता है। यह ठीक वैसे ही है, जैसे पेड़ है तो धरती के ऊपर लेकिन उसकी जड़ें धँसी हैं धरती के भीतर।

***

हथियार बने हैं या तो हथियाने के लिए या फिर हथियाने से रोकने के लिए। इनका उपयोग सामान्य जनता के विरुद्ध कभी नहीं किया जा सकता क्यूँकि उन्हें हथियाने से कोई वास्ता नहीं। हथियार माया के उपकरण हैं, जिनका उपयोग माया के ही विरुद्ध होता है।

***

प्रकृति फल, अन्न, जल और ऑक्सीजन (प्राण वायु) देती है और मल, मूत्र, कार्बन डाइऑक्साइड स्वीकार करती है। मनुष्य मल, मूत्र, कार्बन डाइऑक्साइड देता है और फल, अन्न, प्राणवायु तथा जल स्वीकार करता है। बिल्कुल विपरीत है वह प्रकृति से।

***

क्या आपने नमक और चीनी के पेड़ देखे हैं?

नहीं ना! प्रकृति, इन्हें उत्पन्न नहीं करती। इन्हें मनुष्यों ने बनाया। बनाया तो सही इनका अत्यधिक उपयोग भी करने लगा। इसी कारण मनुष्य जाति, आज दोनों की ही विभिषिका झेल रही है।

***

अपनी अपूर्णता को पूर्णता में बदलने के लिये, हमें भविष्य की आवश्यकता है। यदि इसी एक क्षण में आप पूर्ण हैं तो आपको भविष्य की आवश्यकता क्यूँ होगी?

***

स्थितप्रज्ञ ही बुद्ध है, जो प्रज्ञा में स्थिति से विचलित नहीं होता।

***

शून्यता प्रज्ञा की पात्रता है। शून्यता के बिना, प्रज्ञा जगत् में प्रवेश संभव नहीं।

***

काम सुख प्रक्रिया है कुछ मिनटों की लेकिन इसके बारे में विचार व बातें घंटों तक की जाती हैं। इस प्रकार प्रक्रिया और विचार का अनुपात कम से कम 1:10 का है। वहीं सोम सुख एक छायी रहने वाली स्थिति है। जिसमें स्थित हुए आप, दुनिया में रहते हुए भी इससे कटे रहते हैं। इस अवस्था से बाहर आने का विचार भी चेतना को पसंद नहीं। सोम सुख सापेक्षिक नहीं। अर्थात् या तो आप इसमें हैं या नहीं।

***

विवाह समारोह एक रोमांचक उत्सव है। ठीक वैसे ही जैसे एक ढाई घंटे की फिल्म का एक मिनट का ट्रेलर। जिसमें फिल्म की सारी खूबियों को एकत्र करके, दर्शकों के सामने परोस दिया जाता है। नौजवानों को यह ट्रेलर दिखाकर, वैवाहित जीवन में प्रवेश करने हेतु उत्साहित किया जाता है।

***

रिश्ते अतृप्त अपेक्षाओं और मन के घालमेल से टूटते हैं।

***

विवाह व्यक्तिगत और सामाजिक इच्छाओं को पूरा करने का साधन हैं।

***

ज्ञान तो दो कौड़ी का भी नहीं होता। प्रॉपर्टीज़ करोड़ों की और कम्पनीज़ अरबों की होती हैं। दो कौड़ी का भी नहीं अर्थात् अमूल्य। पाने वाले ने इसे मूल्य चुकाकर नहीं पाया। न ही देने वाला, इसे देने के बदले में, कुछ मूल्य की ही अपेक्षा करता है। न ही यह कोई उत्पाद है, जिसे बेचकर पैसे कमाए जाएँ।

***

धर्म ईश्वर को पाने का जरिया है। दूसरे धर्मों और उनके अनुयायियों को खुद से दूर करने का जरिया नहीं।

***

दुनिया के दी हुई भूमिकाएँ निभाने के लिए, मुझे खुद से दूर आना पड़ता है।

***

श्रीमान् – श्री को प्राप्त करने वाला।

श्रीमती – श्री को प्राप्त करने वाली स्त्री। श्री अर्थात् शरण प्रदान करने वाली शक्ति। मन, बुद्धि और अहंकार से परे, शरण प्रदान करने वाली शक्ति।

***

विवाह व्यक्तित्व से होता है, चेतना से नहीं।

***

हमारे जीवन का लक्ष्य, हमारे ही भीतर बहुत गहराई में है। गहराई में उतरकर ही उसे पाया जा सकता है।

***

जिस प्रकार सूर्य से पदार्थ जगत् निर्मित है, वैसे ही चेतना से जीव जगत् निर्मित है।

***

शरीर में सिर ही सूर्य के उदित होने का स्थान है। सूर्योदय पर प्रकाश होना स्वाभाविक है। आधी उम्र होने पर बालों के सफेद होने का तात्पर्य ही यह संकेत देना है कि माया काल अब बीत रहा है, सूर्योदय का प्रयास करो।

***

एक गिलास दूध में जितनी शक्ति है, उतनी एक बोतल शराब में नहीं।

***

मन और बुद्धि के परे जाकर, स्थिर हो जाना ही समाधि है। मन और बुद्धि नामक विकल्पों का पूर्ण समापन ही निर्विकल्प समाधि है।

***

चेतना के बिना व्यक्तित्व का कोई अस्तित्व नहीं। व्यक्तित्व के बिना चेतना आनंदित है। ठीक वैसे ही, जैसे मानव सभ्यता प्रकृति पर आधारित है। प्रकृति, मानव सभ्यता पर नहीं।

***

'गाय' स्वभाव है। सीधे स्वभाव के पुरुष और स्त्रियों के लिये, इसी कारण गाय शब्द का उपयोग किया जाता है।

***

भारत में शादीशुदा स्त्री पूरे समाज के लिए देवी है लेकिन उसका पति किसी के लिए देवता नहीं।

***

इस पूरे जीवन में एक ही काम है, जो हमें करना है। उससे मुक्ति पाना, जो हमारा अपना भाग नहीं है। इसके बाद जो भी होता है, स्वतः ही होता है।

***

जिस दिन रिश्तों में मोह समाप्त हो जाता है। उसी दिन आप वानप्रस्थ में प्रवेश कर जाते हैं।

***

ईश्वर तक पहुँचने का वह मार्ग सबसे छोटा है, जिसमें मन का दखल सबसे कम हो। अपना मन हो या सामाजिक मन। जिन समाजों में सामाजिक मन, व्यक्तिगत मन पर हावी है, वहाँ लड़ाइयाँ सड़कों पर लड़ी जाती है। जिन समाजों में व्यक्तिगत मन, सामाजिक मन पर हावी है, वहाँ लड़ाइयाँ व्यक्तिगत ज्यादा होती हैं।

***

व्यक्तिगत लड़ाइयाँ दो प्रकार की होती हैं–

1. व्यक्ति व व्यक्ति अर्थात् मन और मन के बीच लड़ाई। 2. विवेक के सहयोग से इच्छाशक्ति व मन के बीच लड़ाई।

***

सामान्यजन इस बात को जानते हैं कि गाय का दूध, बच्चे के विकास में भी सहायक है और साधु के उद्विकास में भी। माँ ही पिता तक पहुँचाने में सहायक है। इसी कारण गाय के प्रति हिंसक व्यवहार का विरोध, सभी एक स्वर में करते हैं।

***

बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के पूर्व ही स्वयं को सामाजिक मन से काट लिया था। ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् भी, वो समाज में ही रहे लेकिन समाजिक तौर तरीकों से खुद को अलग कर, कार्य समाज के लिये ही करते रहे।

***

सामान्य व्यक्ति अपने लिंग से मूलाधार का भेदन करते हैं। बुद्ध अपने ज्योतिर्लिंग से सहस्त्रार का भेदन करते हैं।

***

चेतना का आज्ञा से सहस्त्रार के बीच रहना 'आनंद' की अवस्था है।

***

चेतना का सहस्त्रार से ऊपर स्थित होना 'परमानंद' है।

***

ब्रह्माण्ड से लेकर परमाणु, तक ग्रह से लेकर इलेक्ट्रॉन्स तक, सभी अपने केन्द्र के चारों ओर चक्कर लगाया करते हैं। मंदिर में विग्रह को केन्द्र मान, उसके चारों ओर परिक्रमा का कारण भी यही है।

***

ज्योतिर्लिङ्ग – सहस्त्रार पर जलने वाली ज्योति ही ज्योतिर्लिङ्ग है। लिंग इसलिए क्यूँकि इस शक्ति का मूल स्थान मूलाधार है।

***

बुद्ध का कर्तव्य किसी मन के प्रति नहीं। बुद्ध का कर्तव्य चैतन्य के प्रति है। चैतन्य उनके माध्यम से जो कार्य करना चाहता है, उसका सम्यक रूप से निर्वहन ही उनका कर्तव्य है।

***

काम से मन संतुष्ट होता है परंतु चेतना भ्रमित होती है।

***

रोती चेतना नहीं, रोता मन है। इसी कारण रोते व्यक्ति को देख, लोगों के भीतर की चेतना उनकी ओर आकृष्ट होती है और ढाँढस बँधाने पहुँच जाती है।

***

रोचक तथ्य यह है कि जब तक सब कुछ मन के मुताबिक चलता है। हम मानते हैं कि 'सब ठीक चल रहा है' और जब मन के मुताबिक किए कार्यों का प्रभाव दिखने लगता है। तब हम कहते हैं कि 'ठीक नहीं चल रहा'।

***

यह शरीर और इसके चारों ओर उपस्थित सभ्यता, दोनों ही मन द्वारा बनाए गए हैं। मन शरीर को एक ध्रुव और सभ्यता को दूसरा ध्रुव बताता है। यही कारण है, इस संसार में आवागमन का। मन कहता है कि जब तक दोनों ध्रुव एक न होंगे, संरचना पूर्ण नहीं होगी। इसी कारण पूर्णता हेतु शरीर लो और धरती से सम्बन्ध स्थापित करो। मनुष्य के सभी बँधनों का कारण द्विध्रुवीय व्यवस्था ही है।

***

यदि मन को आप अपनी आँखों से देखना चाहते हैं तो उसके प्रभाव को शीशे में देख सकते हैं।

***

शक्ति + मन + शरीर + हार्मोन्स मिलकर, आपके लिए बहुत सारी उत्तेजना और थोड़ा सा सुख (काम सुख) की व्यवस्था करते हैं।

***

हम अपने सुख और प्रेम के लिए, अपने मन पर निर्भर हैं। जिस क्षण सुख और प्रेम के लिए मन पर निर्भरता नहीं रहेगी, उस क्षण आप मुक्त हैं।

***

ज्ञान जीवन से सम्बन्धित वह सूत्र है, जो बिना अध्ययन, अन्वेषण, प्रयोग व चर्चा के प्राप्त होता है। यह उस नाव के समान है, जो जीवन रूपी नदी में चलती है व इस पार से उस पार ले जाने का कार्य करती है। इसे मात्र प्राप्त करना ही नहीं, इसमें सवार होना भी आवश्यक है।

***

'दृष्टा', पुरुष व स्त्री से परे है। वह जो पुरुषत्व व स्त्रीत्व को देख सकता है, वह वास्तविक पुरुष व स्त्री को भी जानता है।

***

जब हम किसी व्यक्ति से इच्छाओं के कारण, सम्पर्क में आते हैं और वह व्यक्ति हमारी इच्छाओं को खाद और पानी देता है। तब आप उस व्यक्ति से, नैतिक रूप से बँधे महसूस करते हैं। वृक्ष किसी से भी इच्छाओं से नहीं जुड़ते। इसी कारण वे किसी से भी न नैतिक और न ही मौखिक रूप से बँधे हैं।

***

शक्ति ही शांति है और शक्ति ही व्यग्रता और बेचैनी भी। दोनों ही अवस्थाओं में अंतर इतना है कि शक्ति किस चरण पर स्थित है।

***

जिन्दगी में जब तक शक्ति है, तब तक मौके हैं। शक्ति खत्म, मौके खत्म।

***

हमारे जीवन के लक्ष्य, दो दिशाओं से आते हैं। या तो वे बाहर से आते हैं या भीतर से। यदि वे बाहर से आएँगे तो मन और बुद्धि से आएँगे। यदि वे भीतर से आएँगे तो चैतन्य से आएँगे।

***

अतिमानव – जब मन चेतना का अत्यधिक उपयोग करे।

अतिमानस – जब चेतना मन का अत्यधिक उपयोग करे।

***

दृष्टा शिष्य है और साक्षी गुरु।

***

गुरु और सद्गुरु में वही अंतर है जो जनरल और लेफ्टिनेंट जनरल में है।

***

खो वही सकता है, जो अपना है ही नहीं। जो अपना है, वो कभी खो नहीं सकता। हाँ वो भूला अवश्य रह सकता है। भूलते हम उसे ही हैं, जो हमारे लिए पूर्णतया समर्पित है। बिना शर्त, बिना कारण। वो नहीं भूलता आपको कभी भी। न आपको, न अपने प्रेम को। प्रकृति कभी आपको प्राणवायु देना नहीं भूलती। धरती आहार देना, वृक्ष छाया और फल देना, नदी पानी देना कभी नहीं भूलती।

***

अपरिग्रह अनावश्यक वस्तुओं के संचय से बचना ही नहीं, अनावश्यक वजन के संचय से बचना भी है।

***

लक्ष्य स्वयं कहता है कि लक्षित है यम।

***

कर्ता के समाप्त होने पर ही कर्तव्य समाप्त होता है। कर्ता है जीव।

***

बुद्ध मूर्ति की पहुँच मात्र हमारे ड्राइंगरूम तक है। घर में वास्तविक बुद्ध को कोई नहीं चाहता।

***

ओम् अर्थात् सहस्त्रार पर पहुँचने पर ही, वास्तविक 'म' अर्थात् आत्म का ज्ञान होगा।

***

खुशखबरी और दुख खबरी, इन दोनों से ही मतलब मात्र मन को है। चेतना का इन दोनों से ही कोई तात्पर्य नहीं।

***

जब आप नास्तिक होते हैं, तब आप विश्वास या मान्यता को तटस्थ होकर देख सकते हैं। जब आप आस्तिक होते हैं तो समर्पण का अवलोकन कर सकते हैं।

***

कृष्ण कहते हैं कि कम कुशल और अधिक कुशल व्यक्ति में भेद मत करो। क्यूँकि कुशलता और बुद्धि के परे भी कुछ है और वह है चेतना। जो सभी की एक समान है।

***

चेतना, मन और बुद्धि तीनों के लक्ष्य अलग-अलग हैं।

***

शांति यदि जीवन में प्राप्त नहीं हुई तो जीवन के बाद कैसे प्राप्त होगी? पाने की दुनियाँ यही है। हम यहाँ पाने ही तो आते हैं।

***

बुद्धि ही सामर्थ्य है।

***

यदि आप अपने आज का उपयोग, मन व बुद्धि से दूर जाने और आत्मा के साथ रहने में कर रहे हैं तो आप आज का उपयोग, अपनी चेतना के लिए कर रहे हैं।

***

नास्तिक बुद्धि में, अपने सभी प्रश्नों के उत्तर ढूँढने का प्रयत्न करता है। आस्तिक बुद्धि और आस्था के मिश्रण ने, अपने प्रश्नों के उत्तर ढूँढने का प्रयास करता है।

***

हर व्यक्ति के भीतर की सतत् बेचैनी ही उसका प्रश्न है।

***

भक्ति के कई फायदों में एक फायदा यह है कि व्यक्ति, पहली बार घटनाओं को स्वतः घटित होते देखता है। जब वह इष्ट से कोई इच्छा करता है और परिस्थितियों के सटीक बैठते जाने से, वह इच्छा को स्वतः ही पूर्ण होते देखता है। इससे पहले हर कार्य को, वह स्वयं पूर्ण करता था।

***

जीवन के दौरान और मृत्यु के पश्चात् पूछे जाने वाले प्रश्न अलग-अलग होते हैं। जीवन के दौरान लोग जानना चाहेंगे कि आप कितना कमाते हैं? मृत्यु के पश्चात् लोग विवेचन करेंगे कि आपका क्या योगदान रहा?

***

योगदान तीन प्रकार का होता है।

1- परिवार के लिये, 2- समाज के लिए, 3- सभ्यता के लिए। सभ्यता के लिए किया गया योगदान भी दो प्रकार का होता है। 1- सभ्यता के व्यक्तित्वों के लिये, 2- सभ्यता की चेतना के लिए।

***

सहस्त्रार ही गोमुख है।

***

शिव और मनुष्य में अंतर यह है कि शिव अपनी शक्ति के वेग को शांत कर, सहस्त्रार के माध्यम से उसे बाहर निकालते हैं। जिसका लाभ पूरी सभ्यता को मिलता है। मनुष्य उसी शक्ति को उत्तेजना के साथ, वीर्य के रूप में मूलाधार से बाहर निकालते हैं, जो व्यर्थ जाती है। सामान्य शब्दों में शिव अपनी शक्ति के वेग को शांत कर सकते हैं और सामान्य मनुष्य नहीं। शिव के सदैव शांत रहने और मनुष्य के सदैव व्यग्र रहने का कारण भी यही है।

***

शिव का तांडव अर्थात् कम समय में बहुत सी शक्ति को ऊर्जा में परिवर्तित कर देना।

***

जो भी मन और बुद्धि से परे है, वही अध्यात्म है।

***

इस दुनिया के बारे में आप तभी जान पाएँगे, जब मन आपको इसके बारे में बताना बंद कर देगा।

***

प्रश्न– बुद्धि से मुक्त रहकर किया गया सवाल है। तर्क – बुद्धि का आवलम्बन लेकर किया गया प्रश्न है।

***

हम किसी दूसरे की मदद नहीं कर सकते क्यूँकि कोई दूसरा है ही नहीं।

***

मानव के लिए चार सबसे बड़े रहस्य – ये सृष्टि, वो स्वयं, ईश्वर और समय।

***

किसी को दूसरा समझ कर किया गया कर्म ही, कर्मफल को निमंत्रित करता है।

***

शरीर में उपस्थित आकाश तत्व के कारण ही, ग्रहों की चालों का प्रभाव शरीर पर पड़ता है। ग्रह आकाश में स्थित हैं। ग्रहों की चाल का प्रभाव आकाश तत्व के माध्यम से ही व्यक्ति तक पहुँचता है।

***

अनुभव गुणों के माध्यम से होते हैं और अनुभूतियाँ चेतना के माध्यम से। अनुभव भावनात्मक होते हैं, अनुभूतियाँ भावात्मक।

***

भारतीयों ने कृष्ण से प्रेम किया। उनके जीवन का अनुसरण नहीं। अनुसरण उन्होंने उनकी बताई बातों (गीता) का किया। यदि हम इसके ठीक उलट करेंगे, तो हम ईश्वर से खौफ करेंगे। उनके जीवन का अनुसरण करेंगे और उनकी कही बातों पर ध्यान नहीं देंगे।

***

एक ही जगह पर तीन अलग अलग लोक स्थित हैं –

1. मन द्वारा रचित, 2. प्रकृति, 3. सत्य

तीनों एक दूसरे से बिल्कुल अलग हैं। फिर भी आपस में गुँथे हुए हैं। बस चेतनाएँ एक जगत् से दूसरे जगत में आ-जा सकती हैं।

***

बच्चों से मोह का कारण, उन्हें अपने व्यक्तित्व का विस्तार मानना है। इसी कारण उनसे सम्बन्धित या उनकी हानि, हमारी अपनी हानि बन जाती है।

***

समय के प्रति संवेदनहीनता ही समाधि है। इस संवेदनहीनता की गुणात्मकता ही समाधि के विभिन्न चरण हैं।

***

समय के प्रति आप तभी संवेदनहीन होने लगते हैं, जब जीवों की विभिन्नताओं व उनके मध्य उपस्थित अंतर के प्रति निरपेक्षता आने लगती है। जब दृष्टि में समत्व आता है, समय के प्रति सापेक्षता धूमिल होने लगती है। प्रकृति की दृष्टि में जीवों में कोई विभिन्नता नहीं, इसी कारण वह वर्तमान में स्थित है।

***

बुद्धि आपको अच्छी बातें बताएगी। बुद्ध आपको अच्छी नहीं, सच्ची बातें बताएँगे। फिर वो आपको अच्छी नहीं भी लग सकती हैं।

***

व्यक्तित्व = व्यक्ति + त्वं। आप एक व्यक्ति हैं। जैसा आपका मन और बुद्धि आपको बताते हैं, आप वैसा व्यक्त करते हैं।

***

बुद्धत्व = बुद्ध + त्वं = आप बुद्ध हैं।

***

परमात्मा न तो कोई व्यक्ति हैं और न ही कोई व्यक्तित्व। इसी कारण परम तत्व द्वारा किया गया कोई संकल्प, उन्हें कर्म बंधन में नहीं बाँधता।

***

किसी का नमक खाना। दूध, फल, अनाज पर प्रश्न नहीं, प्रश्न मात्र नमक का होता है। मानव को छोड़ अन्य जीव नमक नहीं खाते। मानव ने स्वाद के लिए नमक खाना प्रारंभ किया। नमक खाना अर्थात् किसी के साथ इच्छाओं में भागीदार होना। नमक भावनाओं को मजबूत करता है। अपनापन एक भावना है।

***

कृष्ण कहते हैं कि अध्यात्म में नित्य स्थिति पा लो अर्थात् स्वयं में स्थित हो जाओ। वास्तविकता में होता इसके ठीक उलट है। हम अपने व्यक्तित्व में नित्य स्थित होते हैं।

***

हम दूसरों के अनुभवों से क्यूँ नहीं सीखते? क्यूँकि हमारा मन हमें बताता है कि हमारा अलग व्यक्तित्व है। हमारे गुण व सामर्थ्य अलग हैं। इसी कारण हमारे अनुभव भी उनसे अलग होंगे।

***

सत्य की खोज का तात्पर्य अपने प्रश्नों के उत्तर जानना नहीं बल्कि अपने मूल स्वरूप को पाना है।

***

प्रकृति की बनाई हुई व्यवस्था और कृतियों को, बुद्धि के माध्यम से समझने की प्रक्रिया का नाम है विज्ञान।

***

बुद्ध धर्म में दो प्रकार के लोग गए –

1. वे जो अपने धर्मों के उत्पीड़न और कुरीतियों से प्रताड़ित थे।

2. जो अपने अध्यात्मिक पक्ष से जुड़ने को ललायित थे।

***

बात अच्छी नहीं लगती मन को। उकता मन जाता है। परेशान मन हो जाता है लेकिन वह नुकसान पहुँचाता है शरीर को। मन स्वयं को, कभी नुकसान नहीं पहुँचाता। चोट पहुँचती है मन को और बदला वो शरीर से लेता है।

***

जाग्रत व्यक्तियों को आपने यह कहते सुना होगा कि देयर इज़ नथिंग, कुछ भी नहीं है। इसका तात्पर्य है कोई भी मन नहीं है।

***

परिवार की शुरुआत और अंत दोनों पर ही अकेलापन होता है। बस बीच में कुछ समय हम व्यस्त रहते हुए, अकेलेपन की भूले रहते हैं।

***

बुद्ध पृथ्वी पर आपके मन की नहीं, आपकी चेतना की प्यास बुझाने आते हैं।

***

खुद से जुड़ना अर्थात् सबसे जुड़ना। खुद से कटना मतलब सबसे कटना।

***

किसी व्यक्ति के जीवित रहते हुए, उसकी याद भविष्य की ओर खींचती है और मृत्यु के पश्चात् उसकी याद अतीत की ओर।

***

यदि संभव हुआ तो विज्ञान ईश्वर की उपस्थिति को मात्र सिद्ध कर सकता है, लेकिन वो उसे पाएगा कैसे? सिद्ध करना और पाना दो अलग अलग बातें हैं।

***

हाँ, ये जीवन चला-चली का खेल है। लोग आते हैं और चलते रहते हैं अंत तक। लेकिन उनमें से कुछ ठहर जाते हैं। संसार में नहीं, समय में।

***

खुद से बातें करना अर्थात् मन का, एक आभासी मन से बात करना।

***

मनुष्य ऐसे स्थान पर घर बनाते हैं, जहाँ बुद्धि के करने के लिए काफी कुछ होता है। बीच बीच में वे ऐसे स्थानों का भ्रमण करते हैं, जहाँ मन के करने हेतु काफी कुछ होता है। जिसे वो घूमना कहते हैं।

***

कृष्ण का यह कहना कि कछुए की तरह अंगों को सिकोड़ लो। इसका तात्पर्य है कि बाहर जब आकर्षण उपलब्ध हो तो भीतरी दरवाजे की तरफ गमन कर जाओ। क्यूँकि दरवाजा सिर्फ बाहर ही नहीं, भीतर भी है।

***

आप घर नहीं हो सकते। घर आप नहीं हो सकता। ठीक इसी प्रकार आप, शरीर नहीं हो सकते। आप और शरीर दोनों ही अलग-अलग हैं। जैसे मालिक और मकान अलग अलग हैं।

***

सुदर्शन चक्र – समय का चक्र। अहंकार को काटता है।

***

अभी तो पता मिला है। मिलना अभी बाकी है।

***

चुगली अर्थात् जब दो या दो से ज्यादा लोग, आपस में किसी अन्य द्वारा किये गए इच्छा सम्बन्धित कर्मों के बारे में बात करें।

***

सामान्य मनुष्य के लिए जो महत्व अच्छे या बुरे का है। वही महत्व योगी के लिए उपयोगी और अनुपयोगी का है।

***

सामने व्यक्तित्व है, भीतर जीवन।

***

व्यक्तित्व ही क्रोध का कारण है। जैसे अपने व्यक्तित्व की रक्षा, दूसरे व्यक्तित्व का विरोध।

***

संकल्प शक्ति : संकल्प पूर्णता की शक्ति।

***

धर्म एक चश्मा है। इस चश्में से अपनी भीतरी दुनियाँ को देखिये, बाहरी दुनियाँ को नहीं।

***

घटिया और बढ़िया, घटने और बढ़ने से सम्बन्धित है।

***

खुशी का संबंध जड़ तत्वों से है। प्रसन्नता का सम्बन्ध चेतना से है।

***

भविष्य के प्रति अनिश्चितता ही हमें, व्यक्तित्वों के पीछे भागने को विवश करती है।

***

चेतना बस महसूस कर सकती है। सुख, दुख, क्लेश, उत्तेजना, शांति और आनंद।

***

अंतर्मुखी ध्यान अर्थात् वर्तमान की परिधि में पूर्ण विश्राम में स्थित होना।

***

चेतना स्वयं कुछ नहीं करती। करती प्रकृति व उसके गुण हैं। करवाता मन है लेकिन गुणों के माध्यम से। मन और बुद्धि द्वारा किए गए कृत्यों को झेलने के लिए, चेतना अभिशप्त है।

***

संत व्यक्ति वह है जिसकी न कोई अपेक्षा है, न इच्छा। वह मात्र आवश्यकता पूर्ति में ही जीवन यापन कर संतुष्ट है। आवश्यकता पूर्ति के साथ, उसे आत्म को बनाए रखने की ऊर्जा मिल जाती है। आत्म, आत्मा में मग्न होकर संतुष्ट है।

***

इच्छा मन है। अपेक्षा बुद्धि।

***

जीवों की भूख शांत करने, उन्हें ऊर्जा देने व आवश्यक तत्वों की आपूर्ति करने हेतु, पृथ्वी अपनी उर्वरता का त्याग करने से नहीं हिचकती।

***

अज्ञानी में भी ज्ञानी छिपा है। उससे बस अ का त्याग हो जाए। अ अर्थात् अहं कारणम् (अहंकार)।

***

आप सिर्फ अपने और अपने परिवार को संवारने की ही जिम्मेदारी ले सकते हैं। इस सृष्टि को चलाने की जिम्मेदारी प्रकृति ने ले रखी है।

***

यात्रा प्रारंभ होने पर अपना शहर छूटता है। नए कस्बे आते हैं। पता चल जाता है कि गंतव्य की ओर बढ़े जा रहे हैं। मंजिल नजदीक आ रही है। फिर ये कैसे संभव है कि सत्य की ओर यात्रा प्रारंभ की नहीं। पुराना घर छूटा नहीं। नए कस्बे आए नहीं और हम यह मानते रहे कि मृत्यु के उस पार ईश्वर ही दरवाजा खोलेंगे। सभी के पास भीतरी दिशासूचक यंत्र होता है। जो उसे बताता है कि वह सत्य के निकट जा रहा है या दूर।

***

अपनी शक्ति के माध्यम से ही, प्रकृति से पुनः जुड़ा जा सकता है।

***

माया सिर्फ अधिकार जमाना चाहती है क्यूँकि वह भीतर से यह जानती है कि सामने वाला मेरा अपना भाग नहीं है। इससे पूर्ण समर्पण नहीं कराया जा सकता। इसी कारण वह द्वंद और भ्रम को जन्म देती है। वहीं शक्ति जानती है कि मेरा मात्र 'धर्म' है। इसी कारण उसे अधिकार जताने में रुचि नहीं।

***

शक्तिशाली अकारण समर्पण करता है और मायावी भयपूर्वक।

***

कुछ असफल देश ये नहीं समझ पाए कि धर्म पहचान उकेरने की स्याही नहीं, बल्कि पहचान मिटाने का उपाय है।

***

स्वभाव विभिन्न प्रकार के होते हैं। जैसे क्रोधी, कुटिल, अक्खड़, ममता, विनम्रता, दया, सीधा, कामुक, दंभी, लोभी, अहिंसक। धर्म स्वभाव पर कार्य करता है। अपने स्वभाव पर कार्य करना ही धर्म है। जब तक स्वभाव विनम्र व दयालु न हो, तब तक अशुद्ध स्वभाव अधर्म करने को विवश करता है।

***

अपेक्षा – मन द्वारा एक नियत स्तर निश्चित कर देना। यदि सामने वाला अपने प्रयास से, उसे छू लेता है तो अपेक्षा पूर्ण हुई। यदि वह इसे न छू पाये तो अपेक्षा पूर्ण न हुई और यदि वह इसे छूने का प्रयास ही न करे तो 'उपेक्षा' हुई।

***

चमत्कार देखकर संत घोषित करना ठीक वैसे ही है, जैसे मूर्ति देखकर ईश्वर का अस्तित्व स्वीकार करना। बुद्ध और महावीर ने अपने पूरे जीवन में कोई भी चमत्कार न किया था। फिर भी उन्हें भगवान कहा गया। ये भारतीय संस्कृति की समृद्धि को दिखाता है।

***

जीवत्व के बाद बुद्धत्व।

***

अतीत और भविष्य परिणाम देते हैं और वर्तमान समाधान।

***

मानेंगे बुद्धि से, जानेंगे चेतना से।

***

कारण तक पहुँच ही स्पष्टीकरण है।

***

जीव जगत् की एक मुख्य समस्या है, वह है व्यक्तित्व से आसक्ति।

***

असफलता सीख देती है, सीख सफलता को जन्म देती है। सफलता व्यक्तित्व निर्माण करती है। व्यक्तित्व समस्या को आकर्षित करता है। समस्या समाधान ढूँढती है।

***

जन्म से पहले और मृत्यु के बाद का हमारा जो स्वरूप है, वही सहज स्वरूप है। उसी स्वरूप को लेकर हर बच्चा जन्म लेता है।

***

ज्ञान मात्र वर्तमान में स्थित है। समयहीनता में मात्र आनंद।

***

बाइपोलर डिसऑर्डर में मन के भीतर ही दो ध्रुव बन जाते हैं। जो दो व्यक्तित्व देते हैं।

***

झूठ बोलने का कारण, या तो अपना स्वार्थ साधना है या फिर प्रतिक्रिया से भयभीत होना है।

***

जीव का कोई नाम नहीं होता लेकिन जीवित का होता है। जीव की कोई पहचान नहीं होती लेकिन जीवित की होती है।

***

हर विचारधारा के एक ओर उदासीनता होती है और दूसरी ओर उग्रवाद या अतिवाद। जैसे वर्तमान के एक ओर अतीत होता है और दूसरी ओर भविष्य।

***

सूक्ष्म स्त्री व पुरुष का मिलन शीर्ष पर होता है और स्थूल स्त्री और पुरुषों का आधार पर। आधार पर मिलन से व्यक्ति उपजता है और शीर्ष पर मिलन से चेतना।

***

रोशनी में वस्तुएँ साफ दिखती हैं और ज्ञान के प्रकाश में, अपना स्वरूप स्पष्ट दिखने लगता है।

***

जलवायु के आधार पर मकान बनते हैं और सभ्यता के आधार पर समाज।

***

आंतरिक दीपक में प्रकृति भी है और सत्य भी। दीपक प्रकृति है और प्रकाश सत्य। इस प्रकाश में परमात्मा चारों ओर स्पष्ट रूप से दिखते हैं।

***

समाज विभिन्नताओं का समूह है। हितों की रक्षा हेतु इनका गठन होता है।

***

समाज विभिन्न आधारों पर बँटे होते हैं –

1. लिंग, 2. स्थान, 3. धर्म, 4. जाति, 5. आय, 6. योग्यता, 7. यौन प्राथमिकताएँ, 8. व्यापार, 9. शिक्षा, 10. आयु।

***

वहीं चेतना जन्म लेते ही कार्य प्रारंभ कर देती है। चेतना जन्म से ही उपयोगी है। जैसे बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के तत्काल बाद एक गड़ेरिये द्वारा पूछने पर उसे बताया कि ब्राह्मण जन्म से नहीं, अपितु यह जीवन में प्राप्त की गई अवस्था है।

***

हर एक जन्म लेने वाली चेतना के पीछे भी, एक स्त्री का हाथ है और वह स्त्री है शक्ति।

***

पृथ्वी पर होने वाले युद्धों का तात्पर्य मात्र इतना है कि मनुष्य या तो इनमें छिपी असारता को समझ ले या इनके माध्यम से सार को प्राप्त कर ले। महत्वाकांक्षी के लिये युद्ध असारता ही लाएगा। वहीं अर्जुन जैसे क्षत्रिय के लिये युद्ध जीवन के सार को प्राप्त करने का माध्यम है।

***

द्विध्रुवीय व्यवस्था प्रकृति से प्रारंभ होती है और माया इसी द्विध्रुवीय व्यवस्था को चरम् देकर इसका दोहन करती है। सत्य के क्षेत्र में प्रवेश करते ही द्विध्रुवीय व्यवस्था समाप्त हो जाती है। बस एक परम सत्य बचता है।

***

प्रकृति में हर ध्रुव, दूसरे ध्रुव को अपनी पूर्णता के रूप में देखता है। जैसे पुरुष स्त्री को, स्त्री पुरुष को, और अभिभावक बच्चे को। लेकिन ये कभी भी एक दूसरे को पाकर पूर्ण नहीं होते।

***

हर कामयाब इंसान के पीछे, एक स्त्री का हाथ होता है और वह स्त्री है माया। इंसान के कामयाबी के लिये प्रयास करने के पीछे, माया का अपना हित छिपा है।

***

संसाधन दो प्रकार के होते हैं – 1. प्राकृतिक, 2. मानव निर्मित।

***

मजा मतलब रोमांच, नयापन। एकरूपता का टूटना।

***

हमारी पूरी दिनचर्या सुख की खोज है। सुबह चाय व अखबार, सुख, फिर संपत्ति, सम्मान सुख, शाम को संतान और फिर काम सुख। व्यायाम किया तो स्वास्थ्य सुख।

***

पदार्थ ही भावनाओं का कारण है। स्त्री, पुरुष एक दूसरे से भावनाओं से जुड़ते हैं। अपदार्थिक जगत् से जुड़ाव भाव से होता है। ईश्वर से भाव से ही जुड़ा जा सकता है। भक्त चित्त में ईश्वर को धारण कर, भाव से उनसे जुड़ता है। वहीं सत्य चित्त से भी परे है। उससे मात्र 'भा' अर्थात् प्रकाश अर्थात् ज्ञान से ही जुड़ा जा सकता है।

***

माया जिस भ्रामक जगत् का निर्माण करती है, वह है व्यक्तित्व-जगत्। यही वह जगत् है, जहाँ मनुष्य फँसे रहते हैं।

***

इच्छाएँ भविष्य की ओर खींचती हैं और कामनाएँ अगले जन्म की ओर।

***

शरीर के बँधन में बँधने की संभावना से मुक्ति 'मोक्ष' कहलाती है।

***

क्यूँ सुख के सब साथी? दुःख में न कोय। अर्थात् व्यक्तित्व ही दुख है। हर एक के साथ व्यक्तित्व है। जिसके पास खुद ही दुख है। वह दूसरे के दुख से भी दूर रहना चाहता है क्यूँकि दुख ही दुख को प्रतिकर्षित करता है।

***

सभ्यता धर्म का काम आसान कर देती है।

***

हिन्दू धर्म भारतीय सभ्यता है। हिन्दू शब्द पुराना नहीं है। भारतीय शब्द संस्कृति के प्रारंभ से है।

***

किसी आदत से ग्रसित होने के लिए इच्छा की आवश्यकता है और उस आदत से मुक्त होने के लिए इच्छाशक्ति की।

***

व्यक्तित्व के बँधन से मुक्त होना ही, समाधि क्षेत्र में प्रवेश करना है।

***

तमोगुणी व्यक्तियों का स्वभाव – हिंसक

रजोगुणी व्यक्तियों का स्वभाव – आक्रामक व जिद्दी

सत्वगुणी व्यक्तियों का स्वभाव – सरल होता है

***

सत्व गुणी व्यक्ति, एक दूसरे से नियत दूरी बनाए रखते हुए, आपस में सहज रहते हैं।

***

विपरीत गुणी व्यक्ति एक दूसरे की ओर आकर्षित तो होते हैं परन्तु आपस में सहज नहीं होते।

***

वर्तमान गुणों से मुक्त है।

***

इतिहास इसलिए अपने आप को दुहराता है क्यूँकि यह भी उन्हीं गुणों के प्रभाव में बीता है, जिन गुणों के प्रभाव में भविष्य बीतेगा।

***

भारतीयों की पहचान सभ्यता से है, धर्म से नहीं। यही उनकी सहिष्णुता का कारण है।

***

योग ही भारत की सभ्यता है। योग द्वारा निकला बोध ही भारत की संस्कृति है। शिव आदि योगी हैं। इस प्रकार भारतीय सभ्यता का जन्म शिव से है।

***

यज्ञ बतलाता है कि गुणों के जलने पर प्रकाश उत्पन्न होता है।

***

पुरुष के भीतर बीज (शुक्राणु) का निर्माण प्रकृति करती है। स्त्री के भीतर अंड का निर्माण भी प्रकृति करती है और उसे स्वयं में (प्रकृति) धारण करती है। अर्थात् पुरुष और स्त्री आपस में प्रकृति का आदान-प्रदान करते हैं लेकिन वे इस बात को जानते नहीं। बजाय इसके, वे मानना पसंद करते हैं कि पुरुष और स्त्री मिलकर 'अपनी' संतति उत्पन्न करते हैं।

***

वृक्षों को ज्ञात है कि उनकी उत्पत्ति प्रकृति से है। इसी कारण वे अपना बीज सीधे प्रकृति (भूमि) को दे दिया करते हैं। यह तथ्य जानने के कारण, उन्हें स्वयं को पुरुष और स्त्री के रूप में वर्गीकृत करने की आवश्यकता नहीं पड़ी।

***

प्रकृति द्वारा प्रदान किये गए आधार पर ही, व्यक्तित्व का निर्माण होता है। जैसे पृथ्वी द्वारा दी गई धरती पर ही, मकान का निर्माण होता है।

***

राजनीति अधिकारों का खेल है। यह व्यक्तित्वों के माध्यम से खेली जाती है। राजनीति के लिए शक्ति शब्द का प्रयोग उचित नहीं।

***

मनुष्य दुनिया में घूम–घूमकर भी असंतुष्ट है। वृक्ष एक जगह रहकर भी शांति विकरित करता रहता है।

***

जिस दिन आपके भीतर की स्त्री संतुष्ट हो गई, आप संतृप्त हो जाएंगे।

***

काम के चरम पर कुछ सेकेंड के लिए महसूस की गई, व्यक्तित्व मुक्त अवस्था का ठहर जाना ही समाधि है।

***

परंपरा = परम् + परा। परंपरा सभ्यता की होती है। बुद्धि की व्यवस्था होती है और मान्यताओं का दुहराव होता है।

***

जानने के बाद जुड़ना होता है और बिना जाने सम्बन्ध निर्मित होते हैं। सम्बन्धों का आधार मानना है।

***

दुर्योधन – क्रोध

दुःशासन – काम

कर्ण – मोह

शकुनि – लोभ

पाँच पांडव – पाँच यम

***

रणछोड़ - जिसने रण बनाकर, उसमें कर्ता न बनकर, साक्षी बनना स्वीकार किया।

***

अपरिग्रह अर्थात् मन व बुद्धि का परिग्रहरण न करना।

***

प्रकृति सबके चेतन स्वरूप के लिए उत्तरदायी है और सत्य चैतन्य स्वरूप के लिए। व्यक्तित्व का ख्याल, व्यक्ति को स्वयं ही रखना पड़ता है।

***

प्रकृति का चक्र वृत्ताकार है। मनुष्य की यात्रा सीधी रेखा (आरंभ से अंत)।

***

यदि आपने कभी किसी का कुछ बुरा नहीं किया, उसके पश्चात भी जीवन में कठिन समय चल रहा है तो दैव ने आपको तपाकर शुद्ध बनाने की प्रक्रिया प्रारंभ कर दी है।

***

काम व्यापारिक सुख है। स्त्री शरीर देती है और पुरुष शक्ति। लेन – देन के साथ ही यह प्रक्रिया आकार लेती है।

***

भावनाओं में प्रेमी महत्वपूर्ण है, प्रेम नहीं। भाव में प्रेम महत्वपूर्ण है, प्रेमी नहीं।

***

भावनाओं में बहकर आप किसी को मात्र वही दे सकते हैं जो भावनाओं के अंतर्गत है। जैसे धन, वस्तु, संपत्ति, सम्मान, मोह, काम आदि। भाव में स्थित हुए मात्र, प्रेम ही प्रदान किया जा सकता है। अन्य कुछ नहीं। इसी कारण बच्चे, माँ-बाप को और युगल एक दूसरे को भावनात्मक तौर पर ब्लैकमेल करते हैं क्यूँकि वे उनसे कुछ पाना चाहते हैं।

***

सम्बन्ध जिस सूत्र से जुड़ते हैं, वह है कर्तव्य। कर्तव्य व प्रकृति (स्वभाव) अलग-अलग है। कर्तव्य, स्वभाव को नियंत्रित करने का प्रयास करता है। इसी कारण बिगड़े लड़के की शादी करा दी जाती है। इस उम्मीद में कि वह कर्तव्यों से बँध सुधर जाएगा। वैरागी व्यक्ति पर और कर्तव्य डाला जाता है ताकि कर्तव्य से बँध अपने स्वभाव को भूला रहे।

***

मोह कर्तव्य है, प्रेम प्रकृति।

***

हर समस्या अतीत से जुड़ी है और हर डर भविष्य से।

***

विभिन्नता ही भटकाव की वजह है।

***

मोह की समाप्ति पर ही, प्रेम की शुरुआत है।

***

विकास सदैव शोर में होता है। उद्विकास शांति में।

***

जीभ हमेशा पेट से अन्याय करती है।

***

सांसारिक जगत् में जो स्थान राजा का है अध्यात्मिक जगत में वही स्थान स्वामी का है।

राजा पद है, स्वामी अवस्था है।

राजा प्रजा पर नियंत्रण स्थापित कर, पद पर रह सकता है। स्वामी मन पर नियंत्रण रख योगरूढ़ रहता है।

राजा कानून को माध्यम बनाता है। स्वामी यम व नियम को।

राजा सम्मान का भूखा है, स्वामी समत्व का।

राजा मोह से ग्रसित है, स्वामी प्रेम का वितरक।

राजा मायावी जगत् में फैलने का इच्छुक है, स्वामी चैतन्य जगत् में।

राजा भीतर से अकेला है, स्वामी भीतर से परिपूर्ण।

राजा संतुष्टि ढूँढ रहा है, स्वामी संतृप्ति।

राजा का ध्यान, प्राप्त करने में है और स्वामी का ध्यान, प्रदान करने में।

राजा अंधेरे में भयभीत है, स्वामी अंधेरे में मस्त।

राजा का आधिपत्य और द्वंद दोनों ही व्यक्तित्व जगत् से है, वहीं स्वामी व्यक्तित्व जगत् से टूट चुका है।

राजा भयभीत है, स्वामी भयमुक्त।

***

अतीत व भविष्य के पास प्रश्न है, वर्तमान के पास उत्तर। समयहीनता प्रश्न व उत्तर दोनों से ही परे है।

***

गीता समर्पण के पश्चात् ही उपलब्ध होती है। समर्पण के पहले गीता की उपलब्धता संभव नहीं। अर्जुन को भी गीता समर्पण के पश्चात् ही प्राप्त हुई।

***

भारत में औरतों को देवी कहकर, उनकी सभी स्वतंत्रता छीन ली गई।

***

कृपण कहता है कि चमड़ी जाए, पर दमड़ी न जाए। गुणी कहता है धन जाए, पर गुण न जाए। लोभी कहता है भले सब जाए, पर सम्पत्ति न जाए। सम्मानित कहता है कुछ भी जाए, पर सम्मान न जाए। अधिकारी कहता है चाहे जो भी जाए, पर अधिकार न जाए। योगी कहता है सब चला जाए, पर शक्ति न जाए।

***

दुनिया जीतने हम तब निकलते हैं, जब हम अपने मन को नहीं जीत पाते। जो अपने मन को जीत गए, उन्हें दुनिया जीतने की आवश्यकता नहीं।

***

ईश्वर का न भूत है और न भविष्य। बुद्ध का भूत तो है लेकिन भविष्य नहीं। मनुष्य का भूत भी है और भविष्य भी।

***

रेलगाड़ी के साथ दौड़ते हुए, रेलगाड़ी के डिब्बों को नहीं गिना जा सकता। ऐसा करने हेतु, एक जगह पर स्थित होना होगा। जीवन के साथ दौड़ते हुए, जीवन को नहीं देखा जा सकता। एक जगह ठहर कर, सामने से गुजरते जीवन को देखा जा सकता है।

***

ताश के पत्तों से एक संरचना बनाई जाए। संरचना में कुछ गुण आ जाएँ, जिन्हें वो अभिव्यक्त भी कर सके। ये संरचना ही अपनी पहचान बन जाए। फिर एक दिन पंखा चला और संरचना बिखर गई। गुण व पहचान विलुप्त हो गई। जीवन भी कुछ ऐसा ही है।

***

महर्षि पतंजलि का शरीर, सर्प के समान कहा गया। मुख से विष निकलना बताया गया। सर्प उनकी कुंडलिनी शक्ति को अभिव्यक्त करता है और विष उनकी बातों को। वे जो भी बोलेंगे, आपकी पहचान और व्यक्तित्व के विरोध में। मन को ऐसी बातें विष समान ही प्रतीत होती हैं।

***

भावनाएँ जुड़ी हैं, अपेक्षा और उपेक्षा से।

***

मोह के कारण प्रकट हुए अश्रुओं को, 'भावुक' होना कहा जाता है। लेकिन वास्तव में ये भावनाशीलता है।

***

सफलता मन के अनुसार जीवन जीने में, संतुष्टि स्वभाव के अनुसार जीने में और शांति यम के अनुसार जीने से मिलती है।

***

असंतुष्टि से दुःख उपजता है और असफलता से उत्तेजना।

***

कर्म जब सफलता की बजाए संतुष्टि के लिए किया जाए, तब वह कर्मयोग बन जाता है।

***

बुद्ध के लिए मृत्यु, मृत्यु नहीं रुपान्तरण है।

***

व्यक्तित्व जगत् ही माया जगत् है।

***

जैसे ही मनुष्य, व्यक्तित्व जगत् से जुड़ जाता है। वह बाहर से सम्पन्न और भीतर से विपन्न होता चला जाता है।

***

अतीत – भावुक

भविष्य – उत्तेजक

वर्तमान – संतृप्त

***

जीवन के तीन बड़े निर्णय लिये जाते हैं-

1. सफलता के लिए, 2. संतुष्टि के लिए, 3. संतृप्ति के लिए।

**

हार्मोन्स पर निर्भरता कुछ वैसी ही है, जैसे नशे पर निर्भरता। नशे के लती को, जब नशा न मिले तो परेशान हो जाता है। वैसे ही हार्मोन्स का स्त्रावण कम होने की स्थिति में, व्यक्ति असंतुष्ट हो जाता है।

***

आय = यम की आमद

व्यय = यम की कमीं

***

समाज आपको बताता है कि आप सफल हुए या नहीं। आप समाज को बताते हैं कि आप संतुष्ट हुए या नहीं।

***

कृष्ण कहते हैं कि स्वभाव के अनुसार कार्य करो ताकि एक ही कार्य में सफलता और संतुष्टि दोनों प्राप्त कर सको।

***

परिवार सफलता प्राप्त करने का अधिकार देने व इसमें सहायता प्रदान करने हेतु है। समाज संतुष्टि प्राप्त करने का अधिकार देने व इसमें सहायता प्रदान करने हेतु है।

***

हर वो विचार जिसे फैलाया जा सके, विचारधारा बन जाता है।

***

प्रकृति द्वारा किए गए कार्यों को व्यक्तित्व, अपने द्वारा किया गया कहता है। यही कारण है कि व्यक्तिगत जगत् अर्थात् माया जगत् का कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है।

***

जीव, जीवन, चेतन और चैतन्य से सम्बन्धित रहस्यों को जानना ही, सत्य को जानना है।

***

राजनीति नामक खेल, जानकारी और समझ से खेला जाता है।

***

मैं के समाप्त होते ही, संतुष्टि ढूँढने का खेल भी समाप्त हो जाता है।

***

आत्म में स्थित हो जाना शांति है और आत्मा में स्थित हो जाना आनंद।

***

संतान अदृश्य होती है और बच्चा दृश्य। बच्चे का माँ के शरीर से सम्बन्ध टूटता है और संतान का उस शरीर के मोह से सम्बन्ध टूटता है, जिसमें वो रहता आया है। संतान को पुरुष भी जन्म दे सकते हैं क्यूँकि उनके भीतर भी प्रकृति है। लेकिन बच्चे को जन्म देने हेतु, स्त्री शरीर की आवश्यकता होती है। संतान के बीज भीतर हैं। बच्चे का बीज, बाहर से प्राप्त होता है। संतान की प्राप्ति पर मोक्ष प्राप्य है। बच्चे का अभिभावक की मुक्ति से सम्बन्ध नहीं। बच्चा दक्षिण दिशा से और संतान उत्तर दिशा से पैदा होती है। संतान अधिकतर बच्चे होने के बाद पैदा होती है लेकिन कभी-कभी यह बच्चा होने के पहले भी हो सकती है।

***

भविष्य उत्तेजक है और उत्तेजना द्विध्रुवीय व्यवस्था से जुड़ी है। इसी कारण बुद्ध भविष्य की बातें नहीं करते। बुद्ध द्विध्रुवीय व्यवस्था से दूर हैं।

***

अतीत और भविष्य एक दूसरे के पूरक ध्रुव हैं। वर्तमान का कोई पूरक ध्रुव नहीं। इसी कारण वह मात्र समयहीनता में विलीन हो सकता है।

***

हवाई जहाज पक्षी से भयभीत है। पक्षी हवाई जहाज से भयभीत नहीं। बुद्धि शक्ति से भयभीत है, शक्ति बुद्धि से भयभीत नहीं।

***

हर सृष्टि को एक ही सूर्य प्रकाशित करता है।

सृष्टि – शरीर

सूर्य – चेतना

***

समझ का आवलंबन छोड़, अपनी आंतरिक आवाज़ का अनुसरण करना, मुक्ति की शुरुआत है।

***

समय का पता न चलना अर्थात् मन का निष्क्रिय हो जाना।

***

हमारा मुख्य बंधन समाज या गरीबी नहीं, हमारा मुख्य बंधन है समय।

***

बुद्धि के प्रशिक्षित न होने की दशा में, व्यक्ति को ज्यादा आय की अपेक्षा में, दूसरे राज्यों या देशों की ओर जाना पड़ता है। मन उसे खींचकर बाहर ले जाता है और मन ही उसे घर

की ओर खींचता रहता है। वह व्यक्ति मन की खींचतान, अच्छे से समझता है। इसी कारण वह अपने बच्चे को शिक्षित (बुद्धिमान) बनाना चाहता है।

***

स्वर्ग में भोग ज्यादा है, सीख कम। नर्क में सीख ज्यादा है, भोग कम।

***

फकीर वो है जिसके लिए कल, आज और कल में कोई अंतर नहीं।

***

अपेक्षा की जाती है कि पत्नी शर्म करे ताकी पति के मन में शक का बीज न पैदा हो।

***

व्यक्तित्व – उपस्थित है

चेतना – स्थित है और

चैतन्य – स्थिति है

***

आकर्षण ही अपेक्षा में बदल जाता है।

***

प्रकृति को कार्य करते हुए, देखता रहने वाला ही दृष्टा है।

***

इन्द्रियों से ऊर्जा निकलती है और नाड़ी से शक्ति।

***

एक लिंग विशेष का शरीर और इसमें रहने वाला व्यक्तित्व ही अभिनेता और पात्र हैं। शरीर मेकअप और व्यक्तित्व, पात्र या कैरेक्टर बन जाता है।

***

अवलोकनहीन जीवन जानवर समान जीवन है। जिसमें जीवनभर जुते रहने और बोझा ढोने के बाद जान पाना संभव नहीं हो पाता कि जुते क्यूँ थे? बोझ क्यूँ ढो रहे थे।

***

परिवार से हमें संतुष्टि और सुरक्षा मिलती है। जिसे हम 'प्रेम और प्रसन्नता' मान लेते हैं।

***

शिक्षा	दीक्षा
शिक्षा बुद्धि का विकास करती है।	दीक्षा मन को रुपांतरित करने हेतु है।
बुद्धि को विकसित कर, मन को उड़ान भरने की स्वतंत्रता दी जाती है।	मन को लक्ष्य दे, उसकी उड़ान को नियंत्रित किया जाता है।
शिक्षा दूसरे आयाम (बुद्धि) पर कार्य करती है	दीक्षा तीसरे आयाम (चेतना) पर कार्य करती है
विद्या से परिचय कराती है	ज्ञान से परिचय कराती है
बाहरी दुनिया से परिचय कराती है (मैटेरियलिस्टिक) दुनिया की समझ देती है।	भीतरी दुनिया से परिचय कराती है (स्पीरिच्युअल) दुनिया की ओर ले जाती है।
सोशल नेटवर्किंग पर ज़ोर	सेल्फ नेटवर्किंग पर ज़ोर
व्यक्तित्व पर कार्य करती है	चेतना पर कार्य करती है

शिक्षक की आवश्यकता	गुरु की आवश्यकता
विज्ञान की ओर ले जाती है	ज्ञान की ओर ले जाती है
अहंकार को सघन करती है	अहंकार को विरल करती है
महत्व की ओर	शून्यता की ओर
विभिन्नता की ओर	विभिन्नता से परे
सामाजिक स्तर में वृद्धि करती है	अध्यात्मिक स्तर में वृद्धि
पहचान और नाम को सुदृढ़ करती है	पहचान और नाम को मिटाने पर कार्य
अधिकारों को प्रमुखता	प्रेम को प्रमुखता
मन के बारे में पढ़ा जा सकता है, जाना नहीं	मन के बारे में जानना, अहंकार से मुक्ति के बाद संभव है।

***

मृत्यु का विपरीत अमरता नहीं, जन्म है। अमरता का कुछ भी विपरीत नहीं। यह अद्वैत है।

***

बल दूसरों से जीतता है व विनम्रता दूसरों को जीतती है।

***

एक पेड़ के द्वारा व्यक्ति की आंतरिक संरचना को समझा जा सकता है।

पत्तियाँ – व्यक्तित्व

तना – जीव

जड़ – चेतना

धरती और सूर्य – चैतन्य

देखने में नहीं लगता कि धरती और सूर्य भी पेड़ का ही भाग हैं लेकिन दोनों के बिना पेड़ का अस्तित्व संभव नहीं।

***

भगवान विष्णु की चार भुजाएँ –

शंख – वाचाल मन (ऊर्जा को ध्वनि में परिवर्तित करने वाला)

गदा – बल

चक्र – प्रकृति का चक्र

कमल – आत्मा

***

अपनों की आवश्यकता इसी कारण है कि कोई पराया है। पराए की अनुपस्थिति में अपने की आवश्यकता न होगी।

***

जब समाज ने वानप्रस्थ में जाना बंद कर दिया, तो नियति ने गृहस्थी को ही वानप्रस्थ में परिवर्तित कर दिया। वानप्रस्थ अर्थात् स्वयं की सफाई। मुक्ति मोह, लोभ, क्रोध व काम से।

***

दीपक की अपनी कोई पहचान नहीं। वह अपनी पहचान मिटाने को ही जल रहा है।

***

(बाहर) शरीर → गुण → शांति → ज्ञान → आनंद → शून्य **(भीतर)**

***

धर्म के होने का कारण ही है कि इस जगत् से परे भी कोई जगत् है। इस आयाम से परे भी कोई आयाम है। अध्यात्म उसी आयाम की व्याख्या करता है।

***

ढूँढने से नहीं, भगवान प्रेम से मिलते हैं।

***

राधा क्यूँ गोरी, मैं क्यूँ काला?

राधा (प्रकृति) इसलिए गोरी क्योंकि वो दृश्य है। मैं (कृष्ण) इसलिए काला क्यूँकि ईश्वर अदृश्य है।

***

भोला – जिसके पास बुद्धि है लेकिन वह उसका उपयोग नहीं करता। भोलापन चयन है।

***

भोंदू – जिसके पास बुद्धि नहीं, इस कारण वह उसका उपयोग नहीं कर सकता। भोंदूपन बाध्यता है।

***

जब जीवन के दोनों छोरों पर आनंद हो जाए। तब आपने लक्ष्यों को पा लिया।

***

स्त्रैण रूप में प्राप्त अवसर ही अप्सरा है।

***

दिन और रात चक्र से सम्बद्ध हैं। मौसम में चक्रीय परिवर्तन है। ऊर्जा स्वरूप बदल रही है। तो ये कौन है जो नष्ट हो रहा है? उत्तर है 'व्यक्तित्व'।

***

जहाँ और जिनमें, प्रकृति अपने मूल स्वरूप में अभिव्यक्त हो रही है। वही भगवान है।

***

अपने तात्कालिक अकेलेपन को दूर रखने के लिए, व्यक्ति परिवार बनाता है और बढ़ाता है तथा यह उम्मीद करता है कि भविष्य में यही परिवार, उसे अकेलेपन से दूर रखेगा। बुढ़ापे की लाठी का तात्पर्य यही है।

***

सनातन धर्म इस कारण अनोखा है क्यूँकि यह स्वीकार करता है कि ईश्वर प्राप्ति के एक नहीं, अनेक मार्ग हैं और यह उन सभी को मान्यता देता है। सनातनता उस माँ के समान है, जिसके कई बच्चे हैं। विभिन्न धर्म इसके विभिन्न बच्चों जैसे हैं। जैसे प्रकृति ही एकमात्र माँ है। वैसे ही अध्यात्म ही, सभी धर्मों की एकमात्र माँ है।

***

अनुभव व्यक्तिगत होता है और दर्शन परिस्थितिजन्य। अनुभव व्यक्तिगत है और दर्शन सामाजिक।

***

सारा ज्ञान शांति से निकलता है। जैसे सारे गुण प्रकृति से निकलते हैं।

***

जो सब पाता है, वो सब छोड़ता भी है। जो सब छोड़ता है, वो सब पाता भी है। ये सृष्टि यूँ ही चलती है। आप चाहें तो थोड़े में ही गुजारा करते रह सकते हैं या सब पाने की ओर बढ़ सकते हैं।

***

बुद्धि समस्या का समाधान ढूँढती है और मन समाधान को समस्या में बदलने के उपाय।

***

जो सूक्ष्म है, वही तो विस्तृत है। जो स्थूल है, वह तो सीमित है।

***

दुनिया से जुड़ने के बाद दूसरा चरण होता है, इस पर अधिकार करना।

***

दुनिया से तो हम जुड़े ही हुए हैं। अब खुद से जुड़ना बाकी है।

***

जीवन का एकमात्र लक्ष्य, स्वयं से सम्बन्ध जोड़ना है।

***

जिस देश की सेना अपने लक्ष्यों को जानती है, वह अनुशासित होती है। शांतिकाल में वह स्वयं को तैयार करती है व निर्देश पाकर ही वह सक्रिय होती है। वहीं जिस देश की सेना को अपने लक्ष्यों का पता नहीं, वह दिग्भ्रमित व अति सक्रिय होती है और कई बार वह देश पर ही नियंत्रण कर बैठती है। हमारा जीवन भी कुछ इसी प्रकार का है। जब मन को अपने लक्ष्य प्राप्त हो जाते हैं, तो वह अनुशासित हो जाता है वरना अति सक्रिय रहकर एक समस्या बन जाता है।

***

मरने के बाद ही तारीफ क्यूँ होती है? क्यूँकि मूल्यांकन तभी प्रारंभ होता है, जब अपेक्षा और परीक्षा समाप्त हो जाए। शरीर के रहने तक अपेक्षा और परीक्षा रहती है।

***

आविष्कार नए का होता है लेकिन खोज पुराने की होती है। वह जो आपके साथ पहले था लेकिन कालांतर में बिछड़ गया। पाने वाले को ऐसा नहीं लगता कि, किसी नए को पा लिया। उसे वही मिलता है, जो हमेशा से था। जैसे काम ही क्रोध में बदल जाता है। वैसे ही इच्छा ही भय में बदल जाती है। जिसके पास इच्छा नहीं, उसके पास भय भी नहीं।

***

प्यार के लिये यार की जरूरत है लेकिन प्रेम को किसी बाहरी आवलम्बन की आवश्यकता नहीं। क्यूँकि वह पैदा भीतर होता है और प्रवाहित बाहर की ओर होता है। प्रेम वह गंगा है, जिसका गोमुख भीतर है।

***

'लेन' वह करता है जिसे आवश्यकता है या लोभ है। 'लेन-देन' व्यापारी करता है। 'देन' प्रकृति करती है तथा ईश्वर इस सम्पूर्ण तंत्र का कारण है।

***

कुछ लोग जीवन से जुड़े अनुभव लेने आते हैं और कुछ इसे समझने।

***

जीवन के साथ बहना व प्रकृति के साथ बहना, बिल्कुल अलग है।

***

अखण्ड ज्योति अर्थात् प्रकृति का शरीर में सतत् प्रवाह। स्वयं में दीप प्रज्जवलन कर, उसे जलाए रखना ही एकमात्र कर्तव्य है।

***

गीता के आने की तैयारी, राम के साथ ही प्रारंभ हो गई थी।

***

भावना = न प्रकाश और न वर्तमान

भाव = भा (प्रकाश) + व (वर्तमान)

भा = पूर्ण प्रकाश अर्थात् पूर्ण ज्ञान।

***

विश्वास = भरोसा कि मेरी इच्छा पूर्ण करेंगे।

***

श्रद्धा = जो करेंगे, वो ही अच्छा होगा।

***

वर्तमान अर्थात् इस एक क्षण की शक्ति का भीतर की ओर जाना, चेतना की ओर जाना। इस प्रकार आप उपस्थित होते हुए भी बाहरी दुनिया से कटे होते हैं। इस प्रकार आप उपस्थित होते हुए भी कर्ता नहीं होते, दृष्टा हो जाते हैं।

***

समझ से किया गया कार्य, थकान पैदा करेगा ही।

***

शून्यता ही संपूर्णता है।

***

अगर काम से पूर्णता मिलती, तो चंगेज खान आज के भगवान होते। कासानोवा का एक धर्म होता, मंदिर होते। क्लियोपैट्रा से बड़ी कोई देवी न होती। लेकिन कहाँ हैं ये, आजकल? इतिहास में!

***

पुनर्जन्म कुछ और नहीं, बस अपने अस्तित्व को पाने का बारम्बार प्रयास है और ये प्रयास तब तक चलता रहेगा, जब तक स्वयं को प्राप्त न कर लिया जाए। मन के लिए हम जीवनभर कितना कुछ करते हैं। तो यह किस प्रकार संभव है कि हम अपनी आत्मा के लिए कुछ भी न करें। कुछ काम तो उसके भी पूर्ण करने होंगे। जैसे मन के लिए काम न करने पर चैन नहीं, वैसे ही आत्मा के लिए काम न करने पर सम्पूर्णता नहीं।

***

भारत ने बताया कि विज्ञान से महत्वपूर्ण आत्मज्ञान है। विज्ञान से जहाँ विजातिय को जाना जा सकता है, वहीं ज्ञान से स्वयं को। विज्ञान समझ सकता है, लेकिन जान नहीं सकता। विज्ञान यदि सृष्टि के रहस्य जान भी ले तो भी वह इंसान को भय, चिंता से मुक्त नहीं कर सकता। वो मात्र उपचार कर सकता है, मुक्त नहीं।

***

किसी को कुछ बताने के लिए, मन की आवश्यकता है। लेकिन मात्र देखने के लिए मन की कोई आवश्यकता नहीं। यही एकमात्र काम है, जो मन के बिना किया जा सकता है। इसे दृष्टा होना कहते हैं।

***

खुद को खो देने के बाद दो आवश्यकताएँ होती हैं–

1. अपनी पहचान खोजना, 2. अपना अधिकार पाना।

***

खुद को पा लेना ही, योग प्राप्त कर लेना है।

***

मृत्यु से पहले यदि आपने खुद को पा लिया तो जो खोजने आप आए थे, वो आपने पा लिया। फेल होने वाले बच्चे को बार-बार परीक्षा में बैठना होता है, जब तक कि वो पास न हो जाए। ठीक उसी प्रकार, जीव को बार बार शरीर लेना होता है। जब तक कि वो खुद को न पा ले। खुद को पाकर बुद्ध ने लौटकर, राज्य को वापस न पाना चाहा। कहा कि राज्य को छोड़ा जा सकता है, खुद को नहीं। खुद को पाकर महावीर ने कपड़े भी त्याग दिये। बोले मैंने खुद को पा लिया, अब कपड़ों की भी आवश्यकता नहीं।

***

सहजता आसान नहीं, यह बहुत कठिनाई के बाद मिलती है। कई जन्मों की तपस्या और तपन के बाद, यह आपकी तपस्या का फल है।

***

काल के परे की अनुभूति ही आनंद है।

***

जीवन नामक ये पूरा खेल, मात्र समय का खेल है।

***

शक्ति के माध्यम से जीवात्मा द्वारा तय की गई दूरी ही यात्रा है।

***

काम कुछ और नहीं अपितु जीव को काल से बाँधे रखने का हेतु है। जो ऊर्जा जीव काम में खर्च करता है, उसे ही अपने बंधन को विखण्डित करने में प्रयुक्त कर सकता है।

***

न सत्य को पाने के प्रयास की आवश्यकता है, न बोध की इच्छा की। न मुक्ति की कामना की ही आवश्यकता है और न ज्ञान की। आवश्यकता मात्र सहजता की है। फिर सभी कुछ आपको स्वतः ही प्राप्त हो जाएगा।

***

'अतीत' शक्ति के माध्यम से जीव द्वारा व्यतीत वह समय/काल है, जब वह स्वयं को ढूँढ रहा था।

***

'भविष्य' शक्ति के प्रयोजन से जीव द्वारा व्यतीत वह कालखण्ड होगा, जब वह स्वयं को खोजेगा।

***

विचलित = विजातिय की ओर चलित।

***

समाज के साथ रहकर, समझ प्राप्त होती है।

***

स्वयं को जानना ज्ञान है और प्रकृति को जानना बोध।

***

प्रकृति के साथ रहकर, बोध प्राप्त होता है।

***

जो भी होता है, बीज और प्रकृति के बीच होता है। किसान को बस फसल पर अपने अधिकार से मतलब है।

***

स्वभाव पर सतत् कार्य कर, उसे निर्मल करना ही वैश्विक धर्म है।

***

जवानी में अर्जी होती है। बुढ़ापे में शक्ति के चले जाने पर मात्र अर्ज या इच्छा ही बचती है।

***

जो अंदर है, वही जब बाहर हो जाता है। उसे ही 'स्थित-प्रज्ञता' कहते हैं।

***

सुख, अपेक्षाओं के परिपूर्ण होने और दुख अपेक्षाओं के पूरे न होने का परिणाम है।

***

शक्ति बहुत सारे दुखों से बचाती है, जैसे विद्युत हमें ठंड से बचाती है।

***

त्याग करने की क्षमता का होना ही शक्तिशाली होना है।

***

सारे प्रयोग समय की परिधि में ही किये जाते हैं। समय से परे कोई प्रयोग नहीं है।

***

चेतना को शब्द नहीं चाहिए। न ही अपने मन के बोले हुए, न ही किसी और के मन के बोले हुए। उसे अनुभूति चाहिए। किसी अनुभूति प्राप्त व्यक्ति की शुद्ध बुद्धि से निकले शब्द, श्रोताओं की चेतना तक पहुँचते हैं।

***

अद्भुत है स्त्री शरीर। इसमें बच्चे को जन्म देने और भोजन देने, दोनों की व्यवस्था उपलब्ध है।

***

प्राणायाम प्राण शक्ति (हीलिंग पॉवर) देता है। आसन शरीर को लचीला बनाता है।

***

'मैं' समझ पर चलता है और चेतना बोध पर।

***

'जस की तस घर दीनी चदरिया – कबीर।' जिस रूप में शक्ति, कबीर को प्राप्त हुई, उसी रूप में उन्होंने उसे, स्वयं के भीतर से प्रवाहित होने दिया और वह अपने मूल स्वरूप में प्रकृति से जा मिली।

***

या तो आप जिम्मेदारी ओढ़कर, पूरी जिन्दगी उसे निभाने में बिता देंगे या फिर स्वयं के माध्यम से प्रकृति को अभिव्यक्त होते हुए देखेंगे। इस प्रकार आप उसे पुष्पित, पल्लवित और फलित होते हुए, देखने का सुख प्राप्त करेंगे।

***

धार्मिक वह है, जो समर्पण को तैयार है। समर्पण से पहले व्यक्ति धार्मिक नहीं। जो निष्काम कर्म और निष्काम उपासना तक उतर आया, वही धार्मिक है।

***

यदि आज परिपूर्ण है तो हमें कल क्यूँ चाहिए? हमें आज चाहिए। कल मात्र एक आशा है। परिपूर्णता की आशा।

***

प्रकृति के लिए अतीत या भविष्य जैसे शब्दों का कोई मतलब नहीं। उसकी सुंदरता अक्षुण्य है। अपरिवर्तनशील है। ये सुविधा न शरीर को और न व्यक्तित्व को ही प्राप्त है। सुंदरता की उपमा ही प्रकृति से है क्यूँकि उसमें कोई परिवर्तन नहीं।

***

इच्छा का फल प्राप्त होता है और अपेक्षा का परिणाम।

***

बोध अर्थात् पता चलना (भीतर से)

***

आवश्यकता आविष्कार की जननी है अर्थात् मन, बुद्धि की जननी है।

***

विरासत वे पद्चिह्न हैं, जिन्हें व्यक्ति अपने जीवन में छोड़ जाता है। कुछ पद्चिह्न स्मृति की रेत में, तो कुछ पत्थरों पर छोड़े जाते हैं। कुछ भावनाओं में, तो कुछ भाव जगत् में छोड़े जाते हैं।

***

धर्म खुद तक पहुँचने की कोशिश है और अध्यात्म खुद की समझ। धर्म वे मार्ग हैं जो नियत गंतव्य तक पहुँचाते हैं और अध्यात्म ही वह नियत गंतव्य है, जहाँ तक विभिन्न धर्मों के मार्ग आते हैं। धर्म का पालन होता है, आत्म तक पहुँचने के लिए। आत्म से आत्मा तक का मार्ग, अध्यात्म बताता है।

***

धर्म जिस स्त्रोत की ओर इंगित करता है, अध्यात्म उसी स्त्रोत से परिचय कराता है। धर्म इहलोक से मुक्ति का मार्ग है। अध्यात्म परलोक से परिचय का। धर्म में चिह्न हैं, अध्यात्म में उन्हीं चिह्नों का स्पष्टीकरण। धर्म अहंकार से प्रेम की ओर यात्रा है। अध्यात्म प्रेम में स्थिति।

***

हवा कब बहेगी, उसे भी नहीं पता। वो बस बहना जानती है, समय को नहीं जानती। बहना स्वभाव है और समय समझ।

***

जीवन का मतलब तो बँधना और छूट जाना है।

***

हम देखते बाहर और जलते भीतर रहते हैं। वास्तव में होना ठीक विपरीत है। देखना भीतर और जलना बाहर है ताकि वातावरण ज्ञान रूपी प्रकाश और प्रेम रूपी ऊष्मा प्राप्त कर सके।

***

जिसका भोग किया जा सकता है, उसे अपना भाग नहीं बनाया जा सकता। यही कारण है कि संसार किसी को पूर्णता नहीं देता। संसार का भोग तो किया जा सकता है लेकिन इसका भाग नहीं बना जा सकता।

***

धन हमें अमीर नहीं बनाता, बस हमारी गरीबी को छिपा लेता है। जैसे मेकअप हमें सुंदर नहीं बनाता, बस हमारी कमियों को छिपा लेता है और खूबियों को उभारता है।

***

काम सुख प्राप्त करने के लिए, अपनी ही शक्ति की आवश्यकता होती है। बाहर से सिर्फ उद्दीपन प्राप्त होता है।

***

मजबूरी नहीं, मजबूती का नाम महात्मा गाँधी है।

***

गुड और ग्रेट में अंतर –

गुड – जिसमें गुणों की झलक दिखाई दे।

ग्रेट – जिसमें प्रकृति की झलक दिखाई दे।

***

आपका स्वभाव ही आपका आश्रय है।

***

मौसम अर्थात् जो सम रहे। विचारधारा मौसम को भी असमान्य कर रही है। इसका सबसे ज्यादा खामियाजा भी मनुष्य जाति को ही उठाना होगा। क्यूँकि वही सबसे ज्यादा असहज है।

***

बीमारी जो कराये, वो है परहेज। इच्छाशक्ति जो कराये वो है तप।

***

सभी भावनाएँ और भाव, अपनी आंतरिक शक्ति के कारण हैं। बाहर से तो मात्र उद्दीपन और उत्तेजना प्राप्त होती है।

***

बुद्ध का 'सम्यक' अर्थात् स्वयं को आवश्यकताओं पर रोक लेना।
न आवश्यकताएँ समाप्त करनी हैं और न इच्छाओं की ओर जाना है।

***

लड़के के परिवार को लगता है कि लड़की परिवार में खपने आ रही है। लड़की का परिवार मानता है कि लड़की खुशी पाने जा रही है। वहीं लड़की, अपनी एक नई दुनिया बसाने निकलती है।

***

योग एक कुर्सी के समान है और व्यक्ति एक मोटे इंसान की तरह, जो अपने आकार की वजह से कुर्सी में फिट नहीं हो पा रहा। गीता के अनुसार, योग-क्षेम की इच्छा न करो अर्थात् अपने मन से, हर प्रकार से दूरी बना लो। इस प्रकार व्यक्ति अपने मूल स्वरूप में लौट आता है और तब वह योग रूपी कुर्सी उसके लिए स्वतः ही उपलब्ध हो जाती है।

***

आतंकवाद व अनियंत्रित विकासवाद, दोनों ही चरमपंथी विचारधाराएँ हैं। आतंकवाद प्रत्यक्ष तो अनियंत्रित विकासवाद परोक्ष रूप से हानि करता है। आतंकवाद मानवता के खिलाफ तो अनियंत्रित विकासवाद जीवन के खिलाफ है।

***

साम्य से विस्थापित होने पर ही, अच्छाई या बुराई की संभावना बनती है। जो साम्य में है, वो अच्छाई और बुराई दोनों से परे है।

***

गाढ़ी दोस्ती : जब दोस्ती में दोनों का अहंकार आड़े नहीं आता और दोनों अपने स्वभाव को नहीं छोड़ते।

***

प्रगाढ़ अर्थात् सत्य में ऐसे घुले कि अपना व्यक्तित्व घुलने लगा। सत्य की झलक आने लगी। लेकिन अपना व्यक्तित्व अभी पूरा घुला नहीं और सत्य पूरी तरह प्रकट और स्थापित हुआ नहीं।

***

आपको लगता है कि ईश्वर मदद नहीं करते। आपके स्वभाव के रूप में, ईश्वर जीवन के हर निर्णय में आपके साथ हैं।

***

स्वभाव वह संचित धन है, जिसे हर जन्म में व्यक्ति एकत्र व समृद्ध करता चला जाता है और यह धन हर जीवन में व्यक्ति के साथ रहता है।

***

स्वभाव शक्ति है।

***

पूरी दुनिया जिस प्रेम और सुख की तलाश में भाग रही है। योगी को वही प्रेम और सुख, एक ही जगह पर बैठे-बैठे प्राप्त होते हैं। इसी कारण योगी ठहरा हुआ है। उसे भविष्य से कुछ लेन-देना नहीं।

***

स्वभाव उस मीठे फल के समान है, जो पक जाने पर, संपर्क में आने वाले को मिठास से भर देता है।

***

भाव स्थिर रहता है। चेतना उसमें प्रवेश करती और बाहर निकलती है। भाव में कोई परिवर्तन नहीं होता। वहीं भावना, हर विचार के साथ बदलती रहती है।

***

विचार के कारण, अंतस में आया परिवर्तन ही भावना कहलाता है।

***

भावना में बहना अर्थात् अशांत समुद्र में नाव खेना। भाव में स्थित होना अर्थात् शांत गंगा की लहरों में बहते चले जाना।

***

प्यार भावना है और प्रेम भाव।

***

तीसरी आँख वह है, जो तीसरे आयाम में देख सकती है।

***

अपनी ऊर्जा का उपयोग, अपनी मुक्ति हेतु करना ही साधना है।

***

मॉल और स्वर्ग एक जैसे हैं। जिसमें आप भले ही कितनी देर क्यूँ न रह लें। बाहर निकलना ही पड़ता है।

***

भारतीय दर्शन मुक्ति की बातें करता है। अब मुक्ति की बातें वही कर सकता है, जो अपने मूल स्वरूप को जानता हो और जिसने मुक्ति का अनुभव किया हो।

***

जिस आवरण के माध्यम से दुनिया से हम सम्बन्ध बनाते हैं, उसे ही व्यक्तित्व कहते हैं।

***

संतोष : स्वयं को आवश्यकता पूर्ति पर रोक लेने की शक्ति ही संतोष है। संतोष वह दीवार है, जिसमें एक तरफ शांति व दूसरी ओर हलचल है।

***

संतुष्टि उषा हेतु ईंधन उपलब्ध कराती है। संतोष स्वभाव से उपजता है। दबाव डालकर, संतोष नहीं कराया जा सकता। ऐसा प्रयास करने पर असंतोष उभरता है। असंतुष्ट को असंतोष है, संतुष्ट को संतोष। संतोष स्वभाव के वृक्ष पर लगने वाला फल है। संतोष संक्रामक है। जहाँ प्रेम है, वहाँ संतोष है।

***

क्या इच्छा ही समय है?

***

स्वयं को आवश्यकताओं तक सीमित कर लेने पर, अवेयरनेस पैदा होती है।

***

प्यार स्वयं पर आए या किसी और पर। आता वह सदैव बाहर से ही है।

***

आवश्यकता व शरीर की महत्तम वहन करने की क्षमता के बीच का स्थान, इच्छा से परिपूर्ण होता है।

***

आवश्यकता पूर्ति हेतु आवश्यक ऊर्जा, आपको वर्तमान में स्थिर रखती है। ऊर्जा का ज्यादा प्रवाह, आपको भविष्य की ओर विस्थापित करता है। जिस प्रकार ज्यादा वेग की गोल्फ बॉल गंतव्य से चूक जाती है और सही वेग की बॉल ही गड्ढे में जा पाती है। उसी प्रकार आवश्यक ऊर्जा का आहरण ही, वर्तमान में स्थित करता है।

***

भविष्य में योजना है, अतीत में स्मृति व वर्तमान में ज्ञान।

***

सहस्त्रार पर जलने वाली ज्योति ही ज्ञान है। प्रकाश का कार्य है, वास्तविकता को दिखाना। आपके भीतर जला दीपक, सहयात्रियों की यात्रा सुलभ करता है। इसी कारण वह आपकी यात्रा भी सुलभ करता है।

***

विचार को जगह चाहिए और ऊर्ध्वरेता को शक्ति। क्यूँकि जितनी जगह में उसे यात्रा तय करनी है, वह उसके पास पहले से ही उपलब्ध है।

***

व्यक्तित्व के पास गुण होते हैं, ऊर्जा होती है व उनका उपयोग करने हेतु समझ होती है। वहीं चेतना के पास शक्ति होती है। शक्ति चेतना से ही बंधित होती है या उसे ही उपलब्ध होती है। शक्ति स्वयं परमचेतना/चैतन्य का विस्तार है।

***

सिद्धियाँ अर्थात् स्वयं पर पड़े आवरण को, परत दर परत छीलकर हटाते जाना है।

***

सामाजिक जगत में सम्मान व उपाधियाँ होती हैं, आध्यात्मिक जगत में सिद्धियाँ।

***

दो विरोधी देश, एक दूसरे से नहीं अपितु एक दूसरे की पहचान से नफरत करते हैं।

***

स्वर्ग में देवता, जन्नत में जिन्नात दोनों ही इच्छाएँ पूरी करते हैं।

***

शादी का लड्डू खाये तो परिणाम से पछताए और जो न खाए वो उत्कंठा से पछताए।

***

इस सृष्टि को कोई व्यक्ति नहीं, एक व्यवस्था चला रही है। उस व्यवस्था की व्यवस्था ईश्वर करते हैं। उन्होंने स्वयं को विस्तार दिया ताकि विस्तार ही व्यवस्था हो जाए और वे निर्लिप्त रह सकें।

***

राजा प्रजा से शक्ति पाता है। वह प्रजा को खुद से जोड़ना चाहता है। हर बड़ा निर्णय लेने से पहले, वो जनता को अपने पक्ष में करना चाहता है। वह संचार माध्यमों का उपयोग, जनता की सहानुभूति पाने के लिए करता है। अपने निर्णयों में वह अकेला नहीं रहना चाहता। वह चाहता है कि निर्णय सही हो या गलत, जनता उसका समर्थन करे। यदि वह जानता है कि निर्णय गलत है तो वह जनता को उत्तेजित कर, ज्यादा से ज्यादा लोगों को अपने पक्ष में करना चाहता है।

***

सम्मान व अपमान का सम्बन्ध, व्यक्ति की महत्वाकांक्षा से है।

***

समय की उत्पत्ति शक्ति से है।

***

किसी अति वृद्ध व्यक्ति की मृत्यु पर समाज कहता है कि चलो उसे सुख मिला। वहीं परिवार का एक भाग सोचता है कि बाकी का पता नहीं, अब हमें सुख मिला।

***

किसी इलाके से पेड़ कटने पर लोग, पेड़ के लिए नहीं वरन् स्वयं के लिए दुखी होते हैं कि अब छाया न मिलेगी, गर्मी बढ़ेगी। वहीं मनुष्य के साथ इसका ठीक विपरीत है।

***

शांति से दो जन्म होते हैं। भीतर की ओर ज्ञान और बाहर की ओर बोध।

***

हम कर्मफल बंधन में इसलिए बंधते हैं क्योंकि इसे करने की सारी शक्ति, हमें प्रकृति से प्राप्त होती है। यदि शक्ति का खर्च प्रकृति सम्मत न हुआ तो बंधन में बंधना स्वाभाविक है। प्रकृति सम्मत रूप से शक्ति को खर्च करने पर आपको जो प्राप्त होता है, वह है प्रकृति का भाव अर्थात् शांति।

***

हठयोग शरीर के द्वारा, मन पर नियंत्रण करने का मार्ग है। ध्यान मन पर सीधे कार्य करता है। वहीं समर्पण ईश्वर के हाथों में, अपने योग की पूरी व्यवस्था को सौंप देता है। शरीर पाँच तत्वों के संतुलन द्वारा कार्य करता है। सबसे बड़ी गलती, हम इसका नियंत्रण, मन के द्वारा करने का प्रयास करके करते हैं।

***

भोगी काम से प्रेम करता है और योगी शक्ति से।

योगी ध्यान में उतरना चाहता है शक्ति के माध्यम से। भोगी वासना में उतरना चाहता है, शक्ति के माध्यम से।

योगी मस्त रहना चाहता है, भोगी व्यस्त।

भोगी रोमांच में रुचि लेता है और योगी भाव में।

भोगी बोरियत की काट ढूँढता है और योगी भ्रम की।

***

जीवन में प्रयोजन होने पर, लक्ष्य और विकल्प परेशान नहीं करते।

***

आपने शरीर के लिए बच्चे पैदा किये। मन के लिए संपत्ति बनाई। मगर आत्मा के लिए क्या किया?

***

दुनिया दो हिस्सों में बँटी हुई है – 1. प्रदान करने वाला, 2. उपभोग करने वाला। प्रदान प्रकृति करती है, उपभोग जीव करता है।

***

माया, प्रकृति और परमात्मा – ये व्यवस्था नहीं बदलने वाली। आपको ही खुद को इसके हिसाब से ढालना पड़ेगा।

***

जीवन का सुख अपने होने के प्रयोजन को जानकर, उस पर काम करने में है। प्रयोजन की पूर्णता ही सुख है।

***

गुरु को दक्षिणा क्यूँ? क्यूँकि वह आपके उत्तरा पर कार्य करता है। क्यूँकि वह स्वयं अपने दक्षिण पर से ध्यान हटा लेता है, अपने उत्तर पर कार्य करने हेतु। अपने उत्तर पर कार्य कर, वह आपके उत्तर पर कार्य करने हेतु समर्थ हो जाता है। इस प्रकार वह स्वयं के उत्तर को सुदृढ़ करते हुए, उन्हें भी मार्ग दिखा सकता है, जो उसके संपर्क में आएँ। गुरु को दक्षिणा देकर, शिष्य स्वयं के उत्तर को बल देता है। उत्तर में जय है और दक्षिण में विजय। गुरु चरण बंदना क्यूँ? क्यूँकि गुरु के चरण, अपनी महत्वाकांक्षा या इच्छा पर कार्य नहीं कर रहे। वह प्रवृत्ति सम्मत रहते हुए, किसी के उत्तर पर ही कार्य कर रहे हैं।

***

हम यहाँ टाइम पास करने को नहीं, अपनी शक्ति को प्रकृति को समर्पित कर, समय के बंधन से मुक्त होने को हैं।

***

जीवन के प्रयोजन में स्थित होना ही 'स्थित प्रज्ञता' है।

***

स्थितप्रज्ञता ही सुख है।

***

अच्छे पति और अच्छे इंसान में अंतर है।

***

इड़ा और पिंगला द्वैत हैं, सुषुम्ना अद्वैत है।

***

आशा सुख की है, सुख प्राप्त होने पर कोई आशा शेष नहीं।

***

आदमियों का दिन शुरू अखबार से होता है और खत्म समाचार पर होता है। औरतों के दिन का प्रारंभ घर की बातों से होता है और खत्म भी घर की बातों पर होता है।

***

जिनके पास प्रश्न हैं, उनके पास उत्तर नहीं है। जिनके पास उत्तर हैं, उनके पास प्रश्न नहीं हैं।

***

जीवन में सबकुछ मिलता है, नहीं मिलता है तो बस प्रयोजन।

***

अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए, एक विशेष स्थान पर होना जरूरी है। जीवन का प्रयोजन स्थान विशेष पर निर्भर नहीं। आप जहाँ भी रहें। ये वहीं पूरा होता रहता है। बुद्ध इसी कारण स्थान विशेष में मोह नहीं रखते क्यूँकि उनका कार्य सभी स्थानों पर, एक समान रूप से चलता रहता है। बुद्ध स्थान विशेष को नहीं देखते। वे बस अपने 'प्रयोजन' को देखते हैं। 'प्रयोजन महत्वपूर्ण है, जगह नहीं।'

***

रिसर्च का लक्ष्य है संसाधनों का बेहतर तरीके से उपयोग करना, मौजूद व्यवस्था को उन्नत बनाना, नए-नए आविष्कार करना ताकि मानव को और ज्यादा सक्षम बनाया जा सके व मानव सभ्यता को और विकसित किया जा सके।

***

प्रयोजन = सत्य की आपके लिये योजना।

***

जीवन का प्रयोजन न पता होना ही दुख है। दुख में पड़ा मनुष्य, इसी कारण उत्तेजना, उमंग और जीवन में छोटे-छोटे सुख ढूँढता रहता है।

***

साधना का उद्देश्य, जीवन के प्रयोजन को प्राप्त करना है।

***

जीवन में विकल्प सबसे आसानी से मिलते हैं। लक्ष्य उससे मुश्किल से और प्रयोजन सबसे मुश्किल से।

***

गीता का स्पष्ट कहना है कि यदि स्वभाव व मोह में से, किसी एक को चुनना हो तो स्वभाव को चुनिए।

***

महत्वपूर्ण ये नहीं कि दुनिया आपको क्या दे रही है बल्कि महत्वपूर्ण ये है कि आप दुनिया को क्या दे रहे हैं?

***

मन बुझा हुआ क्यों है?

मन एक घोड़े के समान है जो निर्बाध दौड़ना चाहता है। अपनी दौड़ के लिए वह सूरज पर निर्भर है। अंधेरे में दौड़ने पर वह गड्ढे, काँटे, दीवार, नदी, झाड़ियाँ इत्यादि का सामना करता है और चोटिल होकर कष्ट पाता है। मन के पास अपनी कोई रोशनी नहीं। हम मन के साथ बँधे हैं। अंधेरे में लगाई गई उसकी दौड़ के परिणामों को, हमें सहन करना पड़ता है। बाहर प्रकाश नहीं, मात्र चकाचौंध है। कोई भी घोड़ा चकाचौंध में, मुक्त होकर नहीं दौड़ सकता। भीतर से प्रकाश उपस्थित होने पर, उसे स्पष्टता मिल जाती है। स्पष्टता मिलने पर वह उमंगित हो उठता है। रोशनी आने के साथ, चेतना को अपना मार्ग प्राप्त हो जाता है। अब मन इस सपाट रास्ते पर सरपट, निर्बाध दौड़ सकता है।

***

दधिचि ने मात्र अस्थि दान नहीं अपितु जीवन दान किया था। अस्थि + जीवनीशक्ति मिलकर वज्र बना। गांधारी की इच्छाशक्ति से, दुर्योधन का शरीर वज्र बना।

***

प्रकृति के दो मुख्य अवयव हैं – 1. शक्ति, 2. पदार्थ।

***

भाव 'स्व' को शक्ति मिलने पर आरोपित होता है और स्व के शक्ति विहीन होने पर विस्थापित होता है। बाहरी दुनिया द्वारा न ये आरोपित ही किया जा सकता है और न विस्थापित ही। वहीं भावनाओं का नियंत्रण मन के पास है। जो स्व के क्षेत्र से बाहर है और पूरी दुनिया में फैला है। इसी कारण भावनाएँ किसी के भी द्वारा आहत की जा सकती हैं व भड़काई जा सकती हैं। वहीं भाव कहीं ज्यादा स्थिर है।

***

स्वर्ग की अवधारणा भावना से सम्बन्धित है। भावनाशील ही स्वर्ग की अपेक्षा रखता है। 'भावस्थ' को स्वर्ग से लेना देना नहीं। उसके लिए स्वर्ग बोझ है व समय का दुरुपयोग है। भावस्थ के लिए स्वर्ग एक रुकावट है, जो स्व और परम के बीच खड़ी है।

***

अनुभव यूँ ही नहीं प्राप्त होता। इसे पाने के लिए शक्ति खर्च करनी होती है।

***

विचारधाराएँ भविष्य में फैलती हैं। वर्तमान से इनका कोई लेना-देना नहीं। अतीत और भविष्य की समाप्ति के साथ, विचारधाराएँ भी समाप्त हो जाती हैं।

***

समृद्धि शक्ति से आती है।

***

वरदान – यह मेरी शक्ति तुम्हारे निमित्त कार्य करेगी।

***

श्राप – यह मेरी शक्ति तुम्हारे विरुद्ध कार्य करेगी। अर्थात् तुम्हारे व्यक्तित्व के।

***

गांधारी उदाहरण हैं, अपनी शक्ति को अपने मोह हेतु उपयोग करने का (दुर्योधन के शरीर को वज्र बनाना, यदुवंश का नाश)

***

श्रीकृष्ण का छल वास्तव में संकेत है कि आप अपने व्यक्तित्व को, अपनी या किसी अन्य की शक्ति के माध्यम से पूर्णतः ढँक नहीं सकते।

***

सच अर्थात् वास्तविकता।

***

जीव और समय की परस्पर क्रिया ही जीवन है।

***

बुद्धि का आवलम्बन छूटने पर जो प्राप्त होता है, वह है बुद्धत्व। बुद्धि ने पूरी कोशिश की होगी कि सिद्धार्थ राज्य न छोड़ें।

***

यदि भाव सदैव एक सा नहीं रहता तो भावना भी सदैव एक सी नहीं रहती। हम मन का पालन कर सदैव भावना में स्थिर रह सकते हैं तो यम का पालन कर, भाव में क्यूँ नहीं?

***

बड़ों को आदर, बीमारों/छोटों को देखभाल, अपनों को प्यार और सम को प्रेम मिलता है।

***

शरीर शांत होता है, मृत्यु व्यक्तित्व की होती है।

***

समझ ही भ्रम है। क्यूँकि यह कई अवयवों के मिश्रण से बना है।

***

कर्म भावना पैदा करता है और अकर्म भाव।

***

क्रिया की प्रतिक्रिया होती है और कर्म का कर्मफल। प्रतिक्रिया तुरंत होती है और कर्मफल विलंबित।

***

जैसे गेहूँ के साथ घुन भी पिस जाता है। वैसे ही तपस्या में व्यक्तित्व के साथ, मन भी पिस जाता है।

***

मेहनत रंग कैसे लाती है? जैसे रंग लाती है मेंहदी, पत्थर से पिस जाने के बाद। जैसे इत्र बनता है, फूलों के उबल जाने के बाद। वैसे ही मेहनत रंग लाती है, प्रयास को पूर्ण समर्पण से करने के बाद।

***

प्रकृति का हर विध्वंस सृजन के लिए है। व्यक्तित्व द्वारा किया गया विध्वंस, समाप्ति के लिए है।

***

अनुभव ही अनुभूतियों का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

***

शांति के पास ही सभी प्रश्नों के उत्तर हैं। प्रकृति ही शांत है। यदि प्रश्नों के उत्तर स्वतः ही चाहिए तो शांत होना होगा। प्रकृति की शांति का कारण, उसका चक्र में होना है और व्यक्तित्व के अशांत होने का कारण, उसका चक्र से बाहर होना है।

***

वृक्ष को शक्ति पंचतत्वों से मिलती है। यही शक्ति वे फलों, अन्न और शुद्ध वायु में छोड़ते हैं। शुद्ध वायु ही प्राण है। प्राण का संचार होना, इसे ही इंगित करता है। इसी कारण शुद्ध वायु में रहने वालों के स्वस्थ रहने की, व अशुद्ध वायु में रहने वालों के बीमार व शक्तिहीन होने की संभावना ज्यादा होती है। प्राणायाम की पूरी अवधारणा ही, इस शक्ति का उपयोग करने पर आधारित है।

***

बुद्धत्व के क्षण में, भविष्य समाप्त हो जाता है। बचता है तो मात्र वर्तमान।

***

शरीर को भोजन चाहिये, भूख मिटाने को। मन को भोजन चाहिये, बोरियत मिटाने को।

***

ब्राह्मण - चेतना

क्षत्रिय - इच्छाशक्ति

वैश्य - बुद्धि

शूद्र - मन

***

सभी प्यार सच्चा और पति अच्छा चाहते हैं।

***

प्राणायाम के माध्यम से मात्र शक्ति ही नहीं प्राप्त की जाती अपितु शरीर में आकाश तत्व को संतुलित किया जाता है।

***

संपत्ति की आवश्यकता वर्तमान में नहीं। वह मात्र भविष्य में आपकी सहायता कर सकती है। बुद्ध वर्तमान में रहते हैं। इसी कारण उन्हें सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं।

***

स्वयं को यम से बाँधे। यम से बाहर निकलने पर, कर्मफल आपको बाँधने को तैयार रहते हैं।

***

स्वयं को यम से बाँधने पर भीतर जो संघनित होता जाता है, वह है भाव। संघनित भाव दो प्रकार से मदद करता है। यह भीतर की ओर आनंद से परिचय कराता है और बाहर भावनाओं को दूर रखता है।

***

कल, आज और कल – अतीत, वर्तमान और भविष्य का अपरिष्कृत रूप है अर्थात् अतीत, वर्तमान और भविष्य को समझने के लिए कल, आज और कल का रूप दिया गया। मनुष्य को आज मिलता है, वर्तमान नहीं। बुद्ध को वर्तमान मिलता है, आज नहीं। आज का कारण है कल। वर्तमान अतीत और भविष्य से मुक्त है। वर्तमान का कारण है चेतना।

***

स्मृति आपके बाहर है और बोध उससे भीतर।

***

परिग्रहण का सीधा सम्बन्ध आपके अंतस से है क्यूँकि परिग्रहण की योजना अंतस में ही बनती है। बाहर तो बस क्रियान्वयन है।

***

स्वास्थ्य का सीधा सम्बन्ध पंचतत्वों के संतुलन से है। इन तत्वों का संतुलन ही शारीरिक स्वास्थ्य है। व आंतरिक संतुलन की उपस्थिति ही मानसिक स्वास्थ्य है। शक्ति बाहर की ओर आपके मन को अनियंत्रित होने से रोकती है। वहीं भीतर की ओर यह चेतना का भोजन है।

***

घरवाली है शक्ति, बाहरवाली है माया।

***

चेतना के प्रयोजन की पूर्णता ही बीज के पकने का संकेत है। पका बीज अंकुरित नहीं हो सकता।

***

भविष्य वह है जिसकी स्मृति बनती है। अतीत वह है जिसकी स्मृति बन चुकी।

***

प्यार अपनी इच्छाओं को दूसरों पर आरोपित करता है। प्रेम आरोपण नहीं, उपलब्धता जानता है।

***

हम कितना भी प्रेम से दूर और प्यार की ओर भागते जाएं किन्तु प्यार के दोनों पक्षों को जानकर, आना प्रेम के पास ही पड़ता है।

***

अतीत से लेकर भविष्य तक मात्र अनुभव है।

***

भाग्य और नियति में फर्क – भाग्य वे कर्मफल हैं जो जीवन को प्रभावित करते हैं। नियति वे तीखे मोड़ हैं, जो जीवन की धारा को मोड़ने की ताकत रखते हैं। इनसे गुजरकर व्यक्ति के जीवन के प्रति दृष्टिकोण में, अमूलचूल परिवर्तन आ जाता है।

***

सभ्यता की न्याय व्यवस्था, सबूतों के आधार पर चलती है और प्रकृति की न्याय व्यवस्था, कर्म के आधार पर। सभ्यता की न्याय व्यवस्था में कृत्य परखे जाते हैं। सृष्टि की न्याय व्यवस्था में मंतव्य।

***

'मैं' का 'मेरे' से मोह का सम्बन्ध है। औरों का मन इसी मेरे को, आपकी कमजोरी समझता है। अर्थात् आपकी कमजोरियाँ बाहर हैं और उजागर भी। जिससे व्यक्ति का सुरक्षा तंत्र भेद्य हो जाता है।

***

स्वर्ग में खींचतान है। नर्क में झुँझलाहट और तनाव है।

***

बुद्ध के पास दो विकल्प थे – 1. या तो अपने परिवार में बने रहें। 2. या पूरी दुनिया के हो जाएँ। आज पूरी दुनिया जानती है कि उन्होंने कौन सा विकल्प चुना।

***

अगर पत्नी रानी है तो पति राजा नहीं, राज्य है।

***

जिनके जीवन का प्रयोजन पहले से साफ होता है। वे दूसरे विकल्पों को नकार देते हैं। जिनके प्रयोजन स्पष्ट नहीं। उन्हें विकल्पों के माध्यम से, अनुभव एकत्र करते रहना पड़ता है। अनुभव अर्थात् जीवन सम्बन्धी प्रयोग के परिणाम।

***

पत्नी अपने लिए सुख और पति के लिए सफलता चाहती है।

***

यादें एक्सटर्नल मेमोरी है। इंटरनल मेमोरी है, ज्ञान और बोध।

***

दार्शनिक अर्थात् वे जो परम् अथवा जीवन के अन्य आयामों की व्याख्या, अपनी अनुभूतियों व बोध के आधार पर किया करते हैं।

***

वे निर्णय जिनमें भावनाओं का कोई दखल नहीं हो सकता, 'स्वाभाविक निर्णय' है। ये निर्णय सीधे स्वभाव से उपजते हैं। दूसरे वे निर्णय हैं, जिन्हें भावनाओं के दखल द्वारा बदला जाना संभव है। ये 'मानसिक निर्णय' है।

***

एक नियति ही है, जो आपको आपके नजदीक लाने पर, कार्य करती रहती है और मन सदैव आपको, आपसे दूर ले जाने पर कार्य करता रहता है।

***

सुख न पास स्थित है, न दूर स्थित है। यह गहराई में स्थित है। वहाँ तक पहुँचने को खुदाई करनी होगी।

***

सूचना क्यूँ महत्वपूर्ण है? क्यूँकि सूचना पर ही हमारे सारे कर्म आधारित होते हैं।

***

विष के ठीक बगल में स्थित है, जीवन। विष के नजदीक एक ही मार्ग है और वह है जीवन। विष से दूर जाने पर विकल्प उभरने लगते हैं। थोड़ी और दूरी पर लक्ष्य आने लगते हैं और काफी दूरी पर महत्वाकांक्षा। इसी कारण विष के निकट जाकर ही जीवन को समझा जा सकता है।

***

रागी और वैरागी में अंतर-

रागी जीवन में प्रयास को प्राथमिकता देता है और वैरागी अभ्यास को।

रागी जीवन की उपलब्धियाँ, प्रयास से प्राप्त करता है और वैरागी अपनी अनुभूतियों को अभ्यास से प्राप्त करता है।

***

प्रकाश और प्रकृति एक दूसरे की पूरक हैं। जैसे पुरुष और स्त्री, एक दूसरे के पूरक हैं। उत्तरी ध्रुव तथा दक्षिणी ध्रुव एक दूसरे के पूरक हैं।

***

भाई - प्रकाश

बहन - प्रकृति का बहाव

माँ - शक्ति

पिता - शिव

पुत्र - ज्ञान

पुत्री - प्रकृति द्वारा प्रदत्त प्रेम

इस प्रकार मनुष्य पूर्ण हुआ।

***

पेड़ का कोई मत नहीं, बस प्रयोजन है।

***

प्रकृति से बंधन जोड़ने का एक ही उपाय है। जो है शक्ति।

***

भावनाओं में निवेश की वजह है, असुरक्षा की भावना।

***

गृहस्थ को अपने परिवार से प्रेम है और अपने अधिकार से प्रेम है। महत्वाकांक्षी को पद और प्रतिष्ठा से प्रेम है तो योगी को अपनी स्थिति से।

***

अधेड़ उम्र में जवानी के सम्बन्ध में दो शिकायते–

1. मुझे मौका नहीं मिला, 2. मुझे मार्गदर्शन नहीं मिला।

***

सिद्धार्थ का खुद को खो देना, सभ्यता के लिए बुद्ध को पाने का उत्सव बन जाता है। सिद्धार्थ की हानि, सभ्यता का लाभ है। बुद्ध सिर्फ खुद को खो सकते हैं। इसी कारण उनका कोई आवलम्बन नहीं होता। कोई दूसरा ध्रुव नहीं होता। इसी कारण वे असंग हैं।

***

इस शरीर की संरचना कुछ ऐसी है कि इसके सारे आकर्षण दृष्टिगोचर हैं और सारी कुरुपता और दुर्गंध छिपी हुई।

***

थकान द्वंद से पैदा होती है। जैसे जब काम भी हो रहा हो और कोई कर्ता भी हो, जो यह महसूस करता हो कि कार्य, मेरे द्वारा ही हो रहा है। द्वंद रहित अवस्था में कोई थकान नहीं।

***

ईश्वर को लगाए गए भोग और मनुष्य द्वारा भोगे गए भोग में अंतर –

ईश्वर स्वयं को अर्पित भोग से सम्बन्धित भाव को ही स्वीकार करते हैं। शेष सभी भोग को वे मनुष्य को वापस कर देते हैं। इस प्रकार का भोग मनुष्य के लिये प्रसाद बन जाता है क्यूँकि भाव शक्ति है। वह स्थिर नहीं होती। वह सृष्टि के चक्र के साथ, आप तक वापस पहुँच जाती है। इस प्रकार भक्त का भोग के रूप में अर्पित भाव ही, शक्ति रूप में परावर्तित हो, सामग्री से संयुक्त हो जाता है। इस प्रकार शक्ति से मिलकर सामान्य भोजन भी प्रसाद बन जाता है।

वहीं मनुष्य द्वारा किया गया भोग, भाव से पूर्णतया रहित होता है। मनुष्य भोग को संपूर्ण रूप में भोगता है और वापस कुछ भी नहीं करता। इसी कारण इस प्रकार का भोग, विलास बन जाता है।

***

जो जितना बड़ा है, उतना ही ज्यादा सीमित है। जो जितना ही सूक्ष्म है, वह उतना ही ज्यादा विस्तृत है।

***

समझ सीमित होती है। इसी कारण वह स्वतंत्रता में बाधा डालती है। स्वतंत्रता या तो अपने स्वभाव का या फिर अपने मन का अनुसरण करेगी। अपने मन का अनुसरण करने पर वह अनुभव प्राप्त करेगी। वहीं अपने स्वभाव के साथ जाने पर अपने मार्ग को प्राप्त करेगी।

***

जीवन और खेल एक समान हैं। खेल के विपरीत जीवन में खेलने वाले 99 प्रतिशत से ज्यादा है और देखने वाले 1 प्रतिशत से कम। वहीं खेल में खेलने वाले 1 प्रतिशत से कम हैं और देखने वाले 99 प्रतिशत से ज्यादा।

***

वैरागी के लिये एकांत को खोकर धन और प्रसिद्धि प्राप्त करना एक बुरा सौदा है। रागी के लिये स्थिति ठीक इसके उलट है।

***

शरीर और पदार्थ को प्रकृति और मन जानिए। परछाईं इसी कारण बनती है कि प्रकाश प्रकृति (शरीर) पर पड़कर, धरती पर एक छाया बना देता है। परछाई रोशनी में स्पष्ट और अंधेरे में विलुप्त हो जाती है। मंच पर जैसे कलाकार और पृष्ठभूमि है, वैसे ही प्रकृति और मन हैं और वैसे ही शरीर और परछाई है। बाहरी प्रकाश दोनों को दिखाता है परंतु भीतरी प्रकाश किसी सतह से टकराकर, परछाई नहीं पैदा करता। इसी कारण आंतरिक प्रकाश की उपस्थिति में, परछाई रूपी भ्रम विलुप्त हो जाता है। चारों ओर प्रकृति दिखती है। मन दिखता ही नहीं। अब प्रकृति के रहस्य सामने हैं। इसे मन विहीन अवस्था को ही स्थितप्रज्ञता कहते हैं।

***

जैसे प्रकृति ईश्वर का विस्तार है। वैसे ही बुद्धि मन का विस्तार है।

***

जैसे परछाई शरीर से कुछ पा नहीं सकती। वैसे ही मन प्रकृति से शक्ति नहीं पा सकता। इसी कारण उसने 'अधिकार' का जाल बुना। क्यूँकि बाकी मात्र पदार्थ ही बचा, जिसके साथ कुछ किया जा सकता है।

***

भाव विभिन्नता को कमजोर करता जाता है। वहीं भावना विभिन्नता को मजबूत करती है।

***

योग की अनुपस्थिति में कितना ही उत्कृष्ट काम क्यूँ न किया जाए, भीतर से खालीपन बना रहता है। कबीर चादर ही क्यूँ न सिलें, रैदास जूते ही क्यूँ न बनाएँ, भीतर से वे परिपूर्ण हैं।

***

बाहरी दुनिया को देने के लिए भारतीय सभ्यता का संदेश है – 'वसुधैव कुटुम्बकम' और स्वयं के लिए संदेश है 'कर्मफल सिद्धांत'।

***

शक्ति ही भाव है।

***

मेधा अर्थात् शक्ति का, बुद्धि की ओर प्रवाहित होना।

***

दो लोगों का मिलन जब सफलता के लिए होता है, तो वो व्यापार होता है। जब संतुष्टि के लिए होता है, तो वो सम्बन्ध है। और जब संतृप्ति के लिए होता है, तो वो गुरु और शिष्य है।

***

प्रतिभा या तो देनदारी बन जाएगी या संपत्ति बन जाएगी।

***

प्रतिभा एक दुधारी तलवार है। प्रतिभा का नियंत्रण या तो इच्छाशक्ति के हाथ में होता है या मन के। इच्छाशक्ति के नियंत्रण में होने पर, वह समाज के लिए काम करती है।

महत्वाकांक्षा जाग्रत हो जाने पर, वही प्रतिभा अधिकारों का अतिक्रमण करने लगती है और समाज के विरुद्ध कार्य करने लगती है।

***

आत्मज्ञानी किसी से मोहित ही नहीं है, तो मोहभंग का सवाल ही कहाँ पैदा होता है। जो मोहित था, वो उसका व्यक्तित्व था। जो आत्मज्ञान के उदित होने पर जा चुका है।

***

प्रतिभा के पास उद्देश्य है। आत्मज्ञान के पास प्रयोजन।

***

पहली शादी धूमधड़ाम से, दूसरी शांति से। पहली समाज के लिए, दूसरी परिवार के लिए। तीसरी शादी में न परिवार, न समाज। यह अपने लिये होती है। यह मंदिर, कोर्ट में या आर्य समाज विधि से होती है।

***

अच्छा बनना अर्थात् जीवन मंथन करना। अच्छे लोगों को कठिनाइयों का सामना क्यूँ करना पड़ता है? क्यूँकि जीवन मंथन में अमृत से पहले विष निकलता है।

***

शांत बैठना आसान नहीं, एक बहुत मुश्किल काम है। कारण है कि कोई भीतर है, जो अशांत है। जैसे दर्द से परेशान व्यक्ति, स्थिर होकर नहीं बैठ सकता। वैसे ही अशांत मन के साथ, कोई शांत होकर नहीं बैठ सकता।

***

स्थितप्रज्ञता तब प्राप्त होती है और तब तक स्थिर रहती है, जब चेतना सहस्त्रार के ऊपर जाकर स्थित हो जाती है।

***

जो स्पष्ट संदेश है, मन से गुजरकर ही भीतर पहुँचता है। इसी कारण वह धूमिल संकेत या रहस्य बन जाता है। हर अवतार या बुद्ध (आत्मज्ञानी) स्पष्ट संदेश देता है लेकिन ग्रहण करने वाले का मन, इन संदेशों को उसकी चेतना तक पहुँचने ही नहीं देता। ठीक वैसे ही जैसे सूर्य की ऊर्जा, चारों तरफ होने के बाद भी, शरीर उसे भोजन रूप में ग्रहण नहीं कर सकता क्यूँकि शरीर मात्र भोजन को स्वीकार कर सकता है। सीधे सूर्य से प्राप्त ऊर्जा को नहीं।

***

प्रयोजन = सत्य की योजना

***

कुछ लोग विवाह सिर्फ इसलिए करते हैं कि उन पर परिवार का दबाव होता है। उनकी इसमें कोई व्यक्तिगत रुचि नहीं। इच्छाशक्ति के अभाव में वे परिवार के दबाव को सह नहीं पाते और बुझे मन से ही सही, तैयार हो जाते हैं। जीवन का प्रयोजन ज्ञात न होना भी दबाव में झुक जाने की वजह है। जब अपने पास प्रयोजन नहीं, तो परिवार का दिया हुआ लक्ष्य ही सही।

***

भाव से समाधि जन्म लेती है और समाधि से शून्यता।

समाधि सुदृढ़ होते हुए चेतना को शून्य में स्थापित करती है और तब चेतना शून्यता प्राप्त करती है।

बुद्ध शून्य हैं, आत्मज्ञानी शून्य हैं, कैवल्य शून्य है। शून्यता द्वैत से परे हट जाना है। अद्वैत में स्थित हो जाना है। हर वह व्यक्ति जो भाव में है, समाधि की ओर बढ़ रहा है।

***

जमीन में बोरिंग करने और प्राणायाम की क्रियाविधि एकसमान है। बोरिंग करने वाले को पता है कि जमीन के भीतर पानी है। योगी को पता है कि शरीर के भीतर शक्ति है।

बोरिंग में आमने सामने ख़ड़े दो लोग, पाइप पर नीचे की ओर बल लगाते हैं। प्राणायाम में सूर्य नाड़ी और चन्द्र नाड़ी के माध्यम से श्वास को बल पूर्वक बाहर और भीतर किया जाता है।

बोरिंग करने वाले लोग, पाइप को धरती के भीतर डालकर, उसके माध्यम से पानी बाहर खींचते हैं। वहीं शक्ति को ऊपर लाने हेतु, पहले से शरीर के भीतर नाड़ी उपस्थित है, जिसे सुषुम्ना नाड़ी कहते हैं।

जल जमीन के भीतर से बाहर आकर प्राणियों की प्यास बुझाता है। शरीर के भीतर छिपी शक्ति, सहस्त्रार के माध्यम से बाहर निकलकर चेतना की प्यास बुझाती है।

***

बाहरी आजादी है, दूसरों द्वारा दी गई विचारधारा से आजादी –

विचारधारा से बँधना, जीवनरूपी अवसर को ही बँधक बना लेने जैसा है। इस दशा में जीवन अपनी विचारधारा को स्थापित करने और दूसरी विचारधारा से द्वंद में उलझा रहता है। यह जीवनरूपी अवसर को, मन द्वारा जलाई गई भट्ठी में, जला देने जैसा है।

अगर विचारधारा की जकड़ को दिखाने वाली कोई आँख होती तो, इंसान हाथ-पैर में बेड़ियाँ डाले, दूसरे इंसान पर आक्रमण करता, और दूसरा व्यक्ति वैसी ही बेड़ियाँ पहने, किसी और इंसान के साथ उलझा हुआ दिखाई देता। ये बेड़ियाँ उसे जख्मी भी कर रही हैं और उसकी कार्यक्षमता को बाधित भी कर रही हैं लेकिन जैसे इंसान, शरीर रूपी बँधन से

प्यार करने लगता है, वैसे ही वह अपनी विचारधारा रूपी बँधन से भी बहुत प्यार करता है।

***

भीतरी आजादी है कर्मफल से आजादी और अंततः मन से आजादी –

कर्मफल से आजादी पाने हेतु मनुष्य प्रेम, ज्ञान, भक्ति, योग, सेवा, विवेक की ओर मुड़ जाता है। अपने कर्मफल से मुक्ति का प्रयास ही धार्मिक होना है। कर्मफल से मुक्ति पाने हेतु ही, वह धर्म की शरण में जाता है। कर्ता होने की भावना से, पार जाने का प्रयास ही धार्मिक होना है। अपने निर्मल स्वभाव पर चलकर, मनुष्य नए कर्म बँधनों को बनने से रोकता है। तपस्या के माध्यम से, मनुष्य अपने स्वभाव पर ही काम करता है ताकि उस स्वभाव की शरण में जा सके। मानव योनि में रहते हुए, उसका स्वभाव ही प्रतिक्षण साथ रहने वाला सहयोगी है। जो हर एक निर्णय में उसकी सहायता करता है।

***

प्राणी को अपने बँधनों से प्यार है।

शरीर एक बँधन है लेकिन मनुष्य इससे बहुत प्यार करता है। विचारधारा एक बँधन है लेकिन मनुष्य उससे बहुत प्यार करता है। जिम्मेदारियाँ जो व्यक्ति जीवन में स्वतः ओढ़ लेता है, वे बँधन हैं लेकिन मनुष्य उनसे भी बहुत प्यार करता है। 'मैं' एक बँधन है लेकिन मनुष्य इस बँधन से भी बहुत प्यार करता है। 'मेरा' की भावना भी एक बहुत बड़ा बोझ है लेकिन मनुष्य इस बोझ को भी बहुत चाहता है। प्यार का उदय मन से है और मन हर एक बँधन को बहुत प्यार करता है। मन हर एक बँधन का जन्मदाता है और प्राणी इस मन से भी बहुत प्यार करता है। मन हमारे लिए 'उत्तरदायित्व' पैदा करता है और हमें मन द्वारा दिये गए, हर एक 'उत्तरदायित्व' से बहुत प्यार है।

***

दो स्त्रियाँ आपस में एक दूसरे को स्वीकार नहीं कर पातीं– माँ और बेटी को छोड़कर। कारण है माँ और बेटी परस्पर एक दूसरे को अपना मानती हैं। माँ बेटी को अपना विस्तार मानती है, तो बेटी माँ को अपना उद्‌गम। दोनों ही स्वयं को 'मैं' और दूसरे को 'मेरा' मानते हैं। दोनों के 'मैं' तो अलग हैं लेकिन 'मेरा' समान है। इस प्रकार 'मेरा' वह समान धरातल है, जिसे दोनों ही साझा करती हैं।

दो समलिंगी भी एक दूसरे को स्वीकार करती हैं, कारण वही है। दोनों का 'मैं' अलग है लेकिन 'मेरा' समान है। दो घनी सहेलियाँ भी एक दूसरे को स्वीकार करती हैं। कारण वही है, दोनों का 'मैं' तो अलग है लेकिन 'मेरा' एक दूसरे का अतिक्रमण नहीं करता।

स्त्रियों के लिए 'मेरा' बहुत महत्वपूर्ण है। यही 'मेरा' उन में 'असुरक्षा की भावना' का प्रमुख कारण है।

***

औरत रिश्तेदारी को पटीदारी में बदल देती है।

औरत ही यह निर्धारित करती है कि कौन हमारे नजदीकी रिश्तेदार हैं और कौन दूर के। शादी से पहले लड़का जिन्हें नजदीकी रिश्तेदार समझता आया था, शादी के बाद पत्नी उन्हीं रिश्तेदारों को दूरस्थ रिश्तेदारों की श्रेणी में डाल देती है।

समर्थ और सम्पन्न परिवार की महिलाएँ, अपने कई रिश्तेदारों को पटीदारों की श्रेणी में डाल दिया करती हैं। जबकि कमजोर परिवार यह मानता रहता है कि समर्थ परिवार उनका रिश्तेदार है।

स्त्रियों को परिवार से सम्बन्धित निर्णय लेना पसंद है और अपने इस पसंद के काम को वे मन लगाकर करती हैं। दो परिवारों के बीच का सम्बन्ध, बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि दोनों परिवार की स्त्रियों के बीच, किस प्रकार का सम्बन्ध है।

***

प्राण भीतर ही नहीं बाहर भी है, पखेरु भीतर है।

प्राण अर्थात् शक्ति। पखेरु अर्थात चेतना। चेतना से ही शक्ति विस्तार लेती है। इस प्रकार शक्ति चेतना का विस्तार और भाग है। शक्ति चेतना हेतु पूर्ण रूपेण समर्पित है।

सर्वस्व उपस्थित प्राण, वायु के माध्यम से शरीर के भीतर जाता है। शरीर में उपस्थित कुंडलिनी शक्ति से चेतना जुड़ी होती है। भीतरी प्राण के बाधित होने पर, कुंडलिनी बाहर उपस्थित प्राण की ओर गमन कर जाती है। यह 'सेफ्टी वाल्व मेकैनिज्म' के समान है। इस दशा में मन की कोई भूमिका नहीं। पिंजरे में बंद तोता असहाय है, क्यूँकि वह चाहकर भी पिंजरे को नहीं तोड़ सकता। परंतु चेतना अतिसूक्ष्म है। साथ ही कुंडलिनी उसके प्रति पूर्णतया समर्पित है। यह उस इमरजेन्सी पावर बैकअप की तरह है, जो सामान्य अवस्था में सुषुप्त रहती है। केवल अति असाधारण अवस्था में ही जाग्रत होती है। प्रकृति जीव को सदैव सुरक्षित रखने के लिए प्रतिबद्ध है।

***

भविष्य के दो भाग हैं–

1. नियति 2. कर्म

नियति वह भाग है, जो नियत है। एक नियत परिवार में जन्म, प्रतिभा, मेधा या सामान्यता होना। नियत लिंग में जन्म लेना। नियत स्वभाव के साथ जन्म लेना। नियत समय पर घटने वाली घटनाएँ, समस्याएँ, बीमारियाँ और उनके द्वारा प्रदत्त अनुभव। नियत व्यक्तियों का जीवन में आना और परस्पर प्रयोगों द्वारा, दोनों का जीवन सम्बन्धित अपने अनुभवों को एकत्र करना। जीवन में नियत समय पर घटने वाली घटनाएँ, जो जीवन को एक नियत दिशा में मोड़ देती है। जैसे नियत समय पर ईश्वर की ओर आकर्षित हो जाना। नियत समय पर आकस्मिक धन लाभ इत्यादि।

दूसरा भाग है कर्म का। जो मन को कार्य करने की स्वतंत्रता देता है। मन के प्रभाव में आकर कुछ रोमांचक प्रयोग करना कर्म है और किसी आसन्न समस्या से चमत्कारिक रूप से बचकर निकल जाना नियति है। भारत में कहते हैं कि भाग्य अच्छा था कि नुकसान नहीं हुआ, बच गए। कर्मों का प्रभाव कर्मफल रूप में संचित होता जाता है। जो अगले जन्मों की नियति को आकार देता है। आज के कर्मफल, कल की नियति का रूप ले लेते हैं। अपने तथा दूसरों के मन द्वारा दिए गए प्रलोभनों से बचकर निकल जाना, कर्मफल संचय की प्रक्रिया को धीमा करता है।

मन का अर्थ ही है, चेतना को सतत् भविष्य की ओर धकेलना। जिसका बंदोबस्त मन प्रलोभनों और विकल्पों के माध्यम से करता है। शेष बंदोबस्त चेतना स्वयं मन द्वारा दिये गए विकल्पों पर काम कर, कर्मफलों का संचय करके कर लेती है।

विकल्प विभिन्नता से जन्म लेते हैं। विकल्पों के लोभ को त्याग कर, चेतना विभिन्नता को मान्यता नहीं देती। विकल्प पर किया गया कार्य, बंधन लाता है। इस प्रकार विकल्प पर काम न करना, कारण व प्रभाव के चक्र को तोड़ देता है और इस प्रकार मनुष्य की शक्ति का, व्यर्थ अपव्यय रुकता है।

***

कार्य में मन तब लगता है, जब उस कार्य को करते वक्त, बुद्धि आपको विचलित नहीं करती।

***

हर विकल्प पर किया गया कार्य, उस विकल्प के सम्बन्ध में, बुद्धि को विकसित करता है। किसी ऐसे विकल्प पर काम करने पर, जिसके सम्बन्ध में बुद्धि के पास अनुभव व सूचनाएँ हैं, बुद्धि उन्हें देना प्रारंभ करती है। हर विकल्प उत्साह से शुरु हो, बोरियत या तनाव पर खत्म होता है। मनुष्य ने अतीत में जिन विकल्पों का दूसरा छोर देख लिया है, वह उनके

सम्बन्ध में उत्सुकता व्यक्त नहीं करता और यह महसूस करता है कि यह काम ऐसा है, जिसमें मन नहीं लग रहा। इसे करने की इच्छा अंदर से नहीं आ रही और इस कारण वह पर्याप्त रुचि नहीं दिखाता। मन अर्थात् विकल्प और बुद्धि अर्थात् उस उपाय से सम्बन्धित समझ।

जिस प्रकार बोझ से लदा व्यक्ति, और बोझ स्वीकार करने से मना कर देता है। वैसे ही चेतना अनुभवों का उपयोग कर, विकल्पों के मामले में सतर्क हो जाती है। इस दशा में मन के पास, एक ही विकल्प बचता है। जो है नए-नए विकल्प देना।

***

अध्यात्म में अधिकार नहीं होते तो उत्तराधिकारी की संभावना ही कहाँ है। अध्यात्म में संपदा होती है, जो सद्गुरु अपने जीवन में प्रदान कर देते हैं।

अधिकार अर्थात् 'मैं' को 'मेरा' के ऊपर नियंत्रण। अध्यात्म में प्रवेश तभी संभव है, जब 'मैं' और 'मेरा' पीछे छूट जाए। तब ईश्वर की संपदा का प्रवाह प्रारंभ हो जाता है। 'मैं' की अनुपस्थिति में, न तो इस संपदा को बहने से रोका जा सकता है और न ही संचित किया जा सकता है। क्यूँकि संचित करने वाला मन अब विदा हो चुका।

जो न रुका है और न ही नियंत्रित है, वह है प्रवाह। अध्यात्म का पूरा परिक्षेत्र, ईश्वर का परिक्षेत्र है और ईश्वर के परिक्षेत्र को, किसी मन के हवाले नहीं किया जा सकता। यह निर्णय परमात्मा का है कि वे किसे माध्यम के रूप में चुनते हैं।

कोई भी ईश्वर के कार्यों को नहीं करता। ईश्वर के कार्यों को, उनकी बनाई गई व्यवस्था आकार देती है। किस बाँसुरी से संगीत निकालना है, यह पूर्णतः ईश्वर का निर्णय है।

***

आपकी पहचान से अगर कोई लड़ता है, तो वो है आपका विवेक।

पहचान हर एक के ऊपर जबरन थोपी जाती है। इस जहाँ में आते ही, पहचानों की बौछार शुरु हो जाती है।

एक पहचान जो हमारा अपना मन हम पर थोपता है। और दूसरी कई पहचाने, जो समाज का मन हम पर थोपता है। परत दर परत। पहचान दर पहचान। रहस्य कई दीवारों के पीछे छुपा है और हर पहचान एक दीवार के समान है।

सुकून की बात ये है कि आपको इनसे लड़ने की जरूरत नहीं। आपका विवेक ही इनसे लड़ लेगा। आपको बस उन आवश्यक परिस्थितियों का निर्माण करना है, जो विवेक को बल देती हैं।

विवेक आपकी वो संतान है जो सदैव आपके लिए समर्पित है। संतुलन ही शक्ति है और शक्ति ही विवेक है। पहचान के कुछ तालों को विवेक आपके लिए खोल देगा और कुछ तालों को नियति।

***

खजाने से ज्यादा महत्वपूर्ण है खोज।

यदि खजाना महत्वपूर्ण होता तो खजाने तक पहुँच कर खोज रुक जाती लेकिन खजाने के आगे भी खोज चलती रहती है। मन के लिए खजाना महत्वपूर्ण है और चेतना के लिए खोज।

खजाना किसी भी बेचैनी को शांत नहीं कर पाया। यदि कर पाता तो सभी अमीर संत बन चुके होते। खोज खजाने की नहीं है। खोज है, खोजी की। क्यूँकि खोजी खजाने का रास्ता जानता है। वह खजाना देख चुका है। उसे खजाने के बारे में सब पता है। अगर खोजी मिल जाए तो फिर खजाने तक पहुँचना आसान है। खोजी जानता है और मन तो बस अपने हाथ पैर चला रहा है। दोनों में अंतर यह है कि खोजी को मार्ग पता है और यह भी पता है कि पहुँचने पर क्या मिलेगा। वह खजाने से वापस लौट आया, सिर्फ उसकी सूचना

देने के लिए। सिर्फ ये बताने के लिए कि खजाना है और ऊपर तुम भी वहाँ पहुँचो तो तुम्हें भी उतना ही मिलेगा, जितना कि खोजी को मिला।

***

भोजन तभी तक भोजन है, जब तक वह शरीर में नहीं गया। शरीर में पहुँचते ही वह मल बन जाता है। मेज पर सजा सुंदर भोजन। आकर्षक व सुगंध से भरा। मुँह में पानी ला देने वाला। ललचाने वाला, अपनी ओर खींचने वाला। वह भोजन तभी तक है, जिस क्षण तक उसने मुँह के अंदर प्रवेश नहीं किया। अंदर पहुँचते ही उसका सारा आकर्षण, सुगंध, स्वाद, लालच सभी स्वाहा। मुँह से निकाल कर, यदि उसे किसी को दिया जाए, तो कोई स्वीकार करने को तैयार नहीं। मुँह में जाने से पहले, यदि उसे किसी को दे दिया जाए तो वह अनुग्रह से भर जाएगा। मुँह में जाने के बाद, यदि उसे किसी को दिया जाए, तो वह घृणा और अपमान से भर जाएगा। यदि यह शरीर अन्न से बना है तो यह भी उतना ही सच है कि यह मल से भरा है। भोजन का लार से संपर्क हुआ नहीं कि उसे मल मान लिया गया। अब अगर वह मुँह से निकलेगा तो फेंका ही जाएगा। भोजन बनाने की प्रक्रिया दृश्य है तो उसे पचाने की प्रक्रिया छिपी हुई।

***

ये दुनिया आपको बहुत कुछ देगी। निर्णय आपको करना है कि आपको उसमें से क्या लेना है?

अब ये निर्णय करेगा कौन? या तो मन करेगा या विवेक। मन तो किसी चीज को न नहीं कहेगा। तब तक नहीं कहेगा, जब तक शरीर जवाब न दे जाए। मन को सब कुछ चाहिए। विस्तार चाहिए। वो लेने में न नहीं करेगा, बस देने में 'न' करेगा। ग्रहण कर करके, वो आपको लाद देगा। दबा देगा। इतना कि उठना मुश्किल हो जाए और तब तक, जब तक उठना असंभव हो जाए। वो आपको **प्वाइंट ऑफ नो रिटर्न** पर ले जाकर ही छोड़ेगा।

वहीं विवेक आपको उतना ही चुनने को कहेगा, जिससे आप **प्वाइंट ऑफ नो रिटर्न** की ओर न जा पाएँ। आपका मन आपको धकेल कर, एक ओर ले जा रहा है और विवेक पूरी जद्दोजहद करेगा, आपको उस तरफ जाने से रोकने की।

***

हम स्त्रोत से कटे हुए हैं। इसी कारण प्रेम और सुख को पाने हेतु, मन किसी की तलाश करता है। यह प्रक्रिया जिम्मेदारियाँ लाती हैं और जिम्मा उठाना पड़ता है चेतना को। जिससे वह खिन्न रहती है। वह कहती है, ये तो नहीं चाहिए था मुझे। भीतर एक द्वंद्व सी स्थिति बन जाती है। जहाँ मन जिम्मेदारियों से बँधा है, व चेतना अभी भी खोज में रत है।

यदि प्रेम और सुख सीधे स्त्रोत से ही प्राप्त हो, तो किसी माध्यम की आवश्यकता न होगी और न ही जिम्मेदारियों की। इस दशा में जो ऊर्जा जिम्मेदारियों को निभाने में व्यय होती है। वह प्रयोजन को पूर्ण करने में उपयोग होगी।

संक्षेप में, जीवन में या तो जिम्मेदारियों को निभाते हुए प्रेम और सुख की खोज होगी या फिर प्रेम, सुख और प्रयोजन होगा।

***

आंतरिक पथ के यात्री के दो पैर हैं – 1. साधना 2. तपस्या।

तपस्या के माध्यम से स्वभाव पर कार्य किया जाता है व साधना के माध्यम से मन और शक्ति पर। गीता में श्रीकृष्ण ने मन, वाणी और शरीर सम्बन्धी तप कहे। सभ्यता में तपस्या के तत्व मिले हुए हैं। अहिंसा और सात्विक भोजन मन सम्बन्धि तप हैं। ब्रह्मचर्य शरीर सम्बन्धित तप है। भारतीय सभ्यता तपस्या को जीवन जीने के तरीके के रूप में देखती है। सभ्यता के तत्व सूक्ष्म रूप में आप पर कार्य करते रहते हैं। इस प्रकार तपस्या बचपन से ही शुरू हो जाती है ताकि जीवन का अनुभव प्राप्त कर चुकने के बाद, यदि व्यक्ति भीतर की ओर मुड़ना चाहे तो ये परिवर्तन उसके लिए सहज हो।

साधना में व्यक्ति अपने मन पर कार्य करना प्रारंभ करता है। अभी तक मन उस पर कार्य करता था। जैसे घर की मरम्मत कर, उसके अनुपयोगी हिस्सों को उपयोगी बना लिया जाता है। वैसे ही मन को नियंत्रित कर, उसका सार्थक उपयोग किया जा सकता है।

***

निष्काम उपासना से 'भाव' मिलता है।

***

निम्न आय वर्ग के लोग, अपनी खुशियों का ज्यादा खुलकर उत्सव मना सकते हैं। क्यूँकि वे अपनी-अपनी आवश्कताओं को पूर्ण करने में व्यस्त हैं। अभी सामाजिक पहचान से उन्हें कोई लेना-देना नहीं। उनके और खुशियों के बीच कोई पहचान की रुकावट नहीं। मध्यम वर्ग अपनी सामाजिक पहचान बनाने को प्रयासरत है। सामाजिक पहचान के साथ कुछ बाध्यताएँ भी आती हैं। उसके त्योहारों से खुशियाँ गायब हैं। क्यूँकि उनके और खुशियों के बीच, पहचान आ चुकी है। खुशियाँ संक्रमण की तरह हैं। ये बाहर से आती हैं।

यदि पहचान खुशियों को हम तक पहुँचने से रोक रही है, तो वे है ही क्यूँ? पहचान के साथ व्यक्ति सामाजिक सुख के प्रयोग करता है। मजा आया अर्थात् खुशियाँ आईं। पहचान के साथ मजे का कोई सम्बन्ध नहीं। पहचान के साथ जुड़ी है संतुष्टि। संतुष्टि पाने के लिए, व्यक्ति अपने संसाधनों के साथ प्रयोग में रत है। ये प्रयोग संतुष्टि की ओर और खुशियों से दूर ले जाता है।

***

बच्चा खुश रह सकता है। बड़े नहीं। बच्चे के साथ पहचान का संकट नहीं है। इसी कारण हर दिशा से आने वाली खुशी, उस तक पहुँच पा रही है। बच्चे के पास संसाधन नहीं,

लेकिन खुशियाँ अवश्य हैं। इसी कारण शायर को कहना पड़ता है कि लौटा दो मुझको बचपन के वो दिन। वो कागज की कश्ती, वो बारिश का पानी। शायर को पहचान तो मिली लेकिन खुशियों की खोज ने इस गज़ल को जन्म दिया। शायर जाने माने हैं, सफल हैं लेकिन वो बताना चाहते हैं कि सब कुछ तो मिला लेकिन खुशियाँ नहीं। हर सुनने वाला खुद को शायर के दर्द से जोड़ लेता है।

बचपन में आलम ये था कि चाँद में परियों के रहने की बात से ही खुशी मिलती थी। बड़ों को खुशियाँ पाने ऐसी जगह जाना पड़ता है, जहाँ बाहरी पहचान न आड़े आए। वहाँ थोड़ी खुशी जरूर मिलती है। न मिलती तो कोई घूमने क्यूँ जाता? लेकिन भीतरी पहचान तो बनी हुई है। बाधा तो अब भी उपस्थित है। इसी कारण खुशियाँ मिलती तो हैं लेकिन थोड़ी।

***

दो धर्मों के लोग, एक दूसरे के प्रति शंकाग्रस्त होते हैं क्यूँकि वे एक दूसरे के धर्म तक पहुँच ही नहीं पाते। क्यूँकि रास्ते में मिलती है, धर्म के अनुयायियों की विचारधारा।

धर्म न ही विचार है और न ही विचारधारा लेकिन उनके अनुयायियों के अपने विचार हैं और विचारधारा भी। यह विचारधारा ही एक दूसरे के प्रति, शंका पैदा करने का काम करती है। वास्तव में धर्म एक दूसरे के पूरक हैं। जैसे कि पृथ्वी के अलग-अलग भागों में उपस्थिति प्रकृति, एक दूसरे की पूरक है। जैसे प्रकृति में कोई भेद नहीं, वैसे ही धर्मों में भी कोई भेद नहीं। ये ठीक वैसे ही है जैसे कि एक ट्रेन में लगे डिब्बे, एक ही गंतव्य की ओर जाते हैं। व्यक्ति किसी भी डिब्बे में बैठे, पहुँचेगा वो एक स्टेशन पर ही अपने, गंतव्य पर ही। धर्मों में आपस में कोई मतभेद नहीं। धर्म के पास अपना कोई मत ही नहीं। हाँ अनुयायियों के पास अपने मत अवश्य हैं।

***

आत्माज्ञानी एक ही क्षण में आनंदित भी है, सुखी भी है और खुश भी।

जब वह भीतर की ओर मुड़ा होता है वह आनंदित होता है। जैसे ही वह बाहर की ओर मुड़ता है, उसके प्रयोजन पर स्वतः ही कार्य होने लगता है, और यही सुख का कारण है। पहचान और मन विहीन अवस्था में होने के कारण, चारों ओर उपस्थित खुशी उस तक पहुँच सकती है। कोई रुकावट नहीं।

आनंद उसे परमसत्ता से प्राप्त होता है, सुख शक्ति से और खुशी वातावरण से। इसी कारण ओशो कहते हैं कि झूमों और नाचो, उत्सव मनाओ। जब तक सुख आना प्रारंभ नहीं होता, तब तक चारों ओर फैली खुशी को खुद तक पहुँचने दो। नाच, गाकर अनावश्यक ऊर्जा को निकाल दो, जिस पर पहचान जीवित रहती है। और चारों ओर फैली प्रकृति से विदीर्ण होने वाली शक्ति, तुम तक खुशियों के रूप में पहुँचने लगेगी।

***

किसी भी धर्म को सबसे ज्यादा नुकसान, उसे मानने वाले ही पहुँचाते हैं।

धर्म को मानना नहीं, उसे जानना है। जब तक जानना न हो पाए, उसका पालन करना है। मानना मन से आता है। जानना इच्छाशक्ति से। जैसे-जैसे इच्छाशक्ति सुदृढ़ होती जाएगी, जानकारी बढ़ती जाएगी। जानना गहरा होता जाएगा। मानने से दूरी बनती जाएगी।

***

लगता है कि सम्मान खुशियों का हेतु है। परंतु वास्तव में वही खुशियों की राह में सबसे बड़ा रोड़ा भी है। यह उस बख्तरबंद कवच की तरह है, जो गोलों से आपकी रक्षा तो करता है लेकिन खुशियों को आप तक पहुँचने से रोकता भी है। ये गोले हैं अपमान के। जो आप तक पहुँच कर, आपकी पहचान को नुकसान पहुँचाते हैं। बस पहचान को। ये और भीतर नहीं उतर सकते। ये आपकी चेतना तक भी नहीं आ सकते। आत्मा तक पहुँचना

असंभव है। जैसे तारपीडो जमीन पर काम नहीं कर सकता। वैसे ही अपमान के बाण आत्मा पर काम नहीं कर सकते।

***

समस्या सुलझाने के तरीके –

तामस – ऊर्जा

राजस – बुद्धि

सात्विक – स्वभाविक या सहज

तामसिक क्रोध करता है। भयानक व रौद्र रूप धारण करता है। चीखना, चिल्लाना, उठा-पटक, आक्रमकता, स्वेद, रक्त के माध्यम से अपना हल ढूँढता है। यह ऊर्जा को नियंत्रित न कर पाने के कारण है। मन के लिए पहला विकल्प ऊर्जा ही है।

राजस क्रोधित तो होता है परंतु वह क्रोध को माध्यम नहीं बनाता क्यूँकि उसके पास एक और विकल्प है। वह है बुद्धि। कुटिलता, भ्रष्टाचार के माध्यम से वो बस मामले को, अपने पक्ष में हल करना चाहता है।

सात्विक अपने क्रोध पर नियंत्रण रखना चाहता है। वह उकसाए जाने पर ध्यान न देने व महत्ता न देने को चुनता है। स्वाभाविक पक्ष मजबूत रखता है। कुटिल चालों और गपशप से बचता है। नियमों का पालन करता हैं। दूसरों को परेशान करने को कानून का दुरुपयोग नहीं करना चाहता।

***

बुढ़ापा एक समस्या हो जाता है क्यूँकि इसमें लेन-देन बंद हो जाता है।

बच्चों को माँ-बाप से प्यार और संरक्षण मिलता है और बदले में माँ बाप को मिलती है संतुष्टि। ये है बचपन। जवानी में आपको परिवार से संतुष्टि मिलती है और परिवार को

आपके माध्यम से सफलता। कभी आप किसी को संतुष्टि देते हैं तो बदले में सफलता प्राप्त करते हैं।

लेन-देन का क्रम सतत् चलता है। लेकिन बुढ़ापा समस्या क्यूँ हो जाता है? बुढ़ापे में हमारे पास देने को होता है, अनुभव। जिसमें नई पीढ़ी की रुचि कम होती है क्यूँकि वह अपने अनुभव एकत्र करना चाहती है। उनका मन कहता है कि मेरे अनुभव आपसे अलग होंगे क्यूँकि मेरी प्रतिभा और प्रयास आपसे अलग है। यदि बुढ़ापे का प्रभाव समझ पर पड़ जाए तो देने को अनुभव भी नहीं रह जाता। लेन-देन की प्रक्रिया पर विराम। हमारा विराम दूसरों में, हमारे प्रति अरुचि को जन्म देता है।

***

भारत के लिए, महत्वाकांक्षा नहीं, आत्म अनुभूति प्रमुख है।

***

वास्तविक परिवार :

परमात्मा – पिता

प्रकृति – माता

आप – चेतना

***

मन पर चलकर कर्मफल प्राप्त होता है, स्वभाव पर चलकर बोध।

***

समुद्र तक पहुँचने के लिए गंगा की सहायक नदियों को गंगा में विलीन होना होगा। अन्यथा उन्हें अपना रास्ता स्वयं बनाना होगा।

रामकृष्ण के सभी शिष्यों को रामकृष्ण में विलीन होना होगा। उनके प्रति समर्पित होना होगा। इसी कारण दो गुरु कभी एक साथ नहीं रहते। गुरु वह है जिसने अपना रास्ता खोजा है। अब वह मार्गदर्शक का कार्य कर सकता है। उस रास्ते पर जिज्ञासुओं को आगे बढ़ा सकता है। क्यूँकि वह जानता है, इस रास्ते पर आगे मंजिल है।

***

जो सही है, वो यहीं है।

जो अच्छा है, वो वहाँ है।

जो बुरा है, वो भीतर है।

***

तूफान से पहले की खामोशी की बात होती है। तूफान के बाद की शांति की नहीं।

***

सुख के सब साथी, दुख में न कोय। क्यूँकि हर कोई सुख पाना चाहता है और थोड़ा या बहुत, हर व्यक्ति जानता है कि दुख क्या है। इसी कारण सभी दुख से दूर रहना चाहते हैं, क्यूँकि दुख का प्रभाव उन पर पड़ता है। केवल ईश्वर ही दुख की घड़ी का साथी है, क्यूँकि दुख उसे नहीं छूते।

***

जिम्मेदारी समझी जाती है और प्रयोजन प्राप्त होता है। लोगों को कहते सुना जाता है कि चलो अच्छा है, अगला अपनी जिम्मेदारी समझ गया।

***

शक्ति जब संवेदी अंगों के माध्यम से निकलती है तो संतुष्टि की वाहक बनती है। सहस्त्रार के माध्यम से निकलने पर शांति की।

***

जीवन धन्य हुआ। अर्थात् यम रूपी धन प्राप्त हुआ।

***

इस सृष्टि से इतर अपनी अलग सत्ता की अवधारणा ही अहंकार है।

***

परिवर्तन संसार का नियम है और चक्र प्रकृति का।

***

कर्म कर फल की इच्छा मत कर।

अर्थात् द्वैत के चक्कर में मत पड़। प्रकृति अपने फलों को स्वयं नहीं खाती। इसी कारण वह शांत है। शांति व फल एक साथ नहीं मिलते। या तो तू फलों को प्रदान करता हुआ शांत रहेगा या उन्हें प्राप्त करते हुए उत्तेजित रहेगा।

तू अपने भीतर प्रकृति को आकार लेने दे। फिर तू प्रकृति के बंधन से मुक्त हो सकता है। तेरा मन तेरे भीतर की प्रकृति को पुष्ट होने नहीं देता। इसी कारण तू प्रकृति के बंधन से घिरा रहता है। प्रकृति एक नियत स्तर तक पहुँचकर, तुझे मुक्त करेगी क्यूँकि वही तेरा धाम है। वह मार्ग में तुझे नहीं छोड़ेगी। अतः प्रकृति को अपने गंतव्य तक पहुँचने दे।

***

काम घर्षण की माँग करता है। दो शरीरों, जननांगों और मनों के घर्षण की। जहाँ घर्षण हो, वहाँ ऊष्मा निकलती है। घर्षण न हो पाने की अवस्था में, काम के प्रयोग में बाधा पहुँचती है।

कामांगों का चूकना काम के प्रयोग में बाधक है। जहाँ समस्या है, वहाँ व्यापार की संभावना है। दोनों के निराकरण हेतु एक पूरी व्यापार व्यवस्था विकसित है। बाजार ऐसे उत्पादों से भरा है, जो कामांगों को बल देते हैं।

जननांगों के समान ही, मन को भी उत्तेजित होना होता है, काम के प्रयोग हेतु। मन की उत्तेजना, शक्ति के व्यय पर ही संभव है। यदि शरीर चूकने लगे लेकिन मन फिर भी उत्तेजित हो, तो यह कुंठा व क्रोध को जन्म देता है। कुंठा व क्रोध, मन की ही अवस्थाएँ हैं। इसकी ठीक विपरीत स्थिति है, जब शरीर समर्थ हो लेकिन मन उत्तेजना त्यागने लगे।

***

साधना इसी कारण नहीं की जाती कि आत्म साक्षात्कार हो। बल्कि इस कारण भी की जाती है कि दुर्गुणों से मुक्ति हो। जब हम शुद्ध होते हैं, तभी जान पाते हैं कि बुराइयाँ थीं क्या? जब तक हम अपनी बुराइयों को नहीं जानते, तब तक वह बस आदत है।

***

राधा कृष्ण की वह शक्ति है, जिसे प्रेम कहते हैं। इसी कारण राधा, कृष्ण के ब्रज छोड़कर जाने के समय, कृष्ण के साथ नहीं जातीं।

कृष्ण ने ब्रज छोड़ा, कृष्ण के प्रेम ने नहीं। कृष्ण स्वयं जाते हैं लेकिन प्रेम को व्रजवासियों हेतु वहीं रखते हैं। वही प्रेम ब्रज को धाम बनाता है। उसे पाने ही श्रद्धालु आज भी ब्रज जाते हैं।

***

जीवन में दो विकल्प हैं। या तो जीवन को क्रिसमस ट्री बनाइये, उसे सजाइये और दूसरों को उसे देखने के लिये आमंत्रित कीजिए। इस तरह आँखों को देखने के लिये और कानों को सुनने के लिये बहुत कुछ होगा। या फिर अपने भीतर के पौधे को पनपने दीजिए। अपनी शक्ति से उसे सिंचित कीजिए और धीरे-धीरे वह वृक्ष में बदलने लगेगा। यह विकास कइयों के लिये प्रेरणा का काम करेगा जो उसकी छाँव तले आकर बैठेंगे तथा शरण पाएंगे।

***

जब तक हम ये मानते हैं कि सभी अलग-अलग हैं। तब तक हमारे सभी प्रयत्न दूसरों को प्रभावित करने हेतु होते हैं। जब हम जान जाते हैं कि सभी समान हैं, तब हमारा पूरा ध्यान अपने कार्यों को समग्रता पूर्वक, पूर्ण करने में लग जाता है।

***

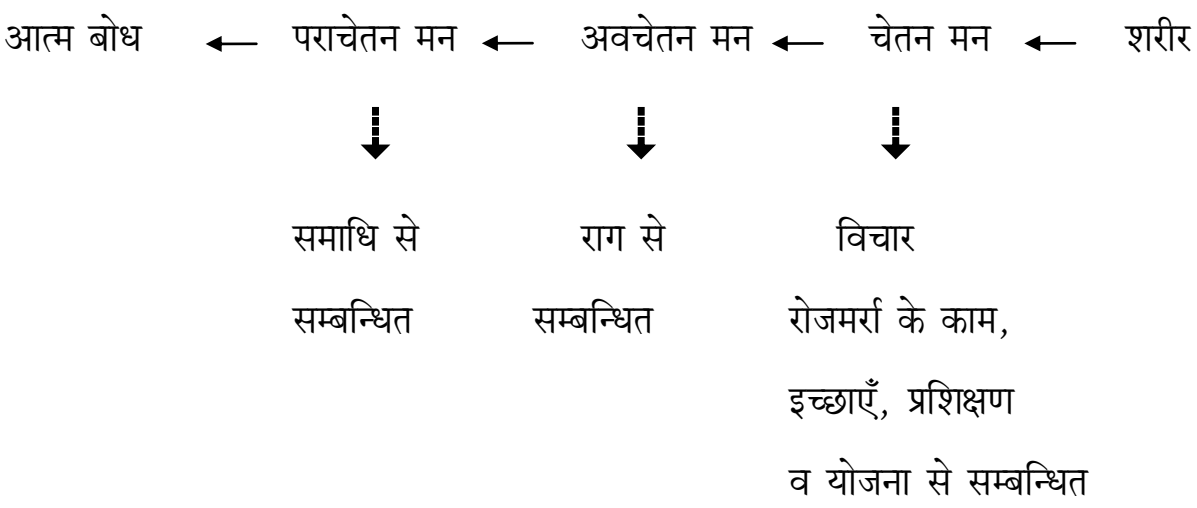

***

घर्षण में रुचि रहने तक ही, ये शरीर मूल्यवान प्रतीत होता है। अन्यथा घृणित और बदबू से भरा।

***

आशंका से भय उत्पन्न होता है और आशंका उत्पन्न होती है चेतन मन से।

***

अफवाहों पर ध्यान न दें क्यूँकि अफवाहें पैदा होती हैं चेतन मन से और प्रसारित की जाती हैं, चेतन मन को। अफवाहें जितनी तेजी से फैलती हैं, उतनी ही तेजी से फैलता है डर भी।

अफवाहें डर को जन्म देती हैं और डर शुरु कर देता है, रक्षात्मक और आक्रामक प्रक्रिया को। आपसी विश्वास निचले स्तर पर पहुँच जाता है, जिससे सामाजिक समरसता को नुकसान पहुँचता है।

***

आशंका अर्थात् आघात की शंका।

किसी दुर्घटना के अचानक घट जाने से, चोट और दर्द तो होता है लेकिन भय उत्पन्न नहीं होता। क्यूँकि चेतन मन को समय ही न मिला, आशंकाग्रस्त होने और भय पैदा करने का। वहीं दूर बैठा कोई, जब इस दुर्घटना के बारे में सुनता है, तो उसके मन के पास पर्याप्त समय होता है, आशंकाग्रस्त होने और भयभीत होने का।

***

खाओ – पीयो मस्त रहो।

ठूँसो – ठाँसो पस्त रहो।

***

आवश्यकता भर का खाने पर मस्ती रहती है। आवश्यकता से ज्यादा खाने पर, शरीर भारी और पस्त होने लगता है।

***

प्यार प्रेमी को बदल देना चाहता है।

प्यार के पास शुरुआत से ही उम्मीद होती है कि प्रेमी को बदला जा सकता है। खुद पर ये भरोसा कि मेरा प्यार तुम्हें बदल देगा और वैसा बना देगा, जैसा मुझे चाहिए। और प्रेमी से अपेक्षा कि वो बदलाव का विरोध नहीं करेगा और जहाँ तक हो सके, खुद को बदलने की कोशिश करेगा। इस प्रकार रिश्ते की शुरुआत हुई, खुद पर भरोसे और दूसरे से अपेक्षा से।

प्यार वह प्रयोग है, जिसे प्रेमी पूरी उम्मीद से करता है। उम्मीद सकारात्मक परिणाम की। प्रेमी एक प्रयोगी है। जिसकी यह अपेक्षा है कि बदलाव मेरे मन मुताबिक होगा। यह ठीक वैसे ही है, जैसे कुम्हार यह माने कि गीली मिट्टी से वह एक घड़ा बना देगा।

प्रेमी और कुम्हार में अंतर यह है कि कुम्हार प्रयोग मिट्टी के साथ कर रहा है। जो प्रयोग के लिए उपलब्ध है और खुद को एक नया रूप दिये जाने से, उसे कोई विरोध भी नहीं।

वहीं प्रेमी/प्रेमिका प्रयोग कर रहे हैं, एक मन के साथ। जो चंचल, भ्रमित और खोजी प्रवृत्ति का है। मन खुद में परिवर्तन को स्वीकार नहीं करता। विशेषतः तब जब कोई दूसरा मन, यह करने का प्रयास कर रहा हो। वह दूसरों को बाँधने का प्रयास करते हुए, स्वयं स्वतंत्र रहना चाहता है। वह परिवर्तन तो चाहता है परंतु 'मेरा' में, 'मैं' में नहीं। प्रयास यह है कि मैं तो ऐसे ही रहूँगा/रहूँगी, बदलाव चाहिए तुममें। तुम मेरी दुनिया के भाग हो और मेरी दुनिया मेरे हिसाब से होगी। मेरी दुनिया में फिट बैठने के लिए, तुम खुद में बदलाव लाओ। वरना घर्षण चलता रहेगा, दोनों के बीच। कुम्हार प्रयोग कर रहा है, निर्जीव के साथ। वहीं प्रेमी प्रयोग कर रहा है, जीव के साथ।

***

खुद से वर्तमान में संपर्क किया जा सकता है। दूसरों से मिलने हेतु भविष्य की आवश्यकता है।

बुद्ध स्थिर हैं। वायुरहित स्थान में दीए के समान। वे स्वयं में स्थित हैं। चंचलता और अस्थिरता से, उन्हें कुछ लेना देना नहीं। वे उसका अनुभव कर चुके हैं।

गीता इस स्थिति को 'स्थितप्रज्ञता' कहती है अर्थात् प्रज्ञा में स्थिति। 'स्व' को जानना सभी को जानने का मार्ग खोलता है। अब अन्य से मिलने और उन्हें जानने हेतु प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं। प्रयोग करने को भविष्य चाहिए। प्रयोगों के सभी परिणाम, भविष्य में ही स्थित हैं। स्वयं को जानते ही, बुद्ध एक-एक जीव तक पहुँच जाते हैं। अब कोई भी उनकी दृष्टि से छिपा नहीं। दूसरो ंसे मिलने हेतु संसाधनों की आवश्यकता है। जैसे शरीर और समय।

बुद्ध भी सभी तक पहुँचने को ही कह रहे हैं। बस अपने भीतर से होते हुए। इससे शरीर व प्रयोगों की आवश्यकता समाप्त हो जाती है। मन भी बाहर निकलकर सभी गड्ढों पर पुल बनाना चाहता है। हर एक तक पहुँचना चाहता है। बुद्ध वही काम, अपने भीतर से करते हैं। यही उनकी स्थिरता का कारण है।

***

क्या योगी आकाश में उड़ते हैं? निश्चित तौर पर। पर उड़ता उनका शरीर नहीं, बल्कि उनकी चेतना को ये अवसर मिलता है। शरीर के आकाश में उड़ने का कोई फायदा नहीं। ये अनुभव बंजी जम्पिंग या ज़िप लाइन से लिया जा सकता है।

आकाश में हवाई जहाज भी उड़ते हैं और इनमें मनुष्य भी। शरीर अगर आकाश में उड़ने भी लगे तो इससे क्या अध्यात्मिक लाभ? इससे तो व्यक्ति अपने लिए व्यापार का नया स्त्रोत खोल देगा। लोग उसके इस करतब को देखने के लिए पैसे देंगे। पैसा तो आएगा, लेकिन अनुभूति नहीं। योगी सुख और पूर्णता की तलाश में है। आकाश में उड़कर ठंडी हवा तो मिल सकती है, सुख नहीं। क्यूँकि वो तो चेतना के माध्यम से प्राप्य है। आकाश में उड़कर किसी सुंदर स्त्री का दिल आप पर आ सकता है, पूर्णता नहीं। वृक्ष धरती पर

रहते हुए ही पूर्ण हैं। अपनी स्थिरता में ही संतुष्ट हैं। यह शरीर पंचतत्वों से बना है, जिसमें से एक आकाश भी है। आकाश मात्र बाहर ही नहीं, भीतर भी है। योगी का शरीर नहीं अपितु उनकी चेतना आकाश में उड़ती है। जिससे वे शरीर में रहते हुए भी, मुक्ति व आनंद का अनुभव करते हैं।

***

पक्षी आकाश में भी उड़ता है और वही पक्षी पिंजरे में भी कैद होता है। पिंजरे में उसे किसी का मन बाँध कर रखता है। मन की अनुपस्थिति में पक्षी, पिंजरे में कैद न रहेगा। वह आकाश में होगा या पेड़ों पर होगा, बस पिंजरे में न होगा।

***

पूरी सृष्टि एक चेतना द्वारा चलित है तो हर शरीर के पास अपना एक मन है। इस मन और सृष्टि के बीच है, यह शरीर। शरीर में स्थित मन, सृष्टि से सम्बन्ध को नहीं जान पाता। इसी कारण, वह अपनी एक अलग सत्ता की सोच रखता है। वास्तव में यह सृष्टि जितनी पूर्ण है, उतना ही यह शरीर भी पूर्ण है। यही पूर्णता, मन को अपनी अलग सत्ता होने की भावना देती है। हर एक शरीर अपनी एक अलग सत्ता की भावना रखता है। यही अहंकार है। मनुष्य के कर्मों का कारण यही अहंकार है। शरीर के इतर पूरी सृष्टि, एक चक्र का अनुसरण करती है। और सृष्टि से इतर मन अपनी इच्छाओं और विचारों का अनुसरण करता है।

***

एस्केरिस आँतो को पकड़ता है, छुड़ाता कैस्टर ऑयल है। मन, आदतों को पकड़ता है। छुड़ाती शक्ति है।

***

माँ अपनी बेटी को प्रतियोगी की तरह नहीं लेती। वहीं जब यह माँ सास बनती है तो बहू को प्रतियोगी की तरह लेती है।

बेटी, माँ को प्रतियोगी की तरह नहीं लेती लेकिन बेटी, जब बहू बनती है तो अपनी सास को प्रतियोगी की तरह लेती है। माँ उम्र के दूसरे चरण में होती है और बेटी उम्र के पहले चरण में। वहीं सास उम्र के तीसरे चरण में होती है और बहू उम्र के दूसरे चरण में।

दूसरे चरण में व्यक्ति आश्वस्त है, तीसरे चरण में आशंकाएँ हैं। वहीं लड़की पहले चरण में उन्मुक्त है, तो दूसरे चरण में जिम्मेदार। बहू को ससुराल से जिम्मेदारी मिलती है, तो वो पति से आश्वासन ढूँढती है। बहू को सत्ता पर नियंत्रण चाहिए क्यूँकि उसे अपने बच्चों को पैदा करना व मन मुताबिक बड़ा करना है। वहीं सास सत्ता पर से, नियंत्रण नहीं खोना चाहती।

***

प्र0 : शक्ति शांति में कब बदलती है?

उ0 : जब मन से उसका अलगाव हो जाता है। जब तक मन, शक्ति से जुड़ा होता है, तब तक व्यक्ति अनियंत्रित रॉकेट होता है। जिसके पास शक्ति तो है लेकिन गंतव्य नहीं।

प्र0 : प्रकृति से सम्बन्ध कब स्थापित होता है?

उ0 : हमारे चारों ओर, एक साथ दो दुनिया उपस्थित है। एक वो जिसमें मन रुचि लेता है और दूसरी प्रकृति। भीतर स्थित शक्ति का जब मन से अलगाव हो जाए, तब आंतरिक प्रकृति शुद्ध और सौम्य हो जाती है। इस दशा में चेतना पुष्ट होने लगती है। जैसे बच्चा अपनी माँ को पहचान लेता है। वैसे ही चेतना और प्रकृति के बीच सम्बन्ध प्रगाढ़ होने लगता है और फिर एक दिन चेतना प्रकृति को पहचान लेती है और प्रकृति चेतना को अपने रहस्य बताती है। इसी एक क्षण में वास्तविक प्रेम की खोज पूर्ण होती है।

प्र0 : श्याम व बाबा एक साथ क्यूँ? सिर्फ श्याम क्यूँ नहीं?

उ0 : बाबा श्याम एक अद्भुत संगम हैं। साधक और ईश्वर का। पहचान साधक की और नाम ईश्वर का। समर्पित और सम का। नश्वर पहचान गिरने और वास्तविक पहचान पाने का। शरीर मनुष्य का और चेतना ईश्वर की। शरीर मनुष्य का, कार्य ईश्वर का। आवरण के त्याग का, गंतव्य की प्राप्ति का। गंगा और सागर का। पहचान वही, क्लेवर नया। नया अर्थात् न यामिनी अर्थात् अंधकार की अनुपस्थिति।

प्र0 : इस शरीर से गंगा कब बहती है?

उ0 : जब शारीरिक, मानसिक व भावनात्मक तीनों द्वार खुल जाते हैं। तब गंगा के प्रवाहित होने का रास्ता भी खुल जाता है।

प्र0 : भीतर वो कौन है, जो ज़िद पर अड़ जाता है?

उ0 : अहंकार।

प्र0 : सुख कब मिलता है?

उ0 : इच्छाओं के होते हुए अगर कुछ मिल सकता है तो खुशी। सुख इच्छाओं के सूखने पर ही मिलता है। अपने संसाधन दूसरों तक पहुँचने लगें, इससे उन्हें जो खुशी मिलती है, वो आपके सुख का कारण बनती है। अपने मन के लिए कर्म करने पर बस खुशी ही मिल सकती है, सुख नहीं। सुख तो तभी होगा जब 'मेरा' बाधक नहीं होगा और संसाधन तथा इच्छाएँ बहना शुरु करेंगे। आराम के साधनों को एकत्र करना सुख नहीं, खुशी है।

प्र0 : आनंद कब होगा?

उ0 : जब आपकी शक्ति प्रवाहित होने लगेगी और वातावरण तक पहुँचने लगेगी। तब होगा आनंद। खुशी का दायरा सबसे छोटा, सुख का दायरा, उससे बड़ा और आनंद का दायरा सबसे विस्तृत होता है।

खुशी सिर्फ मन तक पहुँचती है। संसाधन ज्यादा लोगों तक पहुँचते हैं। इसी कारण सुख का दायरा, खुशी से बड़ा होता है। शक्ति का दायरा कहीं ज्यादा होता है क्यूँकि इसकी

पहुँच बहुत विस्तृत होती है। इसी कारण आनंद का दायरा सबसे विस्तृत व घनीभूत होता है।

प्र0 : अतीत को भूला कैसे जाए?

उ0 : अतीत एक बोझ की तरह है, जो आज पर असर डालता है। स्मरण के लिए शक्ति की आवश्यकता है, तो विस्मरण के लिए उससे ज्यादा शक्ति की आवश्यकता है, जो स्मृति को ढँक ले। जिससे हमारा आज, कल के बोझ से मुक्त हो। बोझ कम होने पर आज ज्यादा उत्पादक होगा। अतीत की स्मृति, हमारे आज में भावनाएँ उत्पन्न न कर सकेंगी, जिससे आज ज्यादा तरोताजा होगा। संयम और साधना, शक्ति प्राप्ति के ये दो साधन हैं।

प्र0 : अनुभव हमारे लिए कैसे काम करते हैं?

उ0 : हमारे संचित अनुभव, हमारे आज के निर्णयों पर असर डालते हैं। हमारे आज के प्रयोगों पर, सीधा प्रभाव उन अनुभवों का होता है, जो अतीत में मन ने किए। यदि मन आज कोई निर्णय करता है तो हम अनुभव के संग्रह से, उससे सम्बन्धित प्रयोग के परिणामों को निकाल कर, मन के निर्णय को नियंत्रित कर सकते हैं। मन तो कहता है कि तुम करो, जो होगा देखा जाएगा। लेकिन क्या परिणाम हो सकता है, ये अनुभव बताता है। इस प्रकार एक आवेशित निर्णय, अनुभव की उपस्थिति में एक सोचा समझा निर्णय बन जाता है। बुद्धि, प्रयोग से होने वाले लाभ और संभावित हानि की गणना करके बताती है कि क्या यह कार्य करना उचित रहेगा।

प्र0 : 'मैं' क्या है?

उ0 : चेतन मन ही 'मैं' है। जानवर और मनुष्य अपने इलाके का निर्धारण करते हैं और नियंत्रण कायम रखने का प्रयत्न करते हुए, जीवन व्यतीत कर देते हैं। ये शरीर भी उस क्षेत्र के समान है, जिस पर मन नियंत्रण स्थापित कर, उसे बनाए रखना चाहता है। 'मन' ही

कर्ता है। हो सकता है कि जो अणु आपके शरीर में हैं, वही अणु अतीत में किसी जानवर या किसी मनुष्य के शरीर का भाग रहे हों।

प्र0 : मानसिक और अध्यात्मिक जीवन में क्या अंतर है?

उ0 : मानसिक स्तर पर जीवन की श्रेणी है – 1. गरीब, 2. मध्यम, 3. अमीर

अध्यात्मिक तल पर जीवन का वर्गीकरण है – 1. दुखी, 2. शांत, 3. आनंदित

प्र0 : माफ़ी क्यूँ माँगी जाती है?

उ0 : अपराध बोध को दूर करने के लिए। माफ़ी दी भी इसी कारण जाती है कि बदला लेने की भावना से बचा जा सके।

प्र0 : जीवन जीने की कला का क्या तात्पर्य है?

उ0 : अपनी आदतों के साथ रहना जीवन है और आदतों से दूर जाने के साधन का नाम 'जीवन जीने की कला' है।

प्र0 : महात्मा अध्यात्म के ज्ञाता होते हैं तो वे धर्म क्यूँ चलाते हैं?

उ0 : जो अनाज पौधे पर अलग-अलग उगते हैं, उससे संयुक्त रूप में भोजन बनाकर लोगों में बाँटा जा सकता है। बाँटा गया भोजन धर्म के समान है और पौधे पर उगने वाला अनाज, अध्यात्म के समान। भोजन को बाँटा जा सकता है, लेकिन अनाज को खुद अपने पौधे पर उगाना पड़ता है। अध्यात्म का उदय, हर एक व्यक्ति में स्वतंत्र रूप से होता है। वहीं धर्म का पालन समूह द्वारा किया जाता है।

प्र0 : अकेले भोजन करते वक्त लोग खुद को छुपाना और रेस्टोरेंट में खाते वक्त सबके सामने खाना क्यूँ पसंद करते हैं?

उ0 : भोजन का सम्बन्ध संतुष्टि से है। घर से मिले भोजन की मात्रा नियत होती है, जो संतुष्टि के लिए आवश्यक मात्रा में मिलता है। यदि उसे किसी के साथ बाँटना पड़े तो

संतुष्टि न मिलेगी, क्यूँकि मात्रा कम पड़ गई। वहीं रेस्टोरेंट में अगर मात्रा कम भी पड़ी तो उसे और मँगाया जा सकता है। वहाँ संतुष्टि पर संकट नहीं है।

प्र0 : प्रकृति ही बाँधने वाली और प्रकृति ही मुक्ति का हेतु कैसे है?

उ0 : प्रकृति का वह पक्ष जो गुणों से संबंधित है, बाँधने का कार्य करता है। व्यक्ति की विभिन्न गुणों में आसक्ति ही उसे द्वैत के बँधन में रखती है क्योंकि गुणों का अनुभव द्वैत की परिधि में ही सम्भव है। जब व्हाक्ति गुणातीत हो जाता है, तो वह द्वैत के बँधनों से परे अपनी यात्रा प्रारंभ कर देता है और अंततः प्रेम के परिक्षेत्र में प्रवेश कर जाता है। प्रेम व्यक्ति को द्वैत के सभी बँधनों से मुक्त करने का हेतु है और प्रेम प्रकृति के परापक्ष से संबंधित है।

प्र0 : आज और वर्तमान में क्या अंतर है?

उ0 : आज सम्भावना है कर्म करने की, आज अवसर है कर्म का। मन आज के परिक्षेत्र में ही अपने सभी कर्मों को आकार देता है। मन भविष्य की ओर देखते हुए भी आज को ही ढूँढता रहता है क्यूँकि जैसे एक खिलाड़ी को खेल का मैदान चाहिये वैसे ही मन को आज चाहिये। वहीं वर्तमान मन की परिधि से परे है। वर्तमान में प्रकृति की सारी संभावनाएँ निहित हैं। वर्तमान प्रकृति का कार्यक्षेत्र है। वर्तमान सभी भावनाओं से मुक्त है और प्रकृति के उत्पादक अक्ष से सम्बन्धि है।

प्र0 : चार धाम क्या हैं?

उ0 : जीवन के चार आयाम हैं और इन्हीं चार आयामों को चार धामों से अभिव्यक्त किया गया है।

प्र0 : तेज क्या है?

उ0 : जीवन से उत्तेजना को हटा देने पर, जो भी बचता है वही तेज है।

उत्तेजना = उत् + तजना

उत् रोमांचकारी है। उत्तेजना विहीन जीवन, नैसर्गिक या स्वाभाविक जीवन है। इस प्रकार के जीवन से आस-पास के व्यक्ति प्रभावित होते हैं। उनके भीतर की प्रकृति स्वतः ही, इस प्रकार के जीवन की ओर आकर्षित होती है।

प्र0 : कर्म से फल मिलता है तो भक्ति से क्या मिलता है?

उ0 : कर्म से फल मिलता है और भक्ति से प्रसाद। समर्पण से यही प्रसाद सत्य के स्वाद में बदल जाता है। मंदिर के भीतर प्रसाद मिलता है और वही प्रसाद मंदिर के बाहर बैठे भिक्षुक को मिलता रहता है। प्रसाद बाँटने का महत्व ही यही है। यदि आपके पास प्रसाद है तो उसे बाँटना होगा। बाँटी गई वस्तु प्रसाद बन जाती है।

प्र0 : अहंकार से मुक्ति कैसे हो?

उ0 : शारीरिक श्रम, खानपान पर नियंत्रण और व्यायाम से। मसल्स में संचित ऊर्जा का उपयोग ही मन अहंकार के निर्माण में करता है। सुबह सवेरे की सैर और व्यायाम, इसी अहंकार की आहूति और यज्ञ बन जाता है। यह अहंकार, शरीर से शक्ति के बाहर निकलने का मार्ग बाधित करता है। शरीर से शक्ति के ऊर्ध्व रूप से बाहर निकलने पर सुख और मस्ती मिलती है। अहंकार मुक्त बीता एक दिन अहंकार के साथ बीते लम्बे समय से बेहतर है क्यूँकि वह लम्बा समय बोझ के समान बीतता है।

यह सुख और मस्ती साथ रहती है और बोध प्रसाद के रूप में बाँटा जाता है। बोध ऋषियों का प्रसाद है, जो उनकी चेतना अस्तित्व से प्राप्त करती है और जिसे वे सभ्यता को दे देते हैं। अहंकार को चीरकर बोध निकलता है। शारीरिक श्रम करने वाला, अच्छी नींद भी सोता है।

प्र0 : हवा में उड़ना क्या है?

उ0 : जब आप ऊपर उठेंगे और शरीर नीचे रह जाएगा, तभी आप जान पाएँगे कि आप शरीर नहीं। यदि शरीर भी साथ ही उठ जाए तो आप यही मानेंगे कि आप शरीर हैं। शरीर का ऊपर उठना अनुभव है। चेतना का ऊपर उठना अध्यात्म जगत में प्रवेश है।

प्र0 : अशांति की वजह क्या है?

उ0 : अपने भीतर की (स्त्री/शक्ति) को परेशान करना। मन बाहर की औरत को तो बाद में परेशान करता है, इससे पहले वो भीतर की औरत को परेशान कर डालता है। एक परेशान स्त्री के चारों ओर के वातावरण में,उसकी परेशानी पहुँच जाती है। हमारे मन की चंचलता से दूसरे बाद में, उससे पहले हम स्वयं ही परेशान हो बैठते हैं। किसी तरह यदि हम, इस परेशानी को बाहर जाने से रोक भी लें, तो भी भीतर उथल-पुथल चलती रहती है। मन अशांत तो स्त्री अशांत, मन शांत तो स्त्री शांत।

प्र0 : ओशो ने कहा सन्यास सबसे बड़ी समस्या है? मतलब?

उ0 : समस्याएँ विभिन्न तलों पर हैं। शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक, शैक्षणिक इत्यादि। इन सभी तलों पर सुलभताएँ हैं, तो समस्याएँ भी हैं।

सन्यास से सम्बन्धित समस्या जिस तल पर है वह है, मनोवैज्ञानिक। स्वयं से सम्बन्धित सारी समस्याएँ भी मनोवैज्ञानिक तल पर हैं। स्वयं से सम्बन्धित सारे भय भी इसी तल पर हैं। सन्यासी को इन भयों से गुजरना होता है। मनोवैज्ञानिक तल पर है 'मैं'। बाकी सभी तल सम्बन्धित हैं 'मेरा' से। 'मेरा' पर आया संकट एक समस्या है। 'मेरा' इस कारण है कि 'मैं' है। 'मैं' पर आया संकट सबसे विकट समस्या है। सन्यासी इसी 'मैं' से पार पाना चाहता है। वहीं 'मैं' अपना नियंत्रण नहीं छोड़ना चाहता।

प्र0 : 'जै माता दी' क्यूँ? और इससे आपको क्या प्राप्त?

उ0 : यदि भीतर स्थित माता की जय होगी तो भीतर स्थित चेतना की स्वतः ही जय हो जाएगी। जैसे माँ बच्चे को आलिंगनबद्ध रखती है, वैसे ही माता भी चेतना को आलिंगनबद्ध रखती है। माता के उर्ध्वगामी होने पर, चेतना भी साथ ही उर्ध्वगामी होती है।

प्र0 : सब कुछ पहले से तय है, का क्या तात्पर्य है?

उ0 : जब किसी को प्रकृति से कुछ विशेष गुण, बुद्धि या प्रतिभा मिलती है और यदि साथ में प्रेरणा भी मिल जाए, तो कार्य पूर्ण होने की संभावना काफी बढ़ जाती है। इस दशा में लक्ष्य को पाना सहज है। यदि किसी के पास गुण हो लेकिन प्रेरणा न हो तो लक्ष्य को पहचानना और उसे पाना मुश्किल है।

प्रेरणा अपने स्वाभाविक गुणों की तरफ ही होती है। यही कारण है, जगत अलग-अलग क्षेत्रों में, विराट व्यक्तित्वों को प्राप्त करता है। ये वे हैं, जो अपने लक्ष्य को जल्दी पहचान लेते हैं और उनके स्वाभाविक गुण, स्वतः ही उन लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर, कार्य करना शुरु कर देते हैं। स्वाभाविक गुण, प्रतिभा या बुद्धि और उनसे सम्बन्धित प्रेरणा वे खम्भे हैं, जो प्रकृति प्रदत्त हैं और ये जीवन की दिशा को काफी हद तक तय करने का काम करते हैं।

प्र0 : 'दुनिया में कुछ है नहीं' का क्या तात्पर्य है? बड़े-बूढ़े कई बार ऐसा कहते हैं।

उ0 : जिंदगीभर के प्रयोगों को करने के बाद भी अधूरापन कायम है। हर वो प्रयोग जो मन ने कहा, वो किया लेकिन खोज पूरी नहीं हुई। इसलिए अब कुछ करें, जो ज्यादा स्वाभाविक हो। भक्ति, सेवा, प्रकृति का सानिध्य ध्यान, स्वध्याय, भजन, जप, इत्यादि। ऐसा कहना, समाज को दिये अपने अनुभव का निचोड़ है।

प्र0 : भय?

उ0 : भय का एक प्रयोजन भी है। गीता कहती है कि दूसरे का धर्म भय देता है। कोई कर्म एक के लिए अत्यंत सहज और रोचक, तो किसी अन्य तल के व्यक्ति के लिए भय देने वाला हो सकता है। किसी के लिए विवाह जीवन का सबसे सुनहरा स्वप्न है तो किसी के लिए यह एक असहज बंधन है। किसी को व्यापार में अत्यंत रुचि है, तो कोई व्यापार से दूर भागता है। किसी के लिए विद्याध्ययन आसान है, तो किसी के लिए अत्यंत मुश्किल है।

प्र0 : पुरुष और प्रकृति?

उ0 : यह शरीर प्रकृति है। मिट्टी से मिट्टी के बर्तन बनते हैं और पुनः टूटकर मिट्टी में परिवर्तित हो जाते हैं। उसी प्रकार यह शरीर है। जिस प्रकार व्यक्ति विभिन्न गाड़ियों के माध्यम से अपनी यात्रा तय करता है। वैसे ही पुरुष विभिन्न शरीरों के माध्यम से यात्रा पूर्ण करता है।

प्र0 : राम, कृष्ण और बुद्ध धनाढ्य परिवारों में क्यूँ पैदा हुए?

उ0 : मन, धन और महत्वाकांक्षा के आगे कुछ नहीं जानता। तो बात वहाँ से शुरु करनी थी, जहाँ से मन खत्म करता है। बात बतलानी थी कि धन और अधिकार मिलकर भी, अपने प्रयोजन और स्वभाव के अनुसार बरतने से नहीं रोक सकते। धन के आगे का मार्ग खुलना था। विकास के आगे, उद्विकास की ओर जाना था। यदि राम एक आदिवासी परिवार में पैदा होते तो राम का बनवास जाना, शायद बड़ा उदाहरण न बन पाता।

प्र0 : शरीर में हीलिंग पॉवर क्यूँ होती है?

उ0 : इस शरीर पर नियंत्रण मन का होता है, जो प्रयोगधर्मी है। उसके प्रयोग के जो भी परिणाम होते हैं, उसे शरीर को ही बर्दाश्त करना होता है। हीलिंग पॉवर शरीर में स्थित शक्ति के कारण है। यह शक्ति ही शरीर को पुनः तैयार करती है, ताकि प्रयोगों की प्रक्रिया चलती रहे और अंत में योग के प्रयोग भी, इस शरीर द्वारा संभव हो सकें।

प्र0 : फ्रेशनेस या 'ताज़गी' क्या है?

उ0 : सृष्टि की पराशक्ति, जब अपरा के माध्यम से अभिव्यक्त होती है तो उसे ताज़गी कहते हैं। बचपन में ये सबसे ज्यादा होती है। इसी कारण बचपन सबसे ज्यादा निश्चिंत होता है। पेड़ों में यही परा शक्ति, नए और धानी रंग के पत्तों के रूप में अभिव्यक्त होती है। बुढ़ापे में ये सबसे कम होती है। इसी कारण बुढ़ापा असहज होता है। बुद्ध बुढ़ापे को देखते ही जान गए थे कि ये 'सहज' नहीं है। शक्तिहीनता ही बुढ़ापे की निशानी है।

प्र0 : 'इग्नोरेंस इज़ ब्लिस' क्या है?

उ0 : इग्नोर उसे ही कर सकते हैं, जो दृश्य है। अपरा शक्ति या दृश्य जगत में होने वाले परिवर्तन ही नोटिस किये जाते हैं। परा जगत् स्थिर है, वहाँ परिवर्तन नहीं है क्यूँकि वहाँ समय का प्रभाव भिन्न है। दृश्य जगत के इन परिवर्तनों पर से ध्यान हटाना ही इग्नोरेंस है। परा जगत ही आनंद जगत् है। इस प्रकार आपकी चेतना, परा जगत् में स्थित हो 'ब्लिस' (आनंद) की अनुभूति करती है।

प्र0 : 'मृत्यु' क्या है?

उ0 : असहजता से सहजता की ओर गमन ही मृत्यु है। बुढ़ापा असहज है, बचपन सहज है। यह बुढ़ापे से बचपन की ओर गमन है। स्मृति असहज है। मस्ती सहज है। बुढ़ापा स्मृतियों का संग्रह है तो मस्ती बचपन की अभिव्यक्ति है।

प्र0 : ज्ञान और ध्यान में क्या अंतर है?

उ0 : ज्ञान के भीतर ध्यान है और ध्यान के भीतर शून्यता।

प्र0 : शहरों में भीड़ क्यूँ बढ़ती जा रही है?

उ0 : जहाँ विविधता होती है, वहाँ विकल्प होते हैं। जहाँ विकल्प ज्यादा हैं, वहाँ अवसर ज्यादा है। जहाँ अवसर ज्यादा हैं, वहाँ सफलता की संभावना ज्यादा हैं।

प्र0 : हम सहज कब होते हैं?

उ0 : जब हम साझा करने के भाव में होते हैं। देना और पाना दोनों ही असहज हैं। जो कमाया वो दिया जा सकता है लेकिन साझा वो होता है, जो स्थायी निधि है। जैसे स्वभाव।

प्र0 : कर्तव्य और सेवा में अंतर?

उ0 : जिम्मेदारियों का सम्यक निर्वहन कर्तव्य और स्वाभाविक रूप से कुछ करना सेवा है। जिम्मेदारी न होने पर भी, कुछ सार्थक करना सेवा है।

***

सिद्धार्थ इस जगत को समझने आए थे और उन्होंने वही किया। इस जगत् को जाना और दूसरों को भी, इसे जानने का सूत्र बताया। उनकी लेटी हुई प्रतिमा का शांति भाव, इसी कार्य की पूर्णता की ओर इंगित करता है।

***

पिता बच्चों के सपनों की पूर्णता पर ध्यान देता है तो परमपिता उनकी जीवन की वास्तविकता की अनुभूति और उनकी पूर्णता पर ध्यान देता है।

***

मूर्ति को लाखों लोग देखते हैं लेकिन मूर्तिकार को गिने चुने। यह शरीर भी मूर्ति ही है। एक जैविक मूर्ति। प्रकृति इसकी मूर्तिकार है तो परमात्मा उस मूर्तिकार का कारण।

***

रुचि हो तो जिम्मेदारी भी उपलब्धि लगती है। अरुचि की स्थिति में, जिम्मेदारी बोझ के समान है।

***

परमात्मा इतने पास भी नहीं कि पकड़े और परेशान किए जा सकें और इतने दूर भी नहीं कि पुकारे न जा सकें।

***

ऋषियों की प्रज्ञा श्लोकों और सूत्रों के रूप में अभिव्यक्त होती है। यह श्रुति के रूप में समाज में पहुँचती है और स्मृति के रूप में संग्रहित हो जाती है। यही स्मृति, फिर श्रुति के रूप में अन्य तक पहुँचती है और उनकी स्मृति बन जाती है। प्राचीन काल से यह सूचनाओं को आगे बढ़ाने का तरीका रहा है।

***

जैसे झूला अपने केन्द्र के बिना नहीं चल सकता। वैसे ही जीवन, परमात्मा के बिना नहीं चल सकता। यही क्या कम है कि परमात्मा ने आपके केन्द्र को पूरी मजबूती के साथ संभाल रखा है। मन हराया जा सकता है। शरीर समाप्त किया जा सकता है लेकिन आप समाप्त नहीं किए जा सकते। यदि विकल्प अनंत हैं तो संभावनाएँ भी अनंत हैं। हर नया जीवन, एक नई संभावना है।

***

समस्या को साधन से जोड़ता है, प्रयास। समस्या को समाधान से जोड़ता है, समर्पण। मन समस्या का निराकरण, साधन में ढूँढता है। सम्बन्ध भी साधन ही है। साधन प्रयोग का माध्यम है। साधन परिणाम तो देते हैं लेकिन समाधान नहीं।

***

शादी में लड़के को राजा की तरह और लड़की को रानी की तरह सजाया जाता है। ये एक दिन के राजा और रानी जैसा है। जैन धर्म में दीक्षा लेने के पूर्व भी साधक को राजा और रानी की तरह सजाया जाता है और अगले ही दिन राजा साधु बन चुका होता है। विवाह

जीवन की वास्तविकता का आरंभ है। विवाह से पहले जीवन आकर्षक और रोचक है। विवाह के बाद जो भी है, सब वास्तविक है। आकर्षण और रोचकता का वक्त अब बीच चुका।

ये राजा कहता है कि जिम्मेदारियों का बोझ डाल गधा बना दिया। रानी कहती है कि घर का काम कराते-कराते नौकरानी बना डाला।

शादी के पूर्व गुण दिखते हैं और उनसे अपेक्षा जुड़ जाती है। शादी के बाद एक दूसरे के अवगुण सामने आते हैं तो उनसे विकषर्ण भी होता है।

***

हम अपनी भूख की शांति के लिए, प्रकृति के पास जाते हैं। तो अपनी वृत्तियों की शांति के लिए भी प्रकृति के पास ही जाना होगा।

***

मुँह और भोजन भूख के लिए। नाक और प्राणायाम वृत्तियों के लिए।

***

सारी आशंकाएँ मनोवैज्ञानिक तल पर हैं।

***

वानप्रस्थ, गृहस्थ और सन्यास के मध्य रुपांतरण की एक अवस्था है। जिसमें दोनों ही आश्रमों के कुछ-कुछ भाग उपस्थित होते हैं। गृहस्थ की कुछ वृत्तियाँ व जिम्मेदारियाँ, व सन्यास का स्वभाव व तपस्या।

***

दो विकल्प -

समय लगाकर पैसा खरीदना या पैसे से समय खरीदना।

***

बचपन में खर्च करने को समय होता है लेकिन पैसा नहीं। जवानी में खर्च करने को पैसा होता है लेकिन समय नहीं।

***

पानी के लिए खुदाई करने वाले, कीचड़ और मिट्टी से सने होते हैं। इस कीचड़ और मिट्टी को पाने के बाद ही, वे शुद्ध पानी तक पहुँच पाते हैं। पानी का सोता खुलने के बाद, राहगीर व अन्य, उस पानी से अपनी प्यास को तृप्त करते हैं। भागीरथ की अपनी आंतरिक गंगा को प्रवाहित करने में प्राप्त हुई सफलता, आज करोड़ों को प्रेरणा देती है।

***

हम अपनी सहजता के साथ असहज हैं और अपनी असहजता के साथ सहज। अपनी बुद्धि के साथ सहज हैं और अपने मूल स्वभाव के साथ असहज। वस्त्रों के साथ सहज हैं और शरीर के साथ असहज। वस्त्र का उपयोग, हम एक ढाल के रूप में करते हैं ताकि अपनी चारों ओर की दुनिया के साथ और स्वयं के साथ सहज हो जाए।

सहजता को हम अपनी कमजोरी मान बैठते हैं और असहजता को ताकत। मन यही बतलाता है। अध्यात्मिक तल पर तस्वीर उलट जाती है। सहजता ही शक्ति बन जाती है और असहजता कमजोरी।

***

भारत में विवाह इच्छाशक्ति और सहनशक्ति को बढ़ाने व अहंकार - नाश का कोर्स है। जिसे माँ-बाप अपने बच्चों को करवाना चाहते हैं। इसी कारण वे बच्चों के विवाह में बच्चों

से ज्यादा उत्साहित रहते हैं। और बच्चे इस बात को कहीं न कहीं, भीतर से जानते हैं। इसी कारण बच्चे, माता-पिता के इस उत्साह को, आशंका भरी नज़रों से देखते हैं।

जो देश अध्यात्म के लिए दुनियाभर में जाना जाता है। वहीं देश विवाह-शादियों को लेकर भी प्रसिद्ध है। भारत में माँ-बाप बच्चों की पढ़ाई और नौकरी में भले ही चूक जाएँ किन्तु शादी कराने में कभी नहीं चूकते। इस एक बात पर, वे कभी समझौता नहीं करते। जो देश सबसे ज्यादा सन्यासी पैदा करता है, वही ब्रह्मचर्य के सबसे खिलाफ भी है। क्यूँकि सन्यास व्यक्तिगत निर्णय है और ब्रह्मचर्य का विरोध पारिवारिक प्रवृत्ति है।

***

व्यक्ति नहीं, बुढ़ापा समाप्त होता है। भ्रूण अवस्था की समाप्ति पर ही नवजात उत्पन्न होता है। युवावस्था, बचपन की समाप्ति है। बुढ़ापा, जवानी की समाप्ति है। इसी प्रकार जीवन की समाप्ति, बुढ़ापे की समाप्ति है। पूरा विश्व पुरुष और प्रकृति का ही अभिनय है। और जीवन इसी अभिनय की अभिव्यक्ति है। पुरुष विश्व के केन्द्र में है। दृष्टि से परे, निर्मोही, स्थिर और दृढ़। बुढ़ापा और जीर्णता केन्द्र पर नहीं रह सकते, इसी कारण प्रकृति उन्हें परिधि की ओर धकेल नष्ट कर देती है। यह वह अवस्था है, जो नष्ट होती है। प्रकृति जीव को बुढ़ापे से ताजगी और बचपन की ओर लाना चाहती है। इसी कारण वह जीव को बुढ़ापे से मुक्ति दिला, पुनः ताजगी देती है।

ताजगी या फ्रेशनेस ही सनातन है। यह ईश्वर की पराशक्ति है, जो ताज़गी के रूप में अभिव्यक्त होती है। बुढ़ापा और जीर्णता इसका भाग नहीं, अतः प्रकृति स्वयं को वहाँ से समेट लेती है।

***

विवाह इस दुनिया में अपनी नई और अलग दुनिया बसाने का प्रयोग है। इसलिए जीवन से सम्बन्धित सबसे ज्यादा अनुभव, इसी प्रयोग से प्राप्य है।

***

किसी न किसी की शरण में तो रहना ही होगा –

1. भावनाओं की, 2. भाव की या 3. भा (प्रकाश) की।

***

विवाह करने के लिए 'इच्छा' चाहिए और विवाह न करने के लिए 'इच्छाशक्ति'।

***

भारत में विवाह का उपयोग, मन पर लगाम लगाने के साधन के रूप में होता है।

***

भावनाओं से किसी के मन को पाया जा सकता है। समर्पण से ईश्वर को।

***

मित्रता में प्रधानता आकर्षण की नहीं, सहजता की होती है। भावनात्मक सम्बन्धों में प्रधानता, मोह की होती है। मोहजनित सम्बन्धों में प्रधानता, 'अपनेपन' की होती है। सामाजिक सम्बन्धों में प्रधानता, समान स्टेटस की होती है।

***

विवाह में वचन लिए जाते हैं क्यूँकि अनुभव यही बताता है कि दोनों सहजता से नहीं रह पाएँगे। इसलिए वचन ले लो। अपेक्षाओं से भरा यह रिश्ता असहज है।

***

इस जगत में जो स्थान मजे का है, उस जगत में वही स्थान आनंद का है।

कृष्ण ने गीता में कई व्यक्तियों का नाम लिया और कहा कि वो सब मैं ही हूँ। गीता में व्यक्तित्वों को बस, इतनी ही जगह मिल सकी।

***

भविष्यवक्ता होने के लिए, भविष्य जानना जरूरी नहीं। किसी के मन को पढ़कर जो भी उसे बताया जाएगा, वह यही मानेगा कि बात, उसके भविष्य के बारे में हो रही है। मन भविष्य से ही जुड़ा है। उसके भविष्य का सम्बन्ध, उसके मन से ही है। यदि आप किसी का मन पढ़ पाए तो वो आपको भविष्यवक्ता स्वीकार कर लेगा।

***

किसी के इतने नज़दीक भी न जाएँ कि वो दबाव डालकर अपनी बात मनवा सके और इतने दूर भी न जाएँ कि उसके पुकारने पर उत्तर न दिया जा सके।

***

पत्थर पूजे जाते हैं, हीरे नहीं। क्यूँकि पत्थरों पर प्रकृति ने काम किया और हीरों पर मन ने। प्रकृति पत्थर को शिवलिंग बना देती है और मन हीरे को मूल्यवान से ज्यादा कुछ नहीं बना पाता। सो खुद को मन के हवाले करो या प्रकृति के परिणाम अलग-अलग आएँगे।

***

तीन प्रकार के व्यक्ति :

1. पारिवारिक, 2. सामाजिक, 3. अध्यात्मिक

पारिवारिक के पास लक्ष्य हैं। सामाजिक के पास उद्देश्य और अध्यात्मिक के पास है प्रयोजन।

***

45 मिनट की सैर अर्थात् ये नहीं कि दिनभर कुछ भी खाया जाए और सुबह 45 मिनट का टहलना पर्याप्त होगी। 45 मिनट की सैर अर्थात् दिनभर उतना ही खाया जाए जितना सुबह 45 मिनट में जलाया जा सके।

***

समाज में उपाधियाँ हैं। अध्यात्म में अवस्थाएँ हैं।

***

आदमी और औरत का मिलन पूर्णता का भ्रम तो देता है परंतु पूर्णता नहीं। जब तक कोई आदमी और औरत है, वह पूर्ण कैसे हो सकता है। आदमी और औरत की पहचान ही अपूर्णता है। दोनों ही एक दूसरे में अपनी पूर्णता ढूँढते रहते हैं। लेकिन यह प्रयास अंततः व्यर्थ ही रहता है। अपूर्णता के कारण ही तो एक पहचान की आवश्कता होती है। जो पूर्ण है उसे पहचान की आवश्यकता नहीं। पहचान अपूर्णता की द्योतक है। शक्ति ही ऊर्जा और पदार्थ में परिवर्तित हो, उस जगत् को रचती है, जिसे माया कहते हैं। चेतना जब ऊर्जा और पदार्थ तक उतर आती है तो वह अपूर्णता तक उतर आती है और फिर खोज शुरु होती है, पुनः पूर्णता प्राप्त करने की। चेतना जब शक्ति तक सीमित रहती है, तो उसे कैवल्य कहते हैं।

***

बधाई हो :

वधया, बढ़ना, वृद्धि

वृद्धि होने पर बोला जाता है।

***

सिंदूर का रंग लाल या नारंगी, दोनों ही अग्नि के रंग हैं। सिंदूर सौभाग्य की निशानी अर्थात् सुगमता से प्रकाश की ओर गमन। वैधत्व में बिंदी, सिंदूर नहीं, अर्थात् पुरुष अर्थात् शिव की अनुपस्थिति में ज्योति की संभावना नहीं है। विवाह होने से पहले सिंदूर दान

अर्थात् प्रकाशदान। मंगलसूत्र अर्थात् मन पर नियंत्रण के सूत्र। मंगलसूत्र अर्थात् मन-गल सूत्र। पुरुष द्वारा प्रकृति को प्रदत्त। पुरुष के मिलने पर मन को गलाने का सूत्र प्राप्त।

***

पुरुष के प्रकृति से मिलने पर ही, प्रकृति से पुत्र निकलता है। पुरुष की अनुपस्थिति में संभव नहीं। शारीरिक पुत्र, पिता का विस्तार है। सूक्ष्म पुत्र का जन्म ही व्यक्तित्व को रुपांतरित करता है।

***

श्रीमान् / श्रीमती = शरण देने वाली शक्ति

***

आप सबको खुश नहीं कर सकते। लेकिन आप सबको प्रेम कर सकते हैं। सबको खुश करने के लिए, आपको उनके अनुसार बरतना होगा। यह संभव नहीं क्यूँकि किसी के अनुसार बरतने के लिए, अपना ध्यान उसकी ओर केन्द्रित करना होगा। अपने ध्यान को कई दिशाओं में, बाँटने की भी एक सीमा है। कई दिशाओं में बँटे ध्यान को, खुद में समेटने से अवेयरनेस प्राप्त होती है और यही प्रेम का कारण बनती है।

***

प्यार रोग है। प्रेम योग है।

***

कमल इसलिए पूजनीय है क्यूँकि उसके पास कीचड़ से ऊपर उठने की शक्ति है।

***

मृत्यु बदलाव है। आत्मज्ञान रुपांतरण है। व्यक्ति की मृत्यु कभी उसके लिए घटित नहीं होती। यह पीछे छूट गए, लोगों के लिए घटित होती है। आप सूक्ष्म जगत से स्थूल जगत और पुनः सूक्ष्म जगत में लौट जाते हैं। जो लोग अपने संवेदी अंगों के माध्यम से इस प्रक्रिया को देखते है। वे इसे जन्म और मृत्यु मानते हैं। इसी कारण बुद्ध ने दुःख को आर्य सत्य कहा, मृत्यु को नहीं।

***

पादप जगत अपनी संततियों को प्रकृति के हवाले कर देता है। प्रकृति ही उन्हें पालती है। जन्तु जगत् अपनी संततियों को खुद पालता है। कारण है, पादप जगत् के पास मन की अनुपस्थिति। जंतु जगत् के पास मन की उपस्थिति।

***

जीवन के पहले तिहाई हिस्से में शरीर ऊपर उठता है।

दूसरे तिहाई हिस्से में व्यक्तित्व और तीसरा तिहाई हिस्सा है अपनी शक्ति व चेतना को ऊपर उठाने हेतु।

***

प्राकृतिक जगत् के नियम शाश्वत हैं। वहीं बौद्धिक जगत् के नियम बदलते रहते हैं। इसी कारण बौद्धिक जगत में एक निश्चित विधायिका होती है। जो पुराने नियमों व कानूनों की समीक्षा व नए कानूनों का निर्माण करती रहती है। विधायिका खुद एक नियत समय बाद बदलती रहती है और नई चुनी जाती है।

***

कृष्ण ने किंकर्तव्यविमूढ़ अर्जुन को युद्ध के लिए उद्यत ही नहीं किया अपितु युद्ध हेतु प्रस्तुत हुए, बरबरीक को युद्ध से विमुख भी किया। वे ही शांतिदूत बनकर हस्तिनापुर भी गए थे।

***

एक कालखंड में जो राक्षसी प्रवृत्ति का है, दूसरे कालखंड में वही असफल भी, तीसरे कालखण्ड में वह असंतुष्ट, तो चौथे कालखण्ड में वह सफल है। किसी अन्य कालखण्ड में वह संतुष्ट है। तो किसी अन्य कालखण्ड में वह संत भी। हमारी दृष्टि एक ही कालखण्ड को देखती है और इसे ही यथार्थ मानती है। हमारी 'समझ' पर निर्भरता का कारण भी, एक समय में, एक कालखण्ड को जानने की सीमितता है। एक कालखण्ड में हमारे पास प्रश्न ही प्रश्न होते हैं तो अन्य किसी कालखण्ड में उत्तर ही उत्तर।

***

तपस्या के लिए समाज। समाज के लिए आश्रम।

***

साधु स्वभाव का लाभ समाज को तभी होगा, जब साधु समाज के मध्य रहेगा।

***

ध्वज का मंदिर के गुम्बद पर धँसा हिस्सा –

आत्मा (आधार व अदृश्य)

डण्डा (चेतन, स्थिर)

कपड़ा (मन, चंचल व कम्पित)

***

कुदरत के सब बंदे – कुदरत से सब बँधे।

***

वास्तव में पुरुष स्त्री को नहीं, स्त्री पुरुष को भोगती है।

पुरुष जाता है स्त्री के पास अनुभव लेने और लौटता है शक्ति, संसाधन गंवाकर, भावनाओं में उलझकर और मोह को खुराक देकर।

क्यूँकि मन के पास अपने संसाधन नहीं हैं, तो मानता वो यही है कि भोगकर वो ही लौटा है।

***

प्रेरणा से भरा अल्प काल, प्रेरणाहीन बीते लम्बे समय से, ज्यादा उत्पादक होता है।

***

पुरुष का हाथ चलता है, महिला की जीभ। एक शारीरिक प्रताड़ना देता है, दूसरा मानसिक। दोनों ही हिंसा है। एक की चोट दिखाई देती है, दूसरे की नहीं। पुरुष और स्त्री, दोनों ही एक दूसरे के प्रति हिंसक हैं।

***

जब तक आप दुनिया को गंभीरता से लेंगे, दुनिया आपको गंभीरता से नहीं लेगी। जब आप खुद को गंभीरता से लेंगे, तब दुनिया आपको गंभीरता से लेगी। यदि आप दुनिया को कुछ देना चाहते हैं तो खुद को गंभीरता से लेना होगा। यदि दुनिया से कुछ लेना है, तो दुनिया को गंभीरता से लेना होगा।

***

जीवन में या तो मन के लिए प्रयोग होते हैं या फिर मन के साथ।

***

भारतीय कहानियों का अंत सुखांत होता है क्यूँकि भारतीय सभ्यता में गृहस्थ को एक चरण मात्र माना गया है, चरम नहीं।

***

कई बार बच्चे समाज की इच्छा को पूर्ण करने हेतु ही पैदा किए जाते हैं और समाज की इच्छा (विवाह) को ही समर्पित कर दिए जाते हैं।

कई बार बच्चों को तैयार ही इस कारण किया जाता है कि उनका विवाह किया जा सके। और कई बार विवाह ही इस कारण किया जाता है कि बच्चे को तैयार किया जा सके।

***

True & Truth

True : जो सामने है। जो वास्तविकता है।

Truth : जो सनातन है।

***

बाहर देखने पर 'संघर्ष' दिखाई देंगे और भीतर से देखने पर 'समत्व'।

***

शांति ∝ चेतना को प्राप्त आनंद।

***

मनुष्य अपने मन और बुद्धि के माध्यम से अपने अहंकार पर कार्य कर रहा है और योगी अपनी चेतना पर।

***

चेतना बहुत भोली है और उसके भोलेपन का ही फायदा मन और बुद्धि उठाते हैं।

***

आँखे - सी0सी0टी0वी0 कैमरा

चेतना - दृष्टा (देखने वाला)

मन - डायरेक्टर, जो उसे बताता है कि वहाँ देखो।

***

शिव और शक्ति का अलग रहना ही तो द्वैत है। शिव और शक्ति का मिल जाना ही अद्वैत है।

***

जो अहंकार और बुद्धि का उल्लंघन कर गया, वही ऋषि है।

***

कृष्ण सभी मनुष्यों को भूत कहते हैं। भूत अर्थात् अतीत। अतीत उपस्थित है, मन के कारण और मनुष्य भी मन के कारण ही उपस्थित है। इसी कारण मनुष्य को भूत कहा गया।

***

आत्मा एक ऐसा शब्द है, जिसके लिए स्त्री लिंग और पुल्लिंग दोनों ही संबोधन प्रयुक्त किये जाते हैं। दोनों ही सही हैं और सही नहीं भी हैं।

***

चेतना के बारे में आप तभी जान सकते हैं, जब उसका जन्म हो जाए या वह स्वतंत्र हो जाए। ठीक वैसे ही, जैसे बच्चे के बारे में आप तभी जान सकते हैं, जब उसका जन्म हो जाए।

***

मनुष्य जीवन का वास्तविक लक्ष्य, ब्रह्माण्ड से पुनः जुड़ना है। वहीं मन उसे एक भ्रामक लक्ष्य देता है, जो है अपनी सत्ता की स्थापना करने का।

***

इस पृथ्वी पर उपस्थित सबसे बड़ा रहस्य है, चेतना। इसी की खोज, हर मानव की सबसे बड़ी खोज है। हर मनुष्य इसी की खोज कर रहा है। इसी से कटकर, वह स्वयं को खो देता है और इसे ही पाकर वह स्वयं को पा लेता है

***

जीवन में इतनी शांति तो हो कि अपनी आवाज सुनी जा सके।

***

दया और दिया – दया अर्थात् शक्ति से भरना। दिया अर्थात् ज्योति का जलना।

***

महत्वाकांक्षी जिस समाज में होता है, वह समाज से ही होड़ लेने लगता है। शून्य जिस समाज में होता है, उसके लिए समर्पित होता है।

***

माताजी अब राम-राम कहिए। अर्थात् अवस्था से निकल स्थिति में प्रवेश कीजिए। सुख-दुख को छोड़कर आनंद में प्रवेश कीजिए। मन को छोड़कर, शक्ति के अधीन होइये।

***

चेतना अपने प्रयोजन को पूर्ण कर, आत्मा में परिवर्तित हो जाती है।

यह है बीज का पकना। पके बीज पर से प्रकृति की बाध्यता समाप्त हो जाती है। अब उससे नया पौधा नहीं बनाया जा सकता। वह बीज अब परम् में विलीन होने को प्रस्तुत है। अब वह परम का है।

***

माँ और माया में भेद यह है कि माँ भेद नहीं करती, माया करती है।

***

समय बीतता है ये जानने हेतु कि हमारा कौन है? नहीं पता तो बस इतना, कि हम किसके हैं?

***

जिस निर्विकल्प समाधि को मनुष्य ढूँढ रहा है, वृक्ष उसी निर्विकल्प समाधि में स्थित हैं।

***

प्रकृति किसी को बदलना नहीं चाहती। वो सभी को स्वीकार करती है। बदलना चाहता है तो मन। अपने आस-पास उपस्थित हर एक चीज, हर एक व्यक्ति को वो बदलना चाहता है। मन अगर कहीं बदलाव नहीं चाहता, तो सिर्फ स्वयं में।

***

काम शक्ति को हर लेता है। क्रोध स्वास्थ्य को, मोह समय को, लोभ इन सभी को हर लेता है।

***

'मैं' को 'मेरा' से जोड़ने वाला है मोह।

***

इंसान बच्चे के रूप में एक प्रयोगी पैदा करता है। जब वह अपने बच्चे से जुड़ता है तो साथ में उसके प्रयोगों, प्रयोगों की प्रक्रिया और उनके परिणाम से भी जुड़ता है।

***

प्र0 : स्वामी क्या है?

उ0 : प्रसन्न।

खुशी और प्रसन्नता में भेद यह है कि खुशी का कोई कारण है। प्रसन्नता अकारण है।

***

हर बीतते जन्म के साथ मनुष्य और 'स्थिर' होता चला जाता है।

***

सन्यास का तात्पर्य समाज से दूर जाना नहीं अपितु अपने मन से दूर जाना है। इस क्रम में आप दुनिया के और नज़दीक आ जाते हैं। सम्बन्धों की जगह प्रेम ले लेता है। सन्यास के पहले सम्बन्ध हैं। सन्यास के बाद प्रेम है।

***

रोने और हँसने, दोनों के लिए शक्ति की आवश्यकता है। बचपन शक्ति से लबालब भरा होता है। इसी कारण बचपन आराम से हँस भी सकता है और रो भी सकता है। शक्तिहीन मनुष्य के लिए हँसना और रोना दोनों ही मुश्किल है। स्त्रियाँ ज्यादा सहजता से रो सकती हैं, क्यूँकि वे पुरुषों की अपेक्षा शक्ति से ज्यादा सम्पन्न हैं।

***

जब आप किसी पर ध्यान देते हैं तो बदले में वो आपको एक भूमिका दे देगा।

***

अविवाहित के पास आशा और उमंग दोनों हैं। हाँ, अविवाहित के जीवन में परेशानियाँ हो सकती हैं। जो परिस्थितियाँ या उसका मन उत्पन्न कर रहा है। वहीं विवाहित ही जीवन के नरक होने की शिकायत करता है। कारण है अब दो मन है, निपटने के लिए। आगे कुआँ, पीछे खाई।

***

मैं का पूरा दायरा 'मेरा' से लेकर 'मेरे' तक सीमित है। यह उस रेशम के कीड़े के समान है, जो अपने चारों ओर एक ककून का निर्माण कर लेता है और बाहरी दुनिया से कट जाता है। अंततः उसे बाहर आने के लिए, इस आवरण को काटना पड़ता है। काट देने के कारण ककून का उपयोग नहीं हो पाता। अतः ककून को पाने के लिए, उसे गरम पानी में डाल दिया जाता है। जिससे कीड़ा अंदर ही मर जाता है और ककून काटे जाने से बच जाता है। मनुष्य भी मोह के ककून का अपने चारों ओर निर्माण कर लेता है। उसे बाहरी मोह के द्वारा, इस 'मेरा और मेरे' के दायरे के भीतर ही रखा जाता है। या वो खुद अपने मोह के कारण, इस दायरे से बाहर नहीं निकल पाता।

***

दृश्य माँ, शरीर और मन के लिए समर्पित है। अदृश्य माँ, आपकी चेतना के लिए। दृश्य पिता, व्यक्तित्व और महत्वाकांक्षा के लिए समर्पित हैं। अदृश्य पिता, आपके प्रयोजन व आत्मा के लिए।

***

सामाजिक पहचान से 'स्व' तक की यात्रा, कुछ खोने की यात्रा है। रिक्त जगह में शांति भर जाती है। खुद से खुदा तक की यात्रा भी, कुछ खोने की यात्रा है। समय को खोने की यात्रा और इस जगह में आनंद भरता जाता है।

***

चेतना से आत्मा तक की यात्रा, प्रयोजन की यात्रा है।

***

विद्यार्थी और साधु दोनों ही घर छोड़ते हैं व एकांत खोजते हैं। कारण है कि दोनों के लक्ष्य नियत हैं और घर की व्यवस्था चलाने के लिये, ध्यान को कई दिशाओं में बाँटना पड़ता है। दोनों के लिए सुख प्राप्ति का माध्यम सिर्फ एक है। जो है अपने प्रयोजन पर काम करना।

***

जीवन जीने के दो तरीके हैं –

अपनी आदतों के साथ जीते रहें और उन अनुभवों से दो-चार होते रहें, जो इन आदतों की वजह से आएँगे। या फिर किसी ऐसी प्रक्रिया पर काम करें, जिनसे ये अशुद्धियाँ उभरकर सामने आती रहें और विसर्जित होती रहें। इससे स्थिरता की संभावना बढ़ जाती है। इसी कारण कर्म के साथ क्रिया, भी आवश्यक है। क्रिया अर्थात् प्राणायाम।

***

प्रयोजन के इतर जो कुछ भी है, वो सब लोभ है। अर्थात् सुख भी प्राप्त हो, संपत्ति भी प्राप्त हो। काम भी मिले। लेकिन संपत्ति और काम के साथ सुख नहीं, उत्तेजना जुड़ी है। चेतना का एकमात्र कार्य है, अपने प्रयोजन को पूर्ण करना। बस। इससे इतर वह कुछ नहीं पाना चाहती।

***

मनुष्य का वास्तविक स्वभाव याद रखना नहीं, भूलना है।

***

सूचनाओं के चार स्त्रोत हैं।

1. मन, 2. बुद्धि, 3. चेतना, 4. आत्मा।

***

विकास की महत्वाकांक्षा ठीक है। महत्वाकांक्षा का विकास नहीं।

***

जब गुण मिलते हैं तो शादी हो जाती है और जब स्वभाव मिलता है तो मित्रता।

***

यज्ञ कर्म फल, न उत्पन्न करने का विज्ञान है।

***

शून्यता की स्थिरता हेतु 1. स्वभाव, 2. साधना।

शून्यता रूपी गाड़ी के दो पहिये हैं, स्वभाव व साधना। अपने स्वभाव अनुसार जीवनयापन व नियमित साधना। उदाहरण ध्यान योग, प्राणायाम इत्यादि। बुद्ध ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् ध्यान करना नहीं छोड़ते। महावीर करुणा व शाकाहार नहीं छोड़ते।

***

अपनी इच्छाओं का बोझ, दूसरों पर डालना अन्याय है।

***

तुम्हीं हो माता, पिता तुम्हीं। तुम्हीं हो बंधु, सखा तुम्हीं। ये किसी भक्त की भावनात्मक अपील नहीं अपितु ऋषियों के तत्व ज्ञान का निचोड़ है। तपस्या और साधना से निकला अमृत है।

***

प्रकृति ही भाव है। जब प्रकृति चेतना से जुड़ती है, तब वह स्वभाव बन जाती है। जिसमें 'स्व' चेतना है और भाव है प्रकृति। जिस समय मनुष्य का भाव, प्रकृति के भाव से सम हो जाता है। 'स्व' का उदय होता है। स्वामी वह है, जिसकी प्रकृति चेतना हेतु समर्पित है।

***

सभी विकल्पों की समाप्ति पर जो बचता है, वही सत्य है।

***

प्राणायाम सधना अर्थात् श्वास पर से मन का प्रभाव समाप्त होना। शरीर के अनुसार श्वास चलना। न की मन के अनुसार।

***

काम के केन्द्र में 'ध्यान' है। काम और ध्यान दोनों ही अतीन्द्रिय अनुभव उपलब्ध कराते हैं। बढ़ी हुई उत्तेजना से मुक्ति पाने की शारीरिक क्रिया ही 'काम' है। काम का पूरा अस्तित्व उत्तेजना से जुड़ा है। उत्तेजना की अुनपस्थिति में काम की आवश्यकता नहीं। काम के अंत में जिस आनंद और शांति की अनुभूति होती है, वही समाधि में सदैव उपलब्ध है। इसी कारण समाधि को उपलब्ध चेतना, अपने आनंद व शांति के लिए काम पर निर्भर नहीं। व्यक्तित्व समाधि को उपलब्ध नहीं। उसके पास एकमात्र उपाय है, काम। कभी उत्तेजना से मुक्ति के लिए, कभी खुशी व संतुष्टि के लिए।

***

ओम ध्वनि से सहस्त्रार पर चोट होती है।

***

108 नाम :

1 – परमात्मा

0 – शून्यता

8 – अपरा के आठ भेद

***

सोना और शक्ति एक समान हैं। दोनों को तपकर ही शुद्ध होना होता है। मन सोने को महत्ता देता है और चेतना शक्ति को। मन पदार्थ को प्रमुख मानता है और चेतना पदार्थ की जननी को। मन और चेतना, दोनों को ही शुद्धता चाहिए। अशुद्धि से दोनों ही, दूर रहना चाहते हैं। मन के लिए सोना मूल्यवान है और चेतना के लिए शक्ति। राजा के मस्तक पर सोने का मुकुट है तो योगी के मस्तक पर शक्ति का आवरण।

***

एकान्त चेतना का कार्यालय है। चेतना वहीं काम करती है। मन एकांत से घबराता है। चेतना के पास दो उपाय हैं। 1. या तो वह एकांत की शरण ले। 2. या अपनी शक्ति को इतना संघनित करे कि भीड़ में भी वह निर्बाध रूप से अपना कार्य कर सके। संघनित शक्ति उसे भीड़ में भी एकांत की सहूलियत देती है।

***

जैसे हमें शरीर, मन और बुद्धि मिलते हैं। वैसे ही अपनी वास्तविक पहचान भी मिलती है और ब्रह्माण्डिय बोध भी मिलता है।

***

जिस क्षण आपकी ऊर्जा गुँथ जाती है। उस क्षण, आप एक जगह पर स्थिर बैठने में सफल हो जाते हैं।

***

समाज दिमाग से चलता है, परिवार दिल से।

***

भविष्य का प्रयोजन है कि वर्तमान तक पहुँचा जा सके।

***

उद्देश्य व प्रयोजन : उद्देश्य उद् (उदासीन) अवस्था की ओर लेकर जाता है जबकि प्रयोजन, उद् अवस्था में स्थित होने पर प्राप्त होता है।

***

अनुभव, पदार्थ के साथ प्रयोग करने पर प्राप्त होता है। लोगों के साथ व भीड़ में प्राप्त होता है। वहीं अनुभूति एकांत में।

***

शून्यता चेतना की स्थायी निधि है, जैसे स्वभाव मनुष्य की स्थाई निधि है।

***

स्वभाव वर्तमान की ओर लेकर जाता है, मन भविष्य की ओर।

***

वाह्य जगत् में जो कामना है, वही आंतरिक जगत् में उद्देश्य। वाह्य जगत् में जो रुचि है, वही आंतरिक जगत् में प्रेरणा।

***

महाभारत में एक ओर धर्मराज थे तो दूसरी ओर दानवीर। दोनों ही अपनी-अपनी कमजोरियों के साथ। धर्मराज का व्यसन था जुआ तथा दानवीन का व्यसन था मोह।

***

बुद्धि सफलता लाती है, सुख नहीं। शक्ति ही सुख है। बुद्धि शक्ति पर चलती है, जैसे पंखा बिजली पर चलता है। बुद्धि सुख को खर्च कर सफलता लाती है। शक्ति स्वभाव को समृद्ध करती है। अपने मूल स्वभाव में रहना, जीवन को उत्सव सरीखा बना देता है। सफलता भी उत्सव आयोजित करती है। स्वयं व दुनिया को भरोसा दिलाने हेतु, कि सब ठीकठाक है। वहीं मूल स्वभाव में रहने वाले को सामाजिक उत्सव फीके व बेरंग लगते हैं। जब जीवन उत्सव हो चले, तब उसका प्रदर्शन व आयोजन बेमानी है।

***

द्रौपदी के पाँच पति, पाँच अलग-अलग तलों के लिए –

(1) मानसिक (2) शारीरिक (3) भावनात्मक (4) मनोवैज्ञानिक (5) अध्यात्मिक

***

ये दुनिया बुद्धि से चलती है। बुद्धि ही व्यापार का कारण है। मन को आकर्षित करने हेतु बुद्धि अनेक आविष्कार करती है व स्वाँग रचती है। योजना यह है कि मन को आकर्षित करो और बदले में वो पैसे देगा। जिसे बुद्धि संपत्ति में बदल देगी। मन की अपनी आवश्यकताएँ और इच्छाएँ हैं। बुद्धि यह बात जानती है। इन आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति कर, बुद्धि बदले में धन प्राप्त करती है।

***

प्रेमी-प्रेमिका, पति-पत्नि एक दूसरे से बोले गए झूठ से घृणा करते हैं क्योंकि ये उनमें 'असुरक्षा की भावना' भर देता है। बाहर हर व्यक्ति 'मेरा' या 'पराया' दिखाई देता है। 'मेरा'

द्वारा बोला गया झूठ, यह आशंका पैदा करता है कि 'मेरा' कहीं 'पराये' के साथ तो नहीं जा रहा। इसी कारण इन रिश्तों में एक बात अकसर बोली जाती है और वो है 'मुझसे झूठ मत बोलना क्यूँकि मुझे झूठ से सख्त नफरत है'। अब भले ही वे खुद कितने ही झूठ क्यूँ न बोला करें लेकिन उन्हें सामने वाले के झूठ से नफरत है।

***

शारीरिक श्रम से शारीरिक थकान जुड़ी है। बौद्धिक श्रम से मानसिक थकान जुड़ी है।

***

ज्ञानी स्मृति से सम्बन्धित बात नहीं करता। स्मृति से उसका कोई सम्बन्ध नहीं। स्मृति से सम्बन्धित बातें कर, वह अपनी ऊर्जा व्यर्थ नहीं करना चाहता। अपने मौन को वह स्मृति के लिए भंग नहीं करना चाहता।

***

इच्छाएँ तब तक जागी हुई हैं, जब तक आप सोये हुए हैं। जिस दिन आप जाग गए, इच्छाएँ सो जाएँगी।

***

भोजन के लिए दूसरों पर निर्भर रहने से कहीं ज्यादा बुरी स्थिति है, अपनी खुशी के लिए दूसरों पर निर्भर रहना। इसी कारण फक़ीर राजा है और राजा फक़ीर।

***

मन प्रयोग करता है। बुद्धि उपयोग करती है। भाग्य संयोग, चेतना जोग और आत्मा योग करती है।

***

मोह जड़ता है – जो यह चाहता है कि जो जैसा चल रहा है, वैसे ही चलने दो। बदलाव से डर को मोह कहते हैं। यह भय कि परिवर्तन न जाने क्या लाए, सो बदलाव का विरोध करो। मोह प्रकृति के नियमों के विरुद्ध है। प्रकृति में कहीं भी जड़ता नहीं। हर जगह प्रवाह है, चक्र है। रोकने वाला, वास्तव में खुद रुका हुआ है। मोह कहता है कि 'मैं भी रुकूँगा, तुम भी रुको'।

***

स्वभाव के अनुसार बरतना ही जिम्मेदारी है।

प्रतिभा, गुण ही कर्तव्य हैं।

स्वभाव को निर्मल बनाना ही धर्म है।

***

भविष्य से दो बातें जुड़ी हैं – (1) असुरक्षा, (2) महत्वाकांक्षा।

***

जीवन सूक्ष्म और स्थूल, दो रूपों में अभिव्यक्त होता है। सूक्ष्म रूप में प्रकृति और परमात्मा परिवार हैं। स्थूल रूप में माता-पिता, पत्नी, बच्चे इत्यादि परिवार हैं।

***

जैसे एक ही शक्ति, कई अन्य शक्तियों में परिवर्तित हो जाती है। वैसे ही एक सुख, अन्य कई सुखों की भरपाई कर देता है।

***

गंदगी भी हम वहीं करना चाहते हैं, जहाँ सफाई हो। गंदी जगहों पर हम गंदगी नहीं करना चाहते।

***

जीवन यदि द्विआयामी ही होता तो मात्र मन और बुद्धि ही होते, विवेक नहीं होता। विवेक का होना ही ये सिद्ध करता है कि जीवन द्विआयामी नहीं है।

***

गरीब के पास खोने को कुछ नहीं है। यही उसके स्वीकार भाव की वजह है, यही उसकी विनम्रता की वजह है। अमीर के पास खरीदने को सब कुछ है, पर उसकी व्यस्तता उसे कुछ पाने नहीं देती। यही उसकी कुंठा और झुँझलाहट की वजह है।

***

दो ध्रुवों के बीच बंधित चेतना की अभिव्यक्ति को ही जीवन कहते हैं। चेतना उपस्थित है, इन दोनों ध्रुवों के बिना भी। जिसे कैवल्य कहते हैं।

***

अपेक्षा भावनाओं का व्यापार है। अपेक्षा ही भविष्य का व्यापार है। भावना भविष्य से जोड़ती है तथा भाव वर्तमान का रस है।

***

हर व्यक्ति अपनी मौलिकता के लिए जाना जाता है। कोई भी व्यक्ति अपनी ट्रेनिंग के लिए नहीं जाना जाता है। मौलिकता ही स्वधर्म है। मौलिकता की अभिव्यक्ति ही स्वधर्म पालन है। मौलिकता वर्तमान की फसल है, जिसका उपयोग भविष्य में होता है।

***

शिक्षक विद्यार्थी को बुद्धि पर काम करने को कहता है। गुरु शिष्य को स्वभाव पर काम करने को कहता है।

***

ज्ञान भविष्य में नहीं मिलता, भविष्य में मात्र सूचनाएँ हैं। भविष्य अपेक्षा से सम्बन्धित है। वर्तमान अपेक्षा विहीन है। इसी कारण व्यक्ति का मूल स्वरूप, वर्तमान में उभर आता है। जब व्यक्ति वर्तमान में उतर जाता है तो ज्ञान स्वतः ही वर्तमान से उभर आता है।

***

जीव बीज है, व्यक्तित्व उसकी अभिव्यक्ति –

जब तक बीज बना रहता है, उपयुक्त समय आने पर उसमें से व्यक्तित्व निकलते रहते हैं और विस्तार पाते रहते हैं, जब तक कि जीव विखण्डित न हो जाए।

***

नारी यदि नर्क का द्वार है तो इस द्वार के आगे नर ही कतार में प्रतीक्षारत खड़े रहते हैं। 'नारी नर्क का द्वार है' यह बात मात्र आधी है। पूरी बात है कि नर ही नरकवासी है। और यह भी तथ्य है कि नर्क से होकर ही 'स्व' का रास्ता जाता है।

***

आशंका भविष्य से जुड़ी है और स्मृति अतीत से। भविष्य की कोई स्मृति नहीं होती और अतीत के प्रति, कोई आशंका नहीं होती।

***

योनियाँ अलग-अलग होती हैं लेकिन कभी-कभी स्वभाव की अदला-बदली हो जाती है। मनुष्य में जानवर का स्वभाव उभर आता है और जानवर में मनुष्य का।

***

प्रेम + मन = प्यार

प्यार – मन = प्रेम

***

शून्यता ही शांति है।

***

जो विकल्पों से परे है, वो सहज प्रकृति है। स्वभाव प्रकृति की अभिव्यक्ति है। विकल्प, मूल स्वभाव से विचलन है।

***

इस जगत के लिए अन्नपराशन

उस जगत् के लिए शांतिपराशन

***

प्यार पैकेज से होता है, प्रेम उपस्थिति से।

***

कलह का कारण है –

इच्छाओं की अतृप्ति की वजह से साथ भी न रह पाना और मोह की वजह से अलग भी न रह पाना।

***

सहजता में तमाम समस्याओं के बाद भी, उम्मीद साथ नहीं छोड़ती। असहजता तमाम सुविधाओं के बाद भी, उम्मीद समाप्त कर देती है।

***

परमहंस वह आत्मा है, जिसने अपने सभी प्रयोजनों को पूर्ण कर लिया है। अब उसके और परम के बीच, मात्र शरीर की बाध्यता है। क्यूँकि मन अब समाप्त हो चुका। प्रयोजन पूर्णता के साथ ही मन चेतना में विलीन होने लगता है और चेतना आत्मा में।

***

करवाचौथ का व्रत पति के लिए नहीं, बल्कि अपनी असुरक्षा को दूर करने को किया जाता है। अपनी निर्भरता को बढ़ाने के लिये किया जाता है। जब असुरक्षा की भावना नहीं होती तो व्रत, व्रत न होकर स्वभाव हो जाता है।

***

पॉवर नैप यानि योग निद्रा।

***

जीवन के तीन चरण – अभाव, भाव, प्रभाव।

***

भावना में मन + समझ दोनों होते हैं। भाव में समझ विलुप्त होने लगती है और प्रकाश तक पहुँचते ही, मन भी विलुप्त हो जाता है।

***

आत्मनिर्भरता की अनुपस्थिति में, स्वतंत्रता की चाह को समाज स्वच्छंदता का नाम देता है। स्वतंत्रता, स्वतंत्रता तभी तक है, जब तक कि वह आत्मनिर्भर है।

***

जिंदगी एक जंग है, जब तक मन संग है। एक मन समस्या है और जब दो मन साथ आ जाएँ, तो यही जंग है।

***

अहंकार परास्त होता है, संयम से।

***

मृत्यु 'मैं' को 'मेरा' से अलग कर देती है।

***

जो जिम्मेदारी है वो स्वभाव कैसे हो सकता है। जो स्वभाव है वो जिम्मेदारी कैसे हो सकता है। जिम्मेदारी सम्बन्धित है मन से और स्वभाव स्वयं बरतता है। जिम्मेदारी देता भी मन है और लेता भी मन है।

***

जीवन में दो ही संभावनाएँ हैं – 1. या तो आप अपने मन के लिए काम करेंगे। 2. या अपने लिए काम करेंगे।

***

जितनी बड़ी जिम्मेदारी हो, उसकी घोषणा उतनी ही धूमधाम से की जाती है।

***

अंधेरे की अपनी कोई वास्तविक उपस्थिति नहीं है। अंधेरा अंतरिक्ष का वह भाग है, जहाँ पर रोशनी नहीं है।

***

पदों का सृजन, जिम्मेदारी संभालने के लिये प्रोत्साहित करने हेतु किया गया। जिसमें शीर्ष पर एक व उसके अधीन कई पद सृजित किए गए।

***

अग्नि सभी विभिन्नताओं को समाप्त कर देती है। यह पदार्थ को स्वयं में आत्मसात कर, ऊष्मा मुक्त कर उन्हें राख में बदल देती है।

***

कल हो न हो लेकिन वर्तमान तो है। तो बेहतर है कि वर्तमान में ही रहो। उसके साथ रहो, जो सदैव वर्तमान में रहता है।

***

बच्चों में स्वभाव स्मृति का स्थान ले लेता है। बड़ों में स्मृति स्वभाव का स्थान ले लेती है। इसी कारण बच्चे झगड़ने के बाद भी दोस्त बन जाते हैं। वहीं बड़े झगड़ने के बाद, दोस्ती की संभावना को समाप्त कर देते हैं।

***

पति या पत्नि की अहमियत बुढ़ापे में जाकर पता चलती है। जवानी में तो बस माँग, महत्वाकांक्षा, इच्छा तथा अहंकार ही होता है। बुढ़ापा और बीमारी इनमें से कई दीवारों को गिरा देता है। तब जाकर बात, जरूरत पर आकर ठहरती है। तब भी ठहर जाए, ये भी कोई आवश्यक नहीं। बुढ़ापे तक भी अहंकार टूट जाए, यह कोई आवश्यक नहीं। बुढ़ापे तक भी महत्वाकांक्षा, इच्छा पूरी हो जाए यह कोई आवश्यक नहीं। किसी के साथ होने की चाह भी इच्छा ही है।

***

इंसानों को पुरुष और स्त्री रूप में देखने हेतु, शक्ति खर्च करने की आवश्यकता है। उन्हें इंसान रूप में देखने पर, अनावश्यक शक्ति व्यय रूक जाता है।

***

जिनसे भी हम प्यार करते हैं और जिनसे नफरत करते हैं। दोनों के ही साथ, हम एक जैसे तरीके का व्यवहार करते हैं। दोनों को ही हम बाँधकर रखना चाहते हैं। दुश्मन को हथकड़ियों में तो प्यार को रिश्तों में। दुश्मन को जेल में तो प्यार को घर में। प्यार को नज़रों से ओझल नहीं होने देना चाहते हैं, तो दुश्मन को नज़रों के सामने नहीं आने देना चाहते हैं। दोनों के ही साथ हम स्वाभाविक नहीं हैं। एक के साथ रोमांच है तो दूसरे के साथ उत्तेजना। एक के साथ आकर्षण है, तो दूसरे के साथ प्रतिकर्षण।

***

कर्ता, कर्म और समय परस्पर सम्बन्धित है। कर्ता, कर्म को जिस दायरे में बाँधता है, वो है समय। कर्म के लिए बहिर्मुखी होना आवश्यक है। कर्म के लिए आवश्यक है मन, ऊर्जा और इच्छा। बहिर्मुखी मन अटैंशन है। कर्ता सदैव समय से बँधा है। प्रकृति मात्र क्रिया करती है। इसी कारण वह सनातन है।

***

मनुष्य और परमात्मा में मुख्य भेद –

मनुष्य की इच्छा भी है और आवश्यकता भी। परमात्मा की न इच्छा ही है और न आवश्यकता ही।

***

मन ही कर्ता है। मन ही अधिकार कायम करने की पहल करता है और बुद्धि बताती है कि अधिकार कायम कैसे रखना है।

***

संभावनाएँ सिर्फ बाहर ही नहीं, भीतर भी हैं। दो प्रत्यक्ष आयामों की संभावनाएँ बाहर हैं और दो अप्रत्यक्ष आयामों की संभावनाएँ भीतर हैं।

***

सामान्य विवाह व शिव विवाह में अंतर यह है कि सामान्य विवाह अपनी पूर्णता की खोज में किया जाता है व शिव पूर्ण होकर विवाह करते हैं।

***

विवाह का उपयोग एक सामाजिक पुनर्वास कार्यक्रम जैसे भी हो सकता है। बिगड़े लड़के और सामान्य लड़की का या फिर स्वच्छंद लड़की और सामान्य लड़के का।

***

शादी हुई। परिवार पूर्ण हुआ। आप खुद कब पूर्ण होंगे?

***

वृक्षों और मनुष्यों के मध्य एक अंतर यह भी है कि मनुष्य आदतों से ग्रसित है। वृक्ष आदतों से मुक्त है।

***

कृष्ण अर्जुन के मध्य महाभारत में जो सुंदर घटना घटी, वह थी अर्जुन का कृष्ण के प्रति समर्पण और मार्गदर्शन की प्रार्थना। इसका प्रत्युत्तर कृष्ण ने इस अति सुंदर उपहार से दिया, जो है गीता। किसी एक का समर्पण, युगों तक भावी समर्पितों के लिए मार्ग प्रशस्त कर देता है।

***

शादी के पहले आप सुखी होते हैं। शादी के बाद खुशी के प्रयोग होते हैं। शादी के बाद मात्र यही प्रश्न होता है कि 'खुश तो हो न?'

***

एक पौधा हर व्यक्ति के भीतर भी स्थित है। जो प्रयोजन से पुष्पित होता है और शक्ति से पल्लवित होता है।

***

प्रेम चेतना के स्तर पर होता है। इसी कारण कृष्ण और सुदामा के प्रेम की बातें, सदैव से भाव विभोर करती हैं। प्यार होता है शरीर के स्तर पर या मानसिक स्तर पर।

***

जीवन यदि ऊँचाइयाँ छूने का अवसर देता है तो यही जीवन अपनी गहराइयाँ नापने का भी अवसर देता है।

***

स्त्री की विवाह हेतु घोषणा – 'तुम मुझे खुशी दो, मैं तुम्हें सुख दूँगी'। खुशी अर्थात् सामाजिक, आर्थिक, भावनात्मक संबल व असुरक्षा की भावना से मुक्ति। सुख अर्थात् संतान सुख, शरीर सुख और परिवार सुख।

***

अस्तित्व के चार आयाम –

1. चैतन्य, 2. चेतना, 3. जीव, 4. व्यक्तित्व।

***

आपकी प्रतियोगिता किसी और से नहीं– अपनी क्षमताओं का पूर्ण उपयोग करने से, आपका मन ही आपको रोकता है। सो प्रतियोगिता अपने ही मन से है।

***

ऊर्जा से अनुभव व शक्ति से अनुभूति प्राप्य है। सांसारिक जगत् अनुभव के प्रयोग करता है व सन्यासी जगत् अनुभूति के।

***

दो जहाँ – 1. दृष्य, 2. अदृष्य

***

स्त्री में प्रकृति और मन दोनों हैं। प्रकृति समर्पित होती है और मन अधिकार करता है। इसी कारण स्त्री समझ नहीं पाती कि पुरुष के प्रति समर्पित होना है कि उस पर अधिकार करना है।

***

जिसका कोई नहीं होता, उसका भगवान होता है। कृष्ण ने अर्जुन को गीता दी क्यूँकि अर्जुन लोभी न था, संतोषी था। बस मोह धर्म के आड़े आ रहा था।

***

पौधों के शरीर का भाग, मनुष्यों के शरीर का भाग बन जाता है। मनुष्यों के शरीर का भाग अंततः पौधों के शरीर का भाग बन जाता है और यह चक्र चलता रहता है।

***

जीवन में जो कुछ भी सौंदर्य और रस है, वो प्रकृति के कारण है।

***

तीन स्तर – 1. मर्द और औरत, 2. शिव और शक्ति, 3. पुरुष और प्रकृति।

***

प्रकृति का कोई कार्य निश्चय करके नहीं करती। इसी कारण वह कर्मफल से मुक्त रहती है।

***

खुद को पाए बिना जो भी इकट्ठा करेंगे, वो सब छूट जाता है। खुद को पाकर जो इकट्ठा करेंगे, वही साथ रहता है।

***

सारे प्रश्न आते कहाँ से हैं? भ्रम से। भ्रम के समाप्त होते ही, सारे प्रश्न भी समाप्त हो जाते हैं। बचती है तो बस स्पष्टता। काम भ्रम पर करना है, प्रश्नों पर नहीं। सारे प्रश्न आपको समय की ओर खींचते हैं और अवसरों व प्रयोगों का सिलसिला प्रारंभ हो जाता है।

***

कर्म अंतःकरण के प्रभाव में किए जाते हैं। अंतःकरण पर कार्य करके, कर्मों में परिवर्तन लाया जा सकता है।

***

एक चीज है जो भविष्य में भी नहीं बदलेगी और वह है प्रकृति।

***

घर वालों के पसंदीदा सवाल –

1. पढ़ाई कर लिये?

2. शादी कर लिये?

3. बच्चा पैदा कर लिये?

4. बच्चों के लिये इंतजाम कर लिये?

5. दवाई ले लिये?

***

कपड़ों ने शरीर के प्रति जितनी उत्कंठा जगाई है, उतनी स्वयं शरीर ने भी नहीं जगाई।

***

जहाँ प्रेम मिलता है, वहीं आप निःशस्त्र हो जाते हैं। भूमिका छोड़ देते हैं और सहज हो जाते हैं। माँ के साथ प्रेम, इसी श्रेणी में आता है। वहीं जहाँ प्यार मिलता है, वहाँ भूमिका प्रारंभ हो जाती है और स्वाभाविकता जाती रहती है।

***

सामाजिक स्तर, हर समाज के अलग-अलग हैं। इच्छा, हर व्यक्ति की अलग-अलग है लेकिन आवश्यकता सबकी एक समान है।

***

पौधा खड़ा भले ही पदार्थ पर होता है लेकिन खड़ा उसे शक्ति ही करती है। हमारे भीतर भी ठीक वैसा ही पौधा है।

***

समय की परिधि में जिसे महसूस किया जाए और जिसे अभिव्यक्त किया जाए, वही भावना है।

***

प्यार करने की तो उमर होती है लेकिन प्रेम समय से परे है।

***

बुद्ध ने बताया कि भीतर अग्नि है, तेल है, बाती है और दीया भी है। अतः दीप जल सकता है।

***

प्यार एक प्रयोग है, जिसे करने को भविष्य की आवश्यकता है।

***

बुद्धि के लिए अटेंशन की जरूरत है, प्रेम के लिए अवेयरनेस की।

***

यह एक झूठ है कि यदि कुछ न किया जाए तो कुछ नहीं होता। वास्तविकता ये है कि कुछ करने पर हमेशा थोड़ा ही होता है और कुछ न करने पर बहुत अधिक। मन वही काम करता है जो वह सोचता है। मन के अलावा भी इस शरीर में बहुत कुछ है। यदि मन कुछ भी न करे, तब भी बहुत कुछ इस शरीर से होता रहेगा। बस आपकी योजना के अनुसार नहीं होगा। इस कर्तापन के झूठ को, हम हर पीढ़ी को ढोते रहते हैं।

***

प्रकृति के वलय के बाहर है, व्यक्तित्व का क्षेत्र। जो प्रकृति के वलय से बाहर हो गया, वह व्यक्तित्व के रूप में अभिव्यक्त होता है। व्यक्तित्व के परे मात्र अस्तित्व है। समुद्र में उठने वाली लहरें मात्र वैसे ही हैं, जैसे कि प्रकृति से उभरते व्यक्तित्व। लहरें समुद्र के कारण हैं। लहरों के कारण समुद्र नहीं। वैसे ही प्रकृति के कारण व्यक्तित्व है। व्यक्तित्व के कारण प्रकृति नहीं।

***

क्रोध अहंकार का हमारे ऊपर पड़ने वाला प्रभाव है।

***

ठहराव मृत्यु है। निश्चित तौर पर ठहराव मन की मृत्यु है और चेतना का जीवन है।

***

अर्जुन ने ये नहीं कहा कि अब कभी युद्ध नहीं करूँगा। उन्होंने कहा कि ये वाला युद्ध नहीं करूँगा।

***

विचार हमारे लिए नहीं, हमारे मन के लिए काम करते हैं।

***

किसी से नफरत करने की संभावना तब बनती है, जब खुद से प्यार हो। खुद से प्यार न होने की स्थिति में नफरत की संभावना नहीं। प्रेम की अवस्था में आकर्षण और नफरत की संभावना समाप्त हो जाती है।

***

दो अवस्थाएँ – 1. या तो जीवन आपके अनुसार होगा या 2. आप जीवन के अनुसार होंगे।

***

हम आंतरिक स्थिरता ढूँढ रहे हैं। स्थिरता से ही प्रसन्नता का रस उत्पन्न होता है। अस्थिरता और प्रसन्नता का कोई मेल नहीं।

***

मोटिवेशनल गुरु बतलाते हैं कि कक्षा (ऑर्बिट) बदलना संभव है, प्रयास करना चाहिए। सद्गुरु बतलाते हैं कि 'आयाम' बदलना संभव है।

***

जब तक समत्व नहीं, तब तक समझ ही सही क्यूँकि मन तो खुद के सिवा, किसी और को अपना मानने को तैयार नहीं।

***

पहचान, प्रयोग और प्रयोगी से सम्बन्धित है। योगी 'यम' का पालन करता है। यम के इतर जो भी है, वह प्रयोग है। योगी की कोई पहचान नहीं क्यूँकि उसके पास कोई प्रयोग नहीं। व्यक्तित्व को उसके प्रयोग और परिणाम के लिए ही जाना जाता है।

***

मूल प्रवृत्ति (इंस्टिंक्ट) :– हर योनि के साथ एक विशेष स्वभाव जुड़ा होता है। जीव जब उस योनि को धारण करता है, तो अपने मूल प्रवृत्ति (इंस्टिंक्ट) को वह साथ लेकर जाता है। साथ ही उस योनि से जुड़ा स्वभाव, उसे इंस्टिंक्ट के रूप में प्राप्त होता है।

***

मोह के साथ एक समस्या जुड़ी है, मोह भंग की।

***

उदाकाश से ऊपर है, चिदाकाश।

***

हम बुद्धि को नहीं, बुद्धि हमें दौड़ाती है।

***

खुद द्वारा लिखी किताबें– मन, गुण, स्वभाव और अनुभव के मिश्रण से तैयार होती हैं। इन पुस्तकों को लेखक सोचता भी है और लिखता भी है।

कुछ पुस्तकें जो वेदव्यास जैसे किसी स्त्रोत से निकलती हैं, गणेश जी को बस उसे समझना और लिखना मात्र होता है।

***

गप्पें मारने, बातें करने का कारण विभिन्नता है। बात कोई भी हो, सबकी जड़ में यही विभिन्नता है। जब हम विभिन्नता में रस लेने लगते हैं तो गप्प में भी रुचि लेने लगते हैं। शांत वही रह सकता है, जो इस विभिन्नता के भ्रमजाल से बाहर आ जाए।

***

तप का उद्देश्य है, ऊर्जा मन की ओर जाने से रोकना।

***

कम खाने पर जीव व्यग्र हो उठता है। ज्यादा खाने पर शरीर व्यग्र हो उठता है।

***

शांति तभी मिलेगी, जब शक्ति सहस्त्रार पर पहुँचेगी। उससे पहले कहीं भी शांति नहीं है। उसके पहले बस उत्तेजना है।

***

शिव लिंग

आधार भाग	प्रकृति
लिंग	चेतना

जब चेतना प्रकृति रूपी शरीर से ऊपर उठती है, तभी वह शिव रूप में आती है।

***

जैसे रोता, बिलखता बच्चा, माँ के स्तन से मुँह लगाकर संतुष्ट और शांत हो जाता है। क्यूँकि उसे दो चीजें मिल जाती हैं, दूध और माँ अर्थात् आहार और शरण। वैसे ही, जैसे ही आप प्रकृति से दोबारा जुड़ेंगे, वैसे ही आपको प्रकृति रूपी माँ और शक्ति रूपी दूध मिल जाएगा। अब बच्चे को दुनियाँ में कोई दूसरी वस्तु नहीं चाहिए। माँ से अलग होने पर ही, कोई दूसरी वस्तु उसे आकर्षित कर सकती है। माँ के साथ रहते हुए, उसे कुछ और नहीं चाहिए। दूध शक्ति है और माँ सुरक्षा। अर्थात् एक ही क्षण में दो भय समाप्त, असुरक्षा की भावना और खालीपन। अब आप सम्पूर्ण और भय रहित हुए। अब कोई खोज नहीं बची। सारी खोजों का अन्त – एण्ड ऑफ सीकिंग।

***

भोजन ही अमृत है और भोजन ही विष भी। भोजन ही बासी होकर विष बन जाता है। भोजन और विष में मात्र समय का अंतर है। पैक करने के नए तरीकों से भोजन के विष बनने की प्रक्रिया को विलम्बित कर दिया जाता है। जो भोजन मनुष्य के लिये विष है, वही पशुओं के लिये भोजन है। जो भोजन पशुओं के लिये भी विष है, वो विष फंगस और बैक्टेरिया के लिये भोजन है। मनुष्य विष को पचा नहीं पाता। पशु उसे भी पचा लेते हैं। मनुष्य जिस विष को नहीं पचा पाता, शिव उसी विष को पचा लेते हैं। क्यूँकि शिव सहज और समर्पित है। इसी कारण मनुष्य की चेतना, शक्ति रूपी माँ की शरण में पहुँचकर, सभी प्रकार के भाव और असुरक्षा से मुक्त हो जाती है।

***

जागो ग्राहक जागो! जाग कर उपभोक्ता न रहकर, उत्पादक हो सकते हो।

***

विवाह से पहले अभिभावक इस तरह बात करते हैं कि आज से आपकी लड़की हमारी या आपका लड़का हमारा लेकिन विदाई के समय एकाएक लड़की के भाई साहब, पिताजी या माताजी प्रकट होती हैं और कहती हैं कि बेटा आज से ये आपकी जिम्मेदारी। और लड़की को उसके माता-पिता कहते हैं कि ध्यान देना, हम लोगों को कोई शिकायत नहीं मिलनी चाहिए। जैसे वो नौकरी करने जा रही हो और टारगेट पूरा करना जरूरी है। अब लड़का और लड़की दोनों सोच में पड़ जाते हैं। लड़का सोचता है कि पहले बताया होता कि लड़की नहीं उसकी जिम्मेदारी मिल रही है तो डिलीवरी लेने से पहले सोचते। और लड़की सोचती है कि डिलीवरी करने के लिये इतनी शर्तें लगा दी।

***

यदि तैयारी पूरी हो तो प्रतीक्षा, प्रतीक्षा न रह कर एक सामान्य घटना बन जाती है। यदि तैयारी अधूरी हो तो प्रतीक्षा, प्रतीक्षा न रहकर समस्या बन जाती है।

***

यदि मैं अपने साथ हूँ तो आपके साथ होने में मुझे अच्छा लगेगा और यदि मैं अपने साथ ही नहीं तो आपका साथ भी मुझे सुकून न दे सकेगा। दूसरे शब्दों में, प्रसन्नता भी तभी प्रभावशाली हो पाती है, जब व्यक्ति भीतर से सुखी हो।

***

बातें दो तरह की हैं–

(1) जिसको सुनकर जोश आ जाए।

(2) जिनको सुन कर होश आ जाए।

***

तप और संयम, चेतन मन को अचेतन मन में रुपांतरित करते हैं।

***

स्वर्ग के राजा इन्द्र हैं अर्थात् स्व पर इन्द्रियों का नियंत्रण है। इन्द्र एक पद है अर्थात् स्व पर कभी एक इन्द्रिय का नियंत्रण होता है तो कभी दूसरी इन्द्रिय का। कहा जाता है कि इन्द्र को कोढ़ है अर्थात् इन्द्रिय की कार्यक्षमता धीरे-धीरे कम हो जाती है।

इन्द्र असुरक्षा की भावना से पीड़ित हैं क्यूँकि उन्होंने दूसरे के राज्य पर कब्जा किया है।

इंद्र वर्षा के देवता हैं अर्थात् प्रसन्न होने पर इंद्री प्रदान करती है जैसे आँखों से आँसू, हाथों से पैसे या आशीर्वाद, मुख से तारीफ।

इंद्र के पास अप्सराएँ हैं। उर्वशी, मोहिनी और मेनका। उर्वशी हृदय पर कब्जा कर लेती हैं और भाव को समाप्त कर देती हैं। मोहिनी मोहित कर के बाँध लेती हैं। और मेनका अपने रूप पाश में बाँध अशक्त कर देने की क्षमता रखती हैं।

स्वर्ग में ऐशो आराम है, स्वादिष्ट भोजन है, मनोरंजन के साधन हैं लेकिन स्वर्ग बीमारी और दुखों से मुक्त नहीं है। स्वयं इंद्र को कोढ़ है और वे असुरक्षा से ग्रसित हैं। स्वर्ग में खुशियों का आयोजन होता है अर्थात् रोमांच है लेकिन स्वर्ग में सुकून और शांति नहीं है।

इंद्र को बाहरी आक्रमणों की चिन्ता भी रहती है कि कोई दूसरा असुर अर्थात् मन स्वर्ग पर कब्जा न कर ले। इसीलिये कभी कभी इंद्र को युद्ध भी करना पड़ता है।

***

लिखने-पढ़ने और सुनने, बोलने के हिसाब से देखा जाए तो दुनियाँ में दो तरह के लोग हैं। एक वो जो पढ़ते और सुनते हैं, दूसरे वो जो लिखते हैं और बोलते हैं।

***

बच्चे से बोलना कि अंकल को नमस्ते करो का तात्पर्य है कि व्यक्ति का सम्मान करो और अपनी विनम्रता और संस्कारों का परिचय दो। साथ ही नमस्ते में छिपा संदेश भी व्यक्ति तक पहुँच जाएगा।

***

दो जहाँ का तात्पर्य, एक वो जो आँखों के सामने है तथा दूसरा वो जहाँ जो हम स्वयं हैं।

***

भीतर जीत लिया तो बाहर प्रेम बहेगा। अगर मात्र बाहर जीता तो भीतर खलबली बनी रहेगी। तात्पर्य ये है कि सिकन्दर होने से काम न चलेगा, मस्त कलंदर होना होगा। भीतर जीता तो हुए मस्त कलंदर।

***

जब आप औरों से मिलते हैं तो किसी भूमिका में होते हैं। अकेलेपन में आप स्वयं को ही ढूँढते हैं।

***

जिस दिन शक्ति की पूर्णाहुति होती है, उसी दिन राम का जन्म है अर्थात् राम जन्म लेते हैं। हम कहते हैं कि हम भगवान के काम में पीछे नहीं रहते। वास्तविकता में वो भगवान का काम नहीं, भक्त का काम है। भगवान तो वैसे भी अपने कार्य में पीछे नहीं रहते। भक्त ही चूकता है।

***

इधर प्रयास है उधर प्रवाह है। प्रयास है, तो परिणाम है। परिणाम से बहुत सी भावनाएँ जुड़ी हैं। प्रयास आज है, तो परिणाम भविष्य है। प्रयास स्मृति उत्पन्न करता है, जो अतीत कहलाती है। प्रयास है तो इंद्रियों की आवश्यकता है। वहीं जहाँ प्रवाह ह, वहाँ न आज, न भविष्य और न अतीत। सिर्फ वर्तमान। इस कारण कोई भावनाओं का उतार-चढ़ाव नहीं। जहाँ प्रवाह है, वहाँ इंद्रियों पर निर्भरता नहीं और उनकी आवश्यकता नहीं। जहाँ प्रवाह है, वहाँ न आरंभ है और न अंत।

***

पति और पत्नी, एक दूसरे के लिये हीरा और उसको पॉलिश करने वाली मशीन की तरह हैं। जो एक दूसरे पर काम करते रहते हैं।

****

अध्यात्म जीवन की खोज, मन और शरीर के परे जाकर करता है तो दर्शन जीवन के विभिन्न पक्षों से संबंधित तथ्यों के स्पष्टीकरण से संबंधित है। निद्रा सिर्फ रात में ही हमें नहीं घेरती, बल्कि निद्रा का एक स्वरूप, दिन में भी हमें घेरे रहता है।

• • •

दर्शन, दिन की इस निद्रा से हमें झकझोर कर उठाने का प्रयास करता है। ताकि जीवन का अनुभव जागते हुए भी किया जा सके। अध्यात्म उस बीज की बात करता है, जो हर एक जीवित प्राणी के भीतर सक्रिय है। यह बीज ही व्यक्ति को जीवित स्वरूप प्रदान करता है। बीज की सूक्ष्मता में व्यक्ति की विशालता छुपी है।

• • •

अध्यात्म जीवन के अव्यक्त पक्ष और दर्शन जीवन के व्यक्त पक्ष से संबंधित है। व्यक्ति की खोज स्पष्टता से संबंधित है। आंतरिक जीवन में भी और दैनिक जीवन में भी। अध्यात्म आंतरिक जगत में मार्गदर्शन करता है तो दर्शन वाह्य जगत में।